वरकुटा

Varkuta.

लेखक :

जोसफ़ सकोलमर

Joseph Scholmar

सुनेजा बुक सैंटर

कनाट सर्कस, नई दिल्ली

Sunaga Book centre. New-Delh

प्रकाशक
एस० आर० सुनेजा,
सुनेजा बुक सैंटर,
नई दिल्ली।

Hindi Translation of

VORKUTA

by

Joseph Scholmar

Originally published in English by

Henry Holt & Co. Inc.

New York.

(Published with the permission of the Author and Publishers)

मुद्रक
अमरचन्द्र जैन
राजहंस प्रेस,
सदर बाजार, दिल्ली।

विषय-सूची

अध्याय १

बर्लिन में लुब्यांका

तीसरे पहर एक मोटा और नाटा-सा रूसी, जिसका चेहरा पीला और भारी था, एक महिला दुभाषिये के साथ बर्लिन के मध्य में अवस्थित मेरे मकान में आया।

"साहब कहते हैं कि क्या तुम उनके साथ चलोगे? वे तुमसे कुछ बातें करना चाहते हैं।"

"कहाँ?" मैंने पूछा।

"फौजी कमान के दफ्तर में।"

मैंने ओवरकोट पहना और खूंटी से हैट उतार लिया। सीढ़ियों से उतरकर हम नीचे गये। उसने मुझे अपने आगे-आगे चलने को कहा और तभी मुझे ख्याल आया कि जब मुझे गैस्टापो (हिटलर की खुफिया पुलिस) ने गिरफ्तार किया था तब भी मुझे आगे-आगे चलने को कहा गया था।

एक बड़ी काली मर्सीडीज़ कार दरवाज़े पर खड़ी थी। "कृपया पीछे की सीट पर बैठ जाइये।"

भारी चेहरे वाला आदमी मेरे दाईं ओर और चेचक के दागों से भरे चेहरेवाला एक और आदमी मेरे बाईं ओर बैठा। मोटर उस इमारत के पास से, जिसमें एस० ई० डी० और जर्मन सोशलिस्ट युनिटी पार्टी का केन्द्रीय सचिवालय है, गुज़री और प्रेंत्ज़लावर आले में प्रेंत्ज़लावर वर्ग के फौजी कमान के दफ्तर के आगे रुक गई। चेचक के दागों वाला आदमी उतरा और उसने पास दिखाया। तुरन्त लकड़ी का बाड़ा हटा दिया गया और दरवाज़ा खुल गया। कार एक बड़े खुले

आँगन में पहुँची और हम उतरकर एक बड़ी पीली ईंटों की इमारत में गये। दूसरी मंज़िल पर एक गलियारे में हमने कुछ देर तक प्रतीक्षा की।

चेचक के दागों वाला आदमी एक कमरे के भीतर गया। थोड़ी ही देर में लौटकर उसने मुझे एक दूसरे कमरे में चले जाने को कहा।

"मुझे तुम्हें यह सूचना देने के लिए कहा गया है कि फिलहाल तुम्हें हिरासत में रखा जायगा।"

"क्यों?"

"हमें तुमसे कुछ सवाल पूछने हैं।"

"क्या ये प्रश्न मुझे हिरासत में रखे बिना नहीं पूछे जा सकते?"

"सिर्फ दो-तीन दिन की ही तो बात है।"

"मैं जानता हूँ, तुम्हारे दो-तीन दिन कितने होते हैं।"

दुभाषिया औरत कमरे से उठकर चली गई।

"कपड़े उतारो।"

मेरे कपड़ों की भली भाँति तलाशी ली गई और उसके बाद मुझे फिर कपड़े पहनने की इजाज़त दे दी गई। मेरा थैला, परिचय-पत्र, तसवीरें और चिट्ठियाँ मुझसे ले ली गईं। उसके बाद हम सीढ़ियों से उतरकर नीचे तहखाने में गये। लोहे के एक भारी भरकम दरवाज़े के सामने जाकर हम रुके। चेचक के दागों वाले आदमी ने घंटी बजाई और दरवाज़ा खुल गया। हरी टोपी पहने एक सन्तरी मुझे गुसलखाने में ले गया।

"तुम्हारा नाम क्या है?"

मैंने नाम बता दिया। चेचक के दागों वाले आदमी ने एक मुहर और हस्ताक्षरयुक्त दस्तावेज़ निकाला और एक मोटी किताब में मेरा नाम दर्ज कर लिया। इसके बाद सन्तरी मुझे नीचे एक कमरे में ले गया और दरवाज़ा बाहर से बन्द कर दिया गया। कमरे में मैं अकेला था। इसकी लम्बाई और चौड़ाई दोनों पन्द्रह-पन्द्रह फुट थीं। इसमें लकड़ी के एक तख्तपोश के सिवाय और कुछ नहीं था। बाहर सड़क की ओर एक

रोशनदान था जिस पर हिफाजत के लिए लोहे की दो छड़ें लगी थीं। दरवाज़े के ऊपर बिजली की एक बत्ती तेज़ रोशनी से जल रही थी।

यह एक छोटा-सा शान्त बन्दीगृह था। एक संकरे गलियारे के दोनों ओर लगभग चालीस कमरे थे जिनमें से शायद बीस में कैदी थे। रात-दिन निःस्तब्धता रहती थी। सिर्फ रोशनदान में से छनकर आती हुई प्रेन्त्ज़लावर आले की सवारियों की घड़-घड़ की क्षीण आवाज उसे भंग करती रहती थी।

पहली मई का दिन भी और दिनों की भाँति शुरु हुआ। कमरे का दरवाज़ा खोल दिया गया। मैंने टीन की बाल्टी, जो अब मेरी संडास थी, उठाई और जल्दी से गुसलखाने में जाकर उसे खाली और साफ किया। इसके बाद मैंने मुंह-हाथ धोया।

"जल्दी करो, जल्दी!"

इसके बाद नाश्ता आया, जिसमें गोभी का शोरबा और छः छटांक रोटी थी। मैंने रोटी के दो बराबर-बराबर टुकड़े कर लिये और उनमें से एक शाम के लिए रख लिया। नाश्ता खत्म करने के बाद मैंने पिस्सुओं का शिकार शुरु कर दिया। उस वक्त ये पिस्सू ही मुझे जीवन में सबसे बुरे नज़र आ रहे थे।

जब मैं अपने जांघिये में उनकी तलाश कर रहा था। तभी बर्लिन में मई दिवस के प्रदर्शनों में सैनिकबाजे बजने की ध्वनि उसी रोशनदान में से छनकर मेरे कानों में आई और निरन्तर तेज़ होती गई। मुझसे सिर्फ पच्चीस गज़ दूर प्रेन्त्ज़लावर आले में मज़दूरों के 'अन्तर्राष्ट्रीय गीत' की धुन बज रही थी।

मई दिवस के समारोह में मैंने पहले-पहल कोलोन में साम्यवादी विद्यार्थियों के साथ सन् १९३२ में भाग लिया था। मार्क्स, एन्जेल्स और लेनिन से मैं प्रभावित हो चुका था और मैंने दुनिया को सामाजिक अन्याय से मुक्ति दिलाने का संकल्प कर लिया था। १ मई, १९३३ को मैंने मई दिवस के समारोह में कोई भाग नहीं लिया, क्योंकि मुझे डर

था कि एस० ए० सहायक पुलिस मुझे साम्यवादी युवक आन्दोलन का सदस्य होने के नाते गिरफ्तार कर लेगी। सन् १९३४ में मई दिवस पर मैंने ब्रासेल में अच्छे कपड़े पहने मजदूरों का एक प्रदर्शन देखा, जो आज मुझे, उसकी याद करने पर, पूंजीवाद के पक्ष में किया गया प्रदर्शन प्रतीत होता है।

तब से सन् १९४५ तक के मई दिवस मेरे लिए बहुत दुःख के दिन थे। अधिकतर साथी या तो गिरफ्तार कर लिये गये थे या जर्मनी से चले गये थे।

सन् १९४६ में मैंने बर्लिन लुस्टगार्टन के एक विशाल प्रदर्शन में भाग लिया। उस समय मैं केन्द्रीय स्वास्थ्य विभाग के कार्यालय में काम करता था और मेरे पास बड़े आदमियों की सीट पर बैठने का टिकट था। किन्तु बड़ा आदमी बनना मेरे लिए इतना असह्य था कि मैंने एक सामान्य व्यक्ति के समान सड़कों पर प्रदर्शन में भाग लेना अच्छा समझा। तब से १ मई, १९४७ तक अनेक दुःखद बातें हुईं। एक बरस तक रूसी लगभग पांच लाख तपेदिक से पीड़ित व्यक्तियों को अतिरिक्त राशन देने से इनकार करते रहे। पूर्वी क्षेत्र में जो कारखाने बच्चों के लिए खाद्य पदार्थ तैयार करते थे, उन्हें रूसियों ने उखाड़ डाला। परिणाम यह हुआ कि हजारों बच्चे अच्छा पोषण न मिलने के कारण मर गये। साथ ही क्वेकर संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास और स्वीडिश रेडक्रास ने हजारों टन खाद्य पदार्थ देने का जो प्रस्ताव रखा उसे भी स्वीकार करने से हमें मना कर दिया गया।

इसीलिए १९४७ के मई दिवस समारोहों में मैंने कोई भाग नहीं लिया और सन् १९४८ तक तो यह हालत हो गई कि एक तरह से मैंने उस दल का परित्याग ही कर दिया जिसके लिए मैंने पन्द्रह वर्ष तक संघर्ष किया था।

मेरे जो मित्र अभी तक दल की नीति के प्रति वफादार थे, उन्होंने अब मुझे अपने पदों से धकेलना शुरु कर दिया। यद्यपि वे मेरे काम में

कोई कमी नहीं दिखा सके, तथापि उन्होंने मुझ पर जासूसी का शक करना शुरु कर दिया, अर्थात् यह संदेह प्रकट किया कि मैं परिचय में किन्हीं व्यक्तियों और सैनिक संगठनों से सम्पर्क रखता हूँ। उन्होंने मुझ पर नज़र रखनी शुरु कर दी। इसी बीच एक सुराग पाकर मैंने स्वास्थ्य विभाग के एक भूतपूर्व सदस्य के पास, जो अब पश्चिमी बर्लिन में डाक्टर का काम करता था, सूचना भिजवाई कि उसका अपहरण किया जाने वाला है। सम्भवतः मेरी इस बात पर ही उन लोगों ने यह निर्णय कर लिया कि अब मेरी गिरफ्तारी का वक्त आ गया है।

और इसीलिए आज मैं सन् १९४९ का मई दिवस पिस्सुओं के साथ मना रहा हूँ।

एक सन्तरी ने कोठरी का दरवाज़ा खोला।

"तुम्हारा नाम?"

मैंने अपना नाम बता दिया।

"मेरे साथ आओ!"

सन्तरी मुझे तीसरी मंज़िल पर एक बड़े कमरे में ले गया। दाईं ओर के कोने में दो बड़ी-बड़ी डैस्कें एक दूसरे के साथ सटाकर रखी थीं। बीच में एक ऊँचे खम्भे पर बिजली की एक तेज़ बत्ती जल रही थी, जिसने मुझे बुरी तरह चौंधिया दिया। यह सारा दृश्य किसी भी व्यक्ति को भयभीत करने के लिए काफी था।

जिरह करने वाले दो अधिकारी कुछ अँधेरे-से स्थान में बैठे थे। एक ने मुझे सिगरेट पेश की।

"धन्यवाद, मैं सिगरेट नहीं पीता।"

उसने स्वयं एक सिगरेट सुलगाई और धीरे-से कहा, "तुम गेस्टापो तथा अमरीकी और ब्रिटिश खुफिया विभागों के एजेंट रहे हो।"

मुझे एकदम धक्का-सा लगा और उसके बाद फिर होश सम्भालने पर मैंने कहा, "मैं कभी भी गैस्टापो अथवा अमरीकी या ब्रिटिश खुफिया विभागों का एजेंट नहीं रहा।"

उसने कहा, "हमारे पास इस आशय की विश्वसनीय जानकारी है कि तुम पश्चिमी राष्ट्रों के खुफिया विभागों के जासूस के रूप में काम करते रहे हो।"

उसने लाल चमड़े के एक थैले पर, जिसमें कागजात रखे थे, हाथ रखा और कहा—

"ये रहे प्रमाण।"

"इस बात का कोई प्रमाण हो ही नहीं सकता कि मैं जासूस हूँ।"

"तुम जासूस होने से इन्कार करते हो?"

अफसर की त्यौरी चढ़ गई। "क्यों, नाहक अपने और हमारे लिए मुसीबत पैदा करते हो? हम खूब जानते हैं कि तुम हमारे खिलाफ काम करते रहे हो। अपराध स्वीकार करके क्यों नहीं अपनी स्थिति आसान बना लेते?"

"मैं फिर यही कहता हूँ कि मैं निर्दोष हूँ।"

"तुम्हें और कुछ नहीं कहना है?"

"नहीं।"

"हम तुम्हें एक बार फिर सोचने का मौका देते हैं।"

अधिकारी उठ खड़े हुए। मुझे फिर अपनी कोठरी में ले जाया गया और एक बार फिर मैंने अपने आपको असंख्य पिस्सुओं के बीच पाया।

अगली जिरह एक सप्ताह बाद हुई। करीब तीस वर्ष की उम्र का एक जवान मेरी इन्तज़ार कर रहा था।

"क्या तुमने सब कुछ सोच लिया है?"

"मैं निर्दोष हूँ। मेरे लिए सोचने को कुछ है ही नहीं।"

"तो तुमने पूर्णतः अपना अपराध स्वीकार करने का अभी फैसला नहीं किया है?"

"जो काम मैंने किया ही नहीं, उसे मैं कबूल नहीं कर सकता।"

"लेकिन हम सिर्फ यही चाहते हैं कि जो कुछ तुमने किया है उसे तुम कबूल कर लो।"

"मैं निर्दोष हूँ।"

"जानते हो तुम किसके पंजे में हो? यह एन० के० वी० डी० (रूस का खुफिया विभाग) है।"

"मुझे विश्वास है कि एन० के० वी० डी० न्यायपूर्ण जांच पड़ताल करना अपना प्रथम कर्त्तव्य समझता है।"

"हमारे पास यह सिद्ध करने के लिए काफी सामग्री है कि तुम पश्चिमी राष्ट्रों की ओर से जासूसी करते रहे हो।"

"तो सामने रखिये न। जब मैं गैस्टापो का कैदी था तो उन्होंने मुझे कम से कम प्रमाण तो दिखाये थे।"

वह युवक तुरन्त अपना सब संयम खो बैठा और एकदम उछल पड़ा।

"हमारा मुकाबला गैस्टापो के साथ करने की हिम्मत! गैस्टापो एक मुजरिम गिरोह था। इस गुस्ताखी के लिए तुम्हें काल-कोठरी में बन्द कर दिया जायगा, जहाँ तुम पड़े सड़ते रहोगे।"

"गैस्टापो के लोग भी बहुत कुछ इसी तरह की बातें किया करते थे।"

उसने टैलीफोन उठाया और कोई आदेश दिया। सन्तरी मुझे वहाँ से ले गये। मुझे अपने उन अपराधों पर जो मैंने किये ही नहीं थे, विचार करने के लिए एक सप्ताह का समय और दिया गया।

तीसरी जिरह में मैंने देखा कि एक गैरफौजी कर्मचारी, जो पहली जिरह के समय भी विद्यमान था, एक लिखित वक्तव्य तैयार कर रहा है।

प्रश्न—रूस के खिलाफ जासूसी करने के लिए अमरीका के खुफिया विभाग ने तुम्हें कब भरती किया था ?

उत्तर—मुझे अमरीकी खुफिया विभाग ने रूस के खिलाफ जासूसी करने के लिए कभी भरती नहीं किया।

प्रश्न—रूस के खिलाफ जासूसी करने के लिए ब्रिटिश खुफिया विभाग ने तुम्हें कब भरती किया?

उत्तर—ब्रिटिश खुफिया विभाग ने रूस के खिलाफ जासूसी करने के लिए मुझे कभी भरती नहीं किया।

सारी शाम इन्हीं घिसे-पिटे प्रश्नोत्तरों में गुज़र गई। जब मैंने वक्तव्य पर हस्ताक्षर किये तो उस गैरफौजी कर्मचारी ने कहा, "बेहतर होगा कि तुम हमें सच-सच बात बता दो। हम तुम्हारे साथ अपना समय बर्बाद नहीं करना चाहते। कल शाम को हम फिर बात करेंगे।"

दो घंटे बाद एक सन्तरी आया और उसने दरवाजा खोला। "तुम्हारा नाम क्या है? मेरे साथ आओ।"

हरी टोपी पहने दो सैनिकों ने मुझे अपनी देख-रेख में ले लिया। बाहर आंगन में कैदियों की एक गाड़ी इन्तज़ार कर रही थी। उसके एक कक्ष में बन्द करके मुझे एक अज्ञात स्थान की ओर ले जाया गया।

नई जेल लाल ईंटों की एक बड़ी इमारत थी जो अनेक सर्चलाइटों की रोशनी से दिन के समान प्रकाशित थी। उसमें कंकरीट की दीवारें थीं, कवायद के लिए मैदान थे और सन्तरियों के खड़े होने के लिए ऊँची बुर्जियाँ बनी थीं। मुझे सन्तरियों के कमरे में ले जाया गया।

"तुम्हारा नाम क्या है?"

मेरा नाम एक किताब में दर्ज कर लिया गया।

"हमारे साथ आओ।"

मैं दो सन्तरियों के साथ नीचे तहखाने में गया। लोहे का एक भारी दरवाज़ा खुला। भीतर एक शून्य गलियारा चला गया था, जिसके दोनों ओर कोठरियाँ थीं। उनके दरवाज़े सलेटी रंग से पुते थे और उन पर नम्बर पड़े थे। इनमें से एक दरवाजा खोला गया। यह एक छोटा-सा कमरा था। ऊपर-नीचे दुहरी सीटोंवाले दो लकड़ी के तख्तपोश थे। इनमें से तीन पर कैदी लेटे थे और चौथी सीट खाली थी।

एक कैदी उठ खड़ा हुआ। हमने एक-दूसरे का परिचय प्राप्त किया। उसका नाम त्विर्दी था।

"यह कौन-सी जगह है?" मैंने उससे पूछा।

"होहेन्शोन हाउज़न में एन० के० वी० डी० की मुख्य जेल ।"

"कैसी है यह?"

"मास्को की लुब्यांका जेल के समान ।"

"यहाँ कितने ग्रादमी हैं?"

"करीब चार सौ ।"

"क्या तुम यहाँ बहुत समय से हो?"

"चौदह महीने से ।"

मैंने बड़ा ग्राश्चर्य प्रकट किया ।

"यह तो कुछ भी नहीं है। कुछ लोग यहाँ तीन वर्ष से हैं ।'

ग्रचानक किसी ने ज़ोर से द्वार थपथपाथा ।

"हमें रात को बातें करने की इजाज़त नहीं है ।" त्विर्दी ने कहा, "मेरे साथ की सीट पर लेट जाग्रो ग्रौर ज़रा सोने की कोशिश करो। सुबह बातें होंगी ।"

मैं तख्तपोश पर लेट गया। ग्रगले दिन सुबह मुझे त्विर्दी ने दिनचर्या बताई। छः बजे उठना ग्रौर स्नान। गुसलखाने की कमी से स्नान बहुत जल्दी करना पड़ता है। सुबह-शाम खाने को गोभी का शोरवा मिलता है। रोटी का दैनिक राशन १२ ग्रौंस है। दस बजे सुबह की जिरह ग्रारम्भ होती है, जो तीसरे पहर तक चलती है। रात को ग्राठ बजे फिर जिरह ग्रारम्भ होती है जो सुबह दो, तीन या चार बजे तक ग्रौर कभी-कभी उससे भी देर तक जारी रहती है। दिन में सोने बिल्कुल नहीं दिया जाता ।

दोपहर ढलने पर हमारी कोठरी का दरवाज़ा फिर खुला ।

"तुम्हारा क्या नाम है?" मैंने ग्रपना नाम बता दिया। "चलो, मेरे साथ चलो ।"

दरवाज़े पर मेरे हाथ पीठ पीछे बांध दिये गये। सन्तरी ने एक संकेत सूचक बटन दबाया। गलियारे में हरी बत्तियाँ जल उठीं। यह इस बात का संकेत था कि किसी बन्द को उसकी कोठरी से ले जाया

जाता या जब उसे वहाँ से वापस लाया जाता तब किसी अन्य बन्दी को उसे देखने नहीं दिया जाता था ।

लोहे का एक जंगला खुला । सन्तरी मुझे कुछ सीढ़ी ऊपर ले गया, जहाँ उसने एक भारी दरवाज़े में चाबी घुमाई । वह खुल गया और सामने से बासी सिगरेट के धुएँ, सस्ते इत्र और ठण्डे भोजन की एक तेज़ दम घोटनेवाली गन्ध आई । मुझे गलीचा बिछे गलियारे में से नीचे एक कमरे में ले जाया गया । सन्तरी दरवाज़ा खटखटाकर भीतर गया और पूछा, "क्या वह अन्दर आ सकता है?"

"ले आओ ।"

जिस कमरे में मुझे ले जाया गया, वह काफी बड़ा था और उसमें एक बड़ा गलीचा बिछा हुआ था । खिड़की के सामने एक बड़ी डैस्क और एक कोने में तिजोरी रखी थी। एक सोफा और कुछ कुर्सियाँ भी थीं।

"बैठ जाओ", एक असैनिक व्यक्ति ने कहा । डैस्क के पीछे रूसी तोपखाने की पोशाक में एक लैफ्टीनेंट कर्नल बैठा हुआ था ।

मैं कमरे की पिछली तरफ दरवाज़े के निकट एक कुर्सी पर बैठ गया ।

लैफ्टिनेंट कर्नल ने कहा, "हम ठीक-ठीक जानते हैं, तुम कौन हो । तुम गेस्टापो तथा अमरीकी व ब्रिटिश ख़ुफिया विभाग के एजेंट रहे हो । किन्तु तुमने झूठ बोलने की हठ ठानी हुई है । अब तक हम तुम्हारे साथ नरमी से पेश आये हैं, किन्तु हमारी इस भद्रता का तुमने गलत अर्थ लगाया है । यहाँ तुम वह सब कुछ कबूल कर लोगे जो तुमने हमारे खिलाफ किया है । इसी कमरे में हम तुमसे सब सच-सच बात उगलवा लेंगे ।"

मैंने जवाब दिया, "सच्ची बात का पता लगाने में मेरी भी आपकी-सी ही दिलचस्पी है । मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप यथा संभव अधिक से अधिक पूर्णता के साथ जाँच-पड़ताल करें । मुझे विश्वास है, अन्त में आप इसी नतीजे पर पहुँचेंगे कि मैं न तो गैस्टापो

का एजेंट रहा हूँ और न ही ब्रिटिश या अमरीकी खुफिया विभाग का ।"

"यहां तुम्हें अपनी चालाकी से कोई लाभ नहीं होगा ।"

लैफ्टीनेंट कर्नल ने एक कागज़ निकालकर उस पर लिखा ।

प्रश्न—"क्या तुम अमरीकी खुफिया विभाग के एजेंट थे?"

मैंने उत्तर दिया, "मैं कभी भी अमरीकी खुफिया विभाग का एजेंट नहीं रहा ।"

चूंकि तुम वस्तुतः अमरीकी खुफिया विभाग के एजेंट रहे हो इसलिए मैं तुम्हारा यह उत्तर नहीं लिखूंगा ।"

उसने कलम रख दी और खड़ा हो गया ।

"क्या तुम स्वीकार करते हो कि तुम अमरीकी खुफिया विभाग के एजेंट रहे हो?"

"मुझे कुछ स्वीकार नहीं करना हैं ।"

ये दोनों वाक्य थोड़ी-थोड़ी देर बाद करीब ५० बार दोहराये गये उसके बाद सुबह की जिरह खत्म हो गई ।

दोपहर को मैंने त्विर्दी को बताया कि हमारी बातचीत किस तरह की रही ।

"यह तो बुरा हुआ", उसने कहा, "यदि जिरह करने वाला अधिकारी कोई लेफ्टीनेंन्ट कर्नल था तो समझना चाहिए कि वे तुम्हारे मामले को बहुत महत्व देते हैं । उनके हाथ कोई चीज लग गई होगी । तुम्हारे लेफ्टीनेन्ट कर्नल का नाम क्या है ?

"वह टेलीफोन पर जवाब में 'स्लुश्चेवस' कहता है ।"

त्विर्दी हंसा । "यह नाम थोड़े ही है । यह 'मैं सुन रहा हूँ' या 'हलो' के लिए रूसी शब्द है ।"

चूंकि हम लैफ्टीनेंन्ट कर्नल का असली नाम नहीं जानते थे इसलिए हमने उसे 'स्लुश्चेवस' ही कहने का निश्चय किया ।

शाम को मुझे फिर बुलाया गया और सुबह तक वही घिसे-पिटे वाक्य दुहराये जाते रहे ।

"कबूल कर लो ······ "

"मैं कबूल नहीं करता········"

छः बजे हमें जगाया गया। मैंने त्विर्दो से पूछा कि इन सबका परिणाम क्या होगा ?

"बड़ा सीधा-सा," उसने कहा। स्लुश्चेवस तुम्हें रात में दो-तीन घंटे से अधिक नहीं सोने देगा। यहां पूछताछ का यही रहस्य है। अधिक से अधिक एक पखवाड़े बाद तुम इतने शान्त और शिथिल हो जाओगे कि तुम्हें अपना नाम भी मुश्किल से याद रहेगा।

दूसरे दिन फिर ९ बजे से २ बजे तक और शाम को ५ बजें से सुबह ४ बजे तक पूछताछ जारी रही।

"स्वीकार कर लो कि तुम········स्वीकार कर लो कि तुम········ स्वीकार कर लो कि तुम········"

मैं बीमार पड़ गया। एक वर्ष तक गैस्टापो का बन्दी रहने और सन् १९४५ के बाद से वर्षों तक कड़ी मेहनत करते रहने के कारण मेरा स्वास्थ्य खराब हो गया था। चार दिन बाद ही मेरी सब शक्ति गायब हो गई। निद्रा का अभाव अब और नहीं सहा जाता था।

स्लुश्चेवस को उसी के दांव में हराने की कोशिश करना बेकार था। मैंने सोचा कि मुझे दूसरे तरीके अपनाने चाहिए।

अगले दिन मैंने सुबह कहा, "मैंने अनुभव कर लिया है कि मेरे झूठे वक्तव्य मुझे कहीं का नहीं छोड़ेंगे। इसलिए आज से मैं आपको सच बात बता रहा हूँ।"

स्लुश्चेवस बोला, "क्या तुम अमरीकी एजेंट थे ?"

"हाँ।"

"क्या तुम ब्रिटिश एजेंट थे ?"

"निःसन्देह।"

"क्या तुम गैस्टापो के एजेंट थे ?"

"हाँ।"

स्लुश्चेवस ने बड़ा सन्तोष अनुभव किया।" क्या तुम कुछ खाना चाहते हो ?"

"क्यों ?"

"तुम्हें भूख लगी है ?"

"अवश्य।"

"तो तुम यहीं कुछ खा-पी सकते हो।"

उसने टैलीफोन उठाया। कुछ ही मिनटों में एक सन्तरी एक बड़ी ट्रे लेकर आया जिसमें मांस के साथ मिलाकर बनाई गई सब्जी, दलिया, रोटी, मक्खन, चटनी और चाय थी। छः सप्ताह में मुझे पहली बार अच्छा खाना मिला।

भोजन समाप्त होने पर पूछताछ जारी रही। उन दोनों ने प्रसन्नता और मैत्री का रुख अख्तियार कर लिया था।

"तुम गैस्टापो के एजेंट कब बने ?"

"सन् १९४२ में।"

"नहीं इससे पहले।"

हम सन् १९३८ पर राजी हो गये।

"तुम गैस्टापो के एजेंट कब बने ?"

"१९४७ में।"

"नहीं पहले, और पहले।"

"अच्छा १९४५ में।"

मैंने यह भी बयान दिया कि मैं सन् १९४७ में ब्रिटिश एजेंट बना।

"तुमने दो खुफिया विभागों के लिए क्यों काम किया ?"

"क्यों कि एक से काफी पैसा नहीं मिलता था।"

यह कारण उसे युक्तियुक्त प्रतीत हुआ।

"अमरीकी तुम्हें कितना देते थे ?"

मुझे क्या मालूम था कि एक एजेंट को क्या दिया जाता है। मैंने अंधेरे में तीर मारकर कहा, "दो हजार मार्क।"

"नहीं, ज्यादा", स्लुश्चेवस ने कहा ।

"तीन हजार·······चार हजार·······पांच हजार·······मार्क ।"

"और तुम्हें खाद्य पदार्थों के पार्सल भी मिलते थे ?"

"निःसन्देह ।"

"और सिगरेट ?"

"वह भी ।"

"पैसे का तुम क्या करते थे ?"

"खूब मौज करते थे ! औरतें, शराब, मोटर कारें ······आप जानते ही हैं ।"

स्लुश्चेवस ने जानकार की भाँति सिर हिलाया । वह जानता था कि एजेंट अपने पैसे का क्या करते हैं ।

यह आवश्यक था कि जब मैं एक ही घटना का एक से अधिक वार उल्लख करूँ तो उसमें नामों की गड़बड़ न हो, इसलिए मैंने उससे कहा, "सोवियत यूनियन के प्रति मेरे अपराधों की संख्या इतनी अधिक है कि मैं शायद उन सबको स्मरण न रख सकूँ । इसलिए मेहरबानी कर मुझे कुछ नोट ले लेने दीजिए । अन्यथा जैसे-जैसे मुझे बातें याद आयेंगी, वैसे ही वैसे मैं उन्हें भूलता भी जाऊँगा । मैं नहीं चाहता कि मेरा बयान अधूरा रहे, क्योंकि मैंने जो कुछ किया है उन सबको मैं पूर्णतः स्वीकार कर लेना चाहता हूँ ।"

स्लुश्चेवस ने उसी समय एक मेज मंगवा दी । कागजों का एक ढेर मेरे सामने रख दिया गया और दुभाषिये ने मेरे लिए एक बिल्कुल नई पैंसिल बना दी । मैंने अपनी कहानी के पात्रो के नाम लिखने शुरू किये ।

मैकऐलिस्टर, स्पैनलो, वैन्स्ले और हैक्टर (अमरीकी खुफिया विभाग के अधिकारी) ।

मिस कैवेनाग, मिस ऐस्थर डैविस और मिस स्पौटिस्वुड (अमरीकी खुफिया विभाग के एजेंट) ।

ये सब नाम मैंने दस वर्ष पूर्व पढ़े विलियम मैकफी के "दि वीच-

कौम्बर" नामक एक उपन्यास से लिये थे। लेखक ने इन पात्रों का जो हुलिया चित्रित किया था मैंने उसे याद करने का प्रयत्न किया।

स्लुश्चेवस जानना चाहता था कि मैं इन लोगों से कब और कहाँ मिला करता था।

मैंने काफी घरों, शराबखानों और विश्रान्ति गृहों की एक सूचि तैयार की और उदारता से उनके साथ मुलाकातों और भेंटों का एक सिलसिला जोड़ दिया। उन स्थानों पर मैंने लिखा "यहाँ मुझे हिदायतें दी गईं" या "यहाँ मुझे मेरे काम की सामग्री दी गई" या "यहाँ मुझे अपने काम के बदले में पैसा दिया गया।"

मैकऐलिस्टर मेरे इस प्रहसन का चरित्र नायक था। पन्द्रह-बीस दिनों में यह हालत हो गई कि स्वयं मेरे लिए यह विश्वास करना कठिन हो गया कि वह काल्पनिक है।

और स्लुश्चेवस ने भी मैकऐलिस्टर की शिनाख्त करने के लिए काफी कोशिश की। एक रात उसने ऐसे लोगों के सौ से अधिक फोटो मेरे सामने रखे जो अमरीकी खुफिया विभाग के सदस्य कहे जाते थे। मैं दिखावे के लिए दो घंटे तक उनमें उसकी खोज करता रहा, किन्तु वह व्यर्थ रही। स्लुश्चेवस बहुत निराश हुआ। वह बोला, यह मैकऐलिस्टर भी जरूर बड़ा चालाक होगा।

एक रात स्लुश्चेवस का अफसर दानिलोव भी आया। उसने मुझे अपनी थकी भूरी आँखों से सिर से पाँव तक देखा और मेरे सामने एक कुर्सी पर बैठ गया।

उसका आना हमेशा इस बात का संकेत होता था कि कुछ खास सवाल पूछे जाने हैं।

"अपने एजेंटों के नाम मुझे बताओ।"

मैंने थकान का बहाना कर किसी तरह जान बचाई।

"मेहरबानी करके अपने एजेंटों के नाम बताने के लिए मुझे कल तक का वक्त दीजिए। आज मैं बहुत थका हुआ हूँ। इसके अलावा, जेल में

रहते हुए मेरी याददाश्त भी बहुत कमजोर हो गई है। हो सकता है, मैं एकाध एजेंट का नाम भूल जाऊँ, तब आप बाद में मुझ पर नाराज होंगे। मैं उनके बारे में शान्ति से सोचने के लिए आज की रात चाहता हूँ।"

"तुम्हारे कितने एजेंट थे।"

"एकदम ठीक-ठीक कहना मुश्किल है, मुझे गिनना पड़ेगा।"

अन्त में मैंने उसे अगले दिन तक के लिए मना लिया।

सुबह मैंने त्विर्दी से जिक्र किया। वह बोला, "तुम्हारे जैसी हैसियत के जासूस के लिये कम से कम बीस एजेंट हाते हैं।"

मैंने सोचा कि अब मुझे क्या करना चाहिए। मैंने पहले दस एजेंटों के नाम देने का निश्चय किया। सोचा, शायद दानिलोव इससे सन्तुष्ट हो जाय।

दानिलोव अगली रात फिर आया। बोला, "अब कहो।"

मैंने उसे दस आदमियों के नाम दे दिये जो पूर्वी क्षेत्र से भाग गये थे और जिनके बारे म मैं जानता था कि वे अब कभी नहीं लौटेंगे।

"बस, क्या इतने ही हैं ?" दानिलोव ने पूछा।

"हाँ, इतने ही हैं।"

जान पड़ा, दानिलोव को तसल्ली हो गई है।

सब मिला कर मैंने वे सभी बातें स्वीकार कर लीं जो स्लुश्चेवस ने सुझाईं।

चार सप्ताह बीतने से पहले हम दोनों ने एक बढ़िया काल्पनिक बयान तैयार कर लिया। मैं एक अव्वल दर्जे का जासूस बन गया।

जल्दी ही एक नये जज के सामने मेरी पहली जिरह प्रारम्भ हो गई। वह पाचानोव नाम का एक बिल्कुल नौजवान सैकिंड लैफ्टीनेंन्ट था। उसने यह कहकर कि मैंने अब तक अपने सिर्फ दस फी सदी अपराध ही कबूल किये हैं, मुझे चक्कर में डाल दिया।

"अब तुम हमें अपने अवशिष्ट नब्बे फी सदी अपराध बताओ। यदि तुम नहीं बताओगे तो हमें तुमको मजबूर करना पड़ेगा।"

पाचानोव ने मेरी सारी कहानी शुरू से दोहरानी शुरू की। वह महत्वाकांक्षी था। यह स्पष्ट था कि मेरा मामला उसके सबसे पहले मामलों में से एक था। वह मुझे यह बता देने के लिए उत्सुक था कि वह अपना काम खूब अच्छी तरह जानता है। यह नया विभाग, जिसमे कितने ही लैफ्टीनेन्ट, कप्तान और मेजर थे, और जिसका प्रमुख जनरल चिजेंको था, स्वभावतः ही मुझसे दानिलोव के विभाग की अपेक्षा अधिक उगलवा लेना चाहता था ! किन्तु प्रारम्भ में क्योंकि मैं कुछ कहने को तैयार नहीं था, इसलिए पाचानोव ने खुद ही कहना शुरू किया।

"तुम्हारे गैस्टापो के साथ १९३८ से भी पहले से सम्बन्ध थे।"

सुबह की जिरह में मैंने हल्का-सा प्रतिरोध किया। मैंने इस बात से इन्कार किया कि मैंने १९३८ से पूर्व गेस्टापो के लिए काम किया। किन्तु पाचानोव को लगा, मानों मुझे अपने ही ऊपर भरोसा नहीं है। उसने सोचा जिस जासूस को बेनकाब कर दिया जाता है, उसकी अन्तरात्मा बड़ी बेचैन रहती है और वह उसे चैन नहीं लेने देती। धूर्त्त पाचानोव ने निःसन्देह भांप लिया कि इस १९३८ के मामले में कुछ गड़-बड़ है। उस दिन शाम को मैंने कबूल कर लिया कि मैं १९३४ से ही गेस्टापो के लिए काम कर रहा था।

पाचानोव बहुत खुश हुआ। हमने एक नया बयान लिखा जिसके शुरू में यह स्वीकार किया गया था कि मैंने अपने पहले बयान में गेस्टापो के साथ अपने सहयोग के बारे में सारी सच बात नहीं बताई थी, क्योंकि मैं "अपने सारे अपराध" स्वीकार करने से डरता था।

एक दिन स्वयं चिजेंको ने मुझे बुला भेजा। मैंने उस असली ईरानी कालीनों और बड़ी चमड़े से मढ़ी आराम कुर्सियों से सजे एक कमरे में बैठा पाया। चिजेंको भूरे बालोंवाला एक छोटा और छरहरा आदमी

था। वह खुशबू इस्तेमाल करता और उसका चेहरा मुलायम और दुवला था। यह विश्वास करना मुश्किल था कि वह जर्मनी में एन० के० वी० डी० का एक मुख्य कसाई था।

"हम तुम्हारा मामला निबटा देना और यथा शीघ्र तुम्हें मुकदमे के लिए पेश करना चाहते हैं। क्या कोई ऐसी बात रह गई है जो तुमने अभी तक हमें नहीं बताई ? क्या तुम्हें अपने बयानों में कुछ और जोड़ना है ?

"हाँ, जनरल, मुझे एक बात आपसे कहनी है।"

"क्या ?"

"मैं अधिकृत रूप से और बाजाब्ता तौर पर कहता हूँ कि मेरा हरेक बयान झूठा है। इन बयानों में कोई सचाई नहीं है। वे सिर्फ आपके सहकर्मियों की विकृत कल्पना की उपज हैं। मैंने न कभी गेस्टापो के लिए और न ब्रिटिश या अमरीकी खुफिया विभाग के लिए काम किया है। आपके आदमियों ने ही मुझे जासूस बना डाला है।"

वह उछल पड़ा। "सूअर कहीं के !"

उसने गालियों की बौछाड़ शुरू कर दी, जिसका एक भी शब्द में नहीं समझ सका।

दुभाषिये ने मुझे समझाना जारी रखते हुए कहा, "जनरल कहते हैं कि तुम्हें पीटा जाना चाहिए।" इसके बाद वह चुप हो गई।

"फर्ज करो, मैं तुम्हारे सामने तुम्हारे एजेंटों के वे बयान रखूँ, जिनमें उन्होंने यह कबूल किया है कि उन्होंने तुम्हारे लिए काम किया है ?"

"उससे सिर्फ यही साबित होगा कि आप लोगों ने उन्हें भी वही धमकियाँ दी हैं, जो मुझे दी हैं।"

"तुम्हें क्या धमकियाँ दी गई थीं ?"

"आप जरूर ही मुझसे अधिक अच्छी तरह जानते होंगे कि आप क्या धमकियाँ दे सकते हैं।"

उसने हत्था घुमाकर दरवाजा खोल दिया। दुभाषिया स्त्री मुझे वापस पाचानोव के पास ले गई और स्वयं पाचानोव को चिर्जेको ने अपने पास बुला लिया। पाँच मिनट में जब वह फिर लौटा तो बिल्कुल पीला दीख पड़ता था।

मुझे पाचानोव के लिए बड़ा दुःख हुआ। उसे ये बयान संगृहीत करते हुए अब चार सप्ताह हो गये थे। इस तरह का मामला आ पड़ने पर क्या किया जाय, इसकी उस समय तक कोई व्यवस्था नहीं थी। अब वह क्या करे ? उसने नीचे जेलखाने में टैलीफोन किया। तीन मिनट बाद मैंने फिर अपने आपको अपनी कोठरी में पाया। मैं हैरान था कि उसके बाद अब क्या होगा।

अगले पन्द्रह दिन तक मुझसे जिरह करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। मुझे बराबर दुगुना राशन मिलता रहा। पन्द्रह दिन बाद मुझे फिर बुलाया गया। पाचानोव अपनी डैस्क के पीछे बैठा था। उसके चेहरे पर कठोर निश्चय का भाव था। उसने मुझसे कहा, "हम यह तथ्य तसलीम करते हैं कि तुमने अपना बयान वापस ले लिया है, किन्तु हम उसमें एक भी शब्द नहीं बदल रहे, क्योंकि उसका प्रत्येक शब्द सही है।"

उसने टैलीफोन उठाया और जेल के मुखिया से बातें करने लगा। मैंने "कालकोठरी" शब्द समझ लिया।

मैं कपड़े उतारने के लिए गुसलखाने में ले जाया गया। पहरेदार ने मेरे जूते और मोजे, सूट और मेरी वास्कट ले ली। मुझे जांघिये के सिवाय और कुछ भी पहनने की इजाजत नहीं दी गई।

"मेरे साथ आओ!"

कालकोठरी करीब तीन फुट चौड़ी, नौ फुट लम्बी और छः फुट ऊँची थी। वह एक ताबूत जैसी थी, जिसके ऊपर कई सौ वाट की ताकत के बिजली के लट्टू की तेज रोशनी हो रही थी। छत में तारों की जाली से ढका एक झरोखा था जिसमें से पंखे की तेज आवाज आ

रही थी, जो कोठरी की सर्द हवा को एक निरन्तर धारा के रूप में ऊपर खींच रहा था। सीमेंट के इस रेफ्रिजरेटर की दीवारें झरीटों से भरी हुई थीं। हरेक राष्ट्र के कैदियों ने उन पर अपने नाम खोदे हुए थे। पीठ पीछे की दीवार पर एक तख्ता लगा था। वह इतना कम चौड़ा था कि उप पर अच्छी तरह बैठा भी नहीं जा सकता था, सिर्फ उसके सिरे पर टिका भर जा सकता था। पंखा लगातार चल रहा था। मैं कांपने लगा और मैंने महसूस किया कि चलते रहना जरूरी है। मैं आगे-पीछे चलने लगा—तीन कदम आगे और तीन कदम पीछे—और अपने बदन को गर्म करने के लिए अपनी बाहें और छाती रगड़ने लगा। यह असम्भव था कि आदमी यहाँ बिना गर्म रह जाये। एक घंटे बाद मेरे पांवों के तलुवों में कोई चेतना नहीं रह गई।

त्विर्दी इस कालकोठरी में २८ दिन तक डटा रहा था। यह यहाँ का रिकार्ड था। जब वह यहाँ लाया गया था, उसका शरीर स्वस्थ था। किन्तु मैं था बीमार। मेरे कलेजे में दर्द था और निरन्तर तेज धड़कन रहती थी और मेरी टांगों पर फोड़े निकलने लगे थे।

"तुम्हारा नाम क्या है ?" "मेरे साथ आओ !"

मैंने कपड़े पहन लिये और हम ऊपर चले गये। पाचानोव का व्यवहार बड़ा मित्रतापूर्ण प्रतीत होता था।

"क्या तुम्हें हमको कोई नई बात बतानी है ?"

"नहीं।"

"तब हमारे और अधिक बातचीत करने का कोई फायदा नहीं।"

पहरेदार, जो दरवाजे के पास इन्तजार कर रहा था, मुझे फिर कालकोठरी में ले गया। ठीक इसी तरह की बातचीत लगातार नौ दिनों तक दोहराई जाती रही।

कालकोठरी में राशन साधारण राशन से कम था। सुबह-शाम पहरेदार पानी का एक मग भीतर खिसका जाता और हर दूसरे दिन मुझे नौ औंस रोटी मिलती। मैं जानता था कि अपेक्षाकृत यह हल्की

नजरबन्दी है। कभी-कभी कैदी इन कालकोठरियों में जंजीरों से बाँध दिये जाते हैं। किसी-किसी के हाथ आगे की ओर करके हथकड़ी में जकड़ दिये जाते हैं। पर यह सहन किया जा सकता है। परन्तु पीठ पीछे हाथ बाँध देना कहीं अधिक कष्टकर है। कभी-कभी कालकोठरी को एक छोटा-मोटा तालाब बना दिया जाता है। उसमें छः इंच गहरा पानी भर दिया जाता है। कभी-कभी पहरेदार हर थोड़ी-थोड़ी देर बाद कैदियों पर पानी उंडेल जाते हैं। मैं एक स्त्री के बारे में जानता हूँ। जिसे पीठ-पीछे हाथ बाँधकर तीन सप्ताह तक ऐसी कालकोठरी में रखा गया था, किन्तु फिर भी उसने एक भी ऐसा नाम नहीं बताया जिसे वे जानना चाहते थे।

किन्तु मेरी हालत दिन-दिन बदतर होती जा रही थी। मेरी टांगों में सूजन आ गई थी और बड़े-बड़े फोड़ों के कारण चमड़ी में खिंचाव पैदा हो गया था। कभी-कभी मैं बेहोश-सा होने लगता था। वक्त की जानकारी रखने के लिए मैं अपनी उंगलियों के नाखूनों से चूने की दीवारों पर निशान खोद देता था।

नवीं रात को मुझे कोठरी के बाहर कुछ आवाजें सुन पड़ीं। कुछ लोग मुझे फाँसी दिये जाने के बारे में बातें कर रहे थे। बातचीत रूसी और जर्मन भाषाओं में हो रही थी। उनकी बातों के जो शब्द मेरे कानों में पड़े उनसे मैं यह जान सका कि ये लोग मुझे फाँसी देने आये हैं।

इस सारे दृश्य का बड़ी खूबी से अभिनय किया गया और बाद में मुझे मालूम हुआ कि यह नाटक सिर्फ मुझे भयभीत करने के लिए ही रचा गया था। किन्तु उस समय नौ रातें बिना सोये कालकोठरी में बिताने और फेफड़ों की सूजन और तेज बुखार से पीड़ित होने के कारण मैं यह समझने की हालत में नहीं था कि ये बातें गम्भीरता से की जा रही हैं या नहीं।

मैंने पूरा संकल्प कर लिया था कि अब ज़िन्दा उनके हाथों में नहीं पड़ूंगा। बहुत-से कैदी इस तरह के मौकों के लिए पुराने ढंग के औज़ार अपने साथ छिपाकर ले जाते और उन्हें आज़माते हैं। मैंने भी अपने जांघिये में से वह कील निकाली जिसे मैंने ऐसे ही मौके के लिए तेज़ किया था और उससे अपनी बाईं कलाई की नस काटने लगा। इस तरह के औज़ार से यह काम आसान नहीं है। इसके अलावा जब-जब पहरेदार नज़दीक आता, मुझे अपनी यह चीरफाड़ बन्द कर देनी पड़ती।

ज्यों ही खून बहने लगा, मैंने समझ लिया कि मैं अब बेहोश होने वाला हूँ और मेरी मौत नज़दीक है। मुझे बेहद आराम महसूस हुआ और गहरे सन्तोष के साथ मैंने होश-हवास छोड़ दिये।

जब मुझे होश आया, मैंने अपने आपको कालकोठरी के बाहर फर्श पर रस्से से बंधा हुआ पाया। मेरी बाईं बांह पर एक रबड़ की पट्टी बंधी थी। मैं बिल्कुल अकेला था। रस्सा ढीला था और मैंने उसे खोल लिया। पहरेदार उस समय वहाँ नहीं थे; यह ज़ाहिर था कि वे जेल के अधिकारियों को सूचना देने गये हैं। दूर गलियारे में पांचों पहरेदारों में से आखिरी पहरेदार कोठरियों का निरीक्षण कर रहा था। वह आहिस्ता-आहिस्ता एक कोठरी से दूसरी कोठरी में जा रहा था और उसकी पीठ मेरी ओर थी। मेरे मन में एकाएक उसे मार डालने का विचार आया। वह मुझसे करीब १५ गज़ दूर था कि उसी समय मैं उस पर टूट पड़ा। अभी मैं उससे कुछ गज़ की दूरी पर ही था कि उसे मेरे पाँवों की हल्की आहट सुनाई पड़ी। वह घूम गया और उसने मुझे नंगे बदन और बढ़ी हुई दाढ़ी-मूँछों के साथ एवं खून से लथपथ देखा। वह इतना डर गया कि सिर्फ जानवर की भाँति ज़री-सी आवाज़ ही उसके मुँह से निकली। यह आवाज़ बछड़े की आवाज़ जैसी थी। मैंने उस पर प्रहार किया। दूसरे ही क्षण उसकी गर्दन मेरी मुट्ठियों में थी। मैंने उसे ज़मीन पर पटक दिया और उसका गला दबाने लगा। मुझ में उस वक्त ज़बर्दस्त ताकत आ गई थी। उसने जितना बन पड़ा, मेरा

मुकावला किया, परन्तु मैं उसके लिए वहुत भारी था। मैंने उसकी गर्दन अपने हाथों में खूब ज़ोर से दबाई, मैं चाहता था कि एक वारगी उसका दम निकाल दूं। उसका चेहरा नीला पड़ गया और आँखें वाहर निकल आईं। तभी मुझे लगा कि कोई मुझे पीछे से खींच रहा है। दूसरे पहरेदार वापस आ गये थे। मैं एकदम उन पर टूट पड़ा, हालांकि संख्या में वे मुझसे ज़्यादा थे। वे पीछे हट गये। उस समय उनके सफेद चेहरों के सिवाय और सब कुछ मेरी आँखों से ओझल हो गया था और मैं उन्हीं पर प्रहार कर रहा था। उन्हें मुझे पकड़ने की हिम्मत नहीं हुई। आहिस्ता-आहिस्ता उन्होंने मुझे धकेलकर एक कोने में कर दिया। एक पहरेदार खाना इधर-उधर ले जाने वाली रेहड़ी ले आया। उसे उन्होंने टैंक की तरह मेरे सामने कर दिया और इस प्रकार मुझे धर दबाया। एक वार फिर मेरी चेतना नष्ट हो गई।

जब फिर मुझे होश आया तो एक महिला डाक्टर मेरे ऊपर झुकी हुई थी।

"तुम ऐसा काम क्यों करते हो?" उसने मुझसे जर्मन भाषा में पूछा।

रसोइया मेरे लिए डबल रोटी के दो टुकड़े ले आया जिन पर खूब मक्खन लगा था।

"लो, खा लो।" स्त्री डाक्टर ने कहा। किन्तु मैंने देखा कि मुझमें खाने की ताकत नहीं है। उसने अलकोहल और ईथर मिलाकर एक खुराक तैयार की और मुझे पीने को दी। एकाएक उसे ख्याल आया कि मेरा जो खून निकल गया है, उसकी उसे पूर्त्ति करनी पड़ेगी। उसने ग्लुकोज़ की कुछ छोटी-छोटी शीशियां निकालीं और पानी में मिला दीं। मैं यह दवा पी गया।

मेरी पोशाक लाई गई और मुझे उसे पहनने की इजाज़त दे दी गई। मुझे एक खाली कोठरी में ले जाया गया, जहां मुझे ओढ़ने के लिए तीन कम्बल दिये गये।

"ज़रा सोने की कोशिश करो।" स्त्री डाक्टर ने कहा।

दूसरे दिन मुझे फिर चीर-फाड़ के कमरे में ले जाया गया और वहाँ मुझे वोडका (रूसी शराब) पानी में मिलाकर पीने को दी गई। मेरा पिछली रात का शिकार वहाँ खड़ा था। उसका बायां कान बहरा हो गया था। मेरे घूंसों ने उसके कान का पर्दा फाड़ दिया था। मुझे उस बेचारे के लिए बड़ा अफसोस हुआ। वह उन भले पहरेदारों में से था जिन्होंने हमें कभी नुकसान नहीं पहुँचाया था।

सुबह मुझे फिर सवाल-जवाब के लिए तलब किया गया। भीतर जाते ही पाचानोव ने सबसे पहला सवाल किया, "तुमने ऐसा क्यों किया?"

मैंने उत्तर दिया, "अगर तुम समझते हो कि तुम हमेशा मेरे साथ इसी तरह खिलवाड़ करते रह सकोगे, तो यह तुम्हारी गलती है। अगर तुमने फिर यही काम शुरु किया तो तुम्हारे सवाल-जवाब के लिए सिर्फ मेरी लाश ही रह जायगी।"

सुबह का वक्त काफी शान्ति से बीत गया। पाचानोव ने एक बयान लिखा जिसमें कुछ मामूली-से सवाल और उनके वैसे ही मामूली-से जवाब थे। सवाल-जवाब खत्म होने के बाद मुझे भेज दिया गया, किन्तु कालकोठरी में नहीं, मेरी पुरानी कोठरी में मेरे चारों साथियों को मुझे देखकर कुछ नहीं सूझा कि क्या कहें। जिस समय मैं वहाँ पहुँचा, मेरी सारी बाईं बाँह बंधी हुई थी और मेरे दूसरे हाथ में मक्खन लगा डबलरोटी का डेढ़ टुकड़ा था। यह अजीब-सा दृश्य था।

इसके बाद एक दिन बड़ा विस्फोट हो गया। पाचानोव को उसके पद से हटा दिया गया। उसका उत्तराधिकारी करीब चालीस वर्ष की उमर का एक समझदार आदमी था—सामान्य रूसियों से अधिक वाक्पटु और शिष्ट। हर शाम हम लोग एक-दूसरे से ऐसे मिलते मानो हम इकट्ठे भोजन करने वाले हों।

"ठीक बताओ, तुमने शुरु में हमारे सामने झूठे स्वीकारात्मक बयान

क्यों दिये थे?" उसने पूछा। "क्या तुम जांच करने वाले अफसर को जेल में डलवाना चाहते थे?"

मैंने माफी माँगते हुए कहा, "मैं नहीं जानता था कि आपके जांच करने वाले अधिकारियों को भी जेल में भेजना सम्भव है। यदि उसे मेरी वजह से मुसीबत उठानी पड़ी हो तो मुझे उसका बड़ा अफसोस है।"

"तब तुमने ऐसा क्यों किया?"

"मैं तो सिर्फ आपके जिरह के तराकों का शिकार हूँ। आप लोग मुझसे हफ्तों तक हर रात सवाल करते हैं। आप लोग मुझे धमकियाँ देते हैं और मैं जानता हूँ कि आप ये धमकियाँ पूरी भी करते हैं। मैं बीमार आदमी हूँ। ऐसी हालत में मेरे सामने चालाकी खेलने और आप लोगों को धोखा देने के सिवाय और उपाय ही क्या है।"

कुछ दिन बाद जब हम फिर अकेले में एक-दूसरे के सामने हुए तो उसने कहा, "मैं तुम्हें एक दोस्ताना सलाह देना चाहता हूँ। मैं तुम्हारा सारा मामला जानता हूँ। जो कुछ भी हो, तुम्हें पच्चीस साल की सजा होगी, यह बात तय है। अगर तुम सचमुच दृढ़ हो तो तुम अपने आपको जासूसी के अभियोग से बचा लोगे, किन्तु इसमें तुम्हें एक-दो वर्ष लग जायेंगे। तब वे तुम्हें किसी और मामले में लपेट लेंगे। इसलिए तुम महज कहने को ही यह स्वीकार कर लो कि तुमने थोड़ी-बहुत जासूसी की थी। इससे तुम्हारी पूछताछ और जिरह खत्म हो जायगी और तुम्हारा मामला खत्म कर दिया जायगा। तुम्हें किसी कैम्प में भेज दिया जायगा, जहाँ हालत यहाँ से कहीं बेहतर है। वहाँ तुम अपने साथियों से सहायता ले सकते हो, किन्तु यहाँ वे तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर सकते। सबसे जरूरी चीज है तुम्हारी सेहत। एक-दो साल जेल में और रहे कि तुम्हारी सेहत तबाह हो जायगी। तुम खुद यह जानते हो। और असल बात तो यह है कि जासूसी का अभियोग गलत सिद्ध करने का लाभ भी क्या है?"

मैंने उसकी सलाह पर अमल तो किया, किन्तु उस समय मुझे पूरा

भरोसा नहीं था कि यही सही रास्ता है। बाद में मैंने महसूस किया कि उसने ठीक ही कहा था। कैम्प में जाकर मैंने बहुत से कैदी देखे जिन्होंने अनेक वर्षों तक अपने आप को निर्दोष सिद्ध करने की चेष्टा की थी। अन्त में उन्हें मेरी ही भाँति सजा दी गई और इस चक्कर में उनकी सेहत बर्बाद हो गई।

दूसरे दिन मैंने समझौता करना स्वीकार कर लिया। एक बार फिर मेरा बयान लिखा गया। इस बार उसके शब्द इस प्रकार थे।

प्रश्न—क्या तुम्हारा किन्हीं ऐसे लोगों से सम्पर्क रहा है जो खुद पश्चिमी क्षेत्र की सैनिक सरकार के सम्पर्क में थे?

उत्तर—हाँ, रहा है।

"तब", मेरे प्रश्नकर्त्ता ने मुझे मित्रतापूर्वक समझाया, "सोवियत कानून के अनुसार तुम एक जासूस हो। अच्छा, नमस्ते।"

वह इतना समझदार था कि उसने मेरी जासूसी की तफसील में जाना नहीं चाहा। वह और मैं दोनों ही जानते थे कि वास्तव में कोई तफसील है ही नहीं।

दिसम्बर, १९४९ में मुझे होहेनशोनहाउजन से लिख्टनबर्ग की जेल में ले जाया गया। वहाँ बिना एक भी सवाल-जवाब के मेरे छः महीने कट गये। वहाँ नौ फुट लम्बी और नौ फुट चौड़ी कोठरियाँ थीं, जो शुरु में एक-एक आदमी के लिए बनाई गई थीं, किन्तु उस समय हम लोगों को एक-एक कोठरी में चार, पाँच या छः आदमियों के हिसाब से रखा जाता था।

मई के अन्त में मुझे अदालतवाली इमारत के एक कमरे में ले जाया गया। मेरा पुराना दोस्त पाचानोव और एक दुभाषिया मेरी इन्तजार कर रहे थे।

"मुझे तुम्हें यह सूचना देने का आदेश मिला है कि मास्को की सर्वोच्च अदालत ने तुम्हें जासूसी के अभियोग में किसी श्रम-कैम्प में पच्चीस साल तक मशक्कत करने की सजा दी है।"

उसने एक फार्म मेरी ओर बढ़ा दिया। मैंने उस पर हस्ताक्षर कर दिये।

मुझे अपनी कोठरी में वापस नहीं भेजा गया, बल्कि उन कैदियों की एक बैरक में ले जाया गया, जिन्हें सज़ाएँ दी जा चुकी थीं।

६ जून को सुबह ही सुबह दरवाज़ा खुला और पहरेदार ने कैदियों की एक फहरिस्त पढ़कर सुनाई जिसमें मेरा भी नाम था।

"अपना सामान लेकर बाहर आओ।"

इसका अर्थ था कि हम वहाँ से जा रहे हैं। मैंने अपने दोस्तों से हाथ मिलाया और अलविदा कहकर निकल पड़ा।

"जल्दी करो, जल्दी।"

हम तीस आदमी एक छोटी-सी कोठरी में ठूंस दिये गये। शाम को हम जेलखाने की एक गाड़ी में लादे गये। गाड़ी का दरवाज़ा जब फिर खुला तो हमने अपने आपको रेल के एक डिब्बे के सामने पाया जिसकी तमाम खिड़कियाँ अपारदर्शक काँच की बनी हुई थी। कुत्तों और टामी गनों से लैस पहरेदारों की दुहरी पंक्ति डिब्बे को चारों ओर से घेरे हुए थी। कुछ सौ गज की दूरी पर ऊँची पीली चिमनी दीख पड़ती थी जो बर्लिन के लुब्यांका का चिन्ह थी। अब हम समझ गये कि हम एक बार फिर होहेन्शोनहाउज़न में एम० के० बी० डी० के दफ्तर के इलाके में हैं। पहले यह कारखानों का इलाका था और इसका अपना रेलवे जंक्शन था, पर अब यहाँ से कैदी गाड़ियों में भरकर सोवियत रूस को चालान किये जाते थे। हमें एक-एक करके बुलाया गया और गाड़ी के एक आम कमरे में हमारी अच्छी तरह तलाशी ली गई और उसके बाद गलियारे के दोनों ओर बनी एक-एक आदमी की कोठरियों में हमें बन्द कर दिया गया। एक-एक वर्ग गज जगह में तीन-तीन आदमी रखे गये। हम सब कुल सौ आदमी थे।

उसी दिन तीसरे पहर काफी वक्त गये एक इंजन आया और हमारी गाड़ी खींचकर ले गया।

अध्याय २

पूर्व की ओर यात्रा

गाड़ी पोलैंड और रूस की सीमा पर रुकी। पोलैंड की सीमा-पुलिस के एक अफसर ने गाड़ी में कैदी गिने और उनका हमारे रूसी रक्षकों की सूचि से मिलान किया। वह उतर गया। गाड़ी फिर रवाना हो गई और वग नदी के पुल पर पहुँची। कुछ देर के लिए गाड़ी एक तटस्थ क्षेत्र में से गुजरी, जहाँ काँटेदार तारों के ढेर पड़े थे, खाइयाँ खुदी थीं और तोपों के लिए सीमेंट के चबूतरे बने थे। जगह-जगह जमीन साफ की हुई थी ताकि वहाँ से सीधी गोली चलाई जा सके। इसके बाद यूरोप की आम छोटी रेलवे लाइनों के साथ-साथ बड़ी लाइन भी दीख पड़ने लगी। हम एक विशाल स्टेशन पर रुके। रूसी भाषा में स्टेशन का नाम लिखा था ब्रेस्ट लिटोव्स्क।

उसी दिन शाम को हमें गाड़ी से उतारकर उसके नजदीक ही कतार में खड़ा कर दिया गया। हरी टोपियाँ लगाये और टामी गनें हाथ में लिये सिपाही हमारे चारों ओर तैयार खड़े थे। हमारे कागजात की जाँच हुई।

"आगे बढ़ो!"

कुछ सौ गज और आगे बढ़ने पर रूस की कैदी गाड़ी खड़ी थी जिसमें हमें आगे जाना था। किसी ने मुझे बताया कि जार के मन्त्री स्तोलिपिन के नाम पर, जिसने पचास वर्ष पूर्व इस गाड़ी का इस्तेमाल प्रारम्भ कराया था, इसका नाम स्तोलिपिन्स्की रखा गया है।

स्तोलिपिन्स्की की लम्बाई एक साधारण रेल के डिब्बे के बराबर ही होती है जिसमें छः खाते होते हैं। हरेक के आगे लोहे के भारी जंगले

का दरवाज़ा होता है जो डिब्बे के एक पार्श्व में बने गलियारे में खुलता है। हरेक खाने में तीन मंज़िलें होती हैं। सबसे नीचे की मंज़िल में दो बेंचें होती हैं जिन पर दस-दस कैदी बैठ सकते हैं। दूसरी मंज़िल पर, जिस पर चढ़ने के लिए एक तरफ पांव टिकाने का एक आला बना होता है, पाँच कैदी एक के-साथ-एक सो सकते हैं। सब से ऊपर की मंज़िल पर छत के दोनों ओर दो लकड़ी के तख्ते जड़े होते हैं जिन पर एक-एक कैदी और लेट सकता है। इस प्रकार कायदे के मुताबिक हरेक खाने म सत्रह कैदियों का स्थान होता है जिनमें से सिर्फ सात लेट, सो या आराम कर सकते हैं। विस्तीर्ण साइबेरिया और मध्य एशिया के रास्ते ध्रुव-सागरी हिम प्रदेश की ओर यात्रा करते समय, जबकि कैदी को लगातार सप्ताहों तक अपने डिब्बे से बाहर नहीं आने दिया जाता, इतनी जगह मिल जाना भी बहुत आरामदेह होता है।

रात को हमारी गाड़ी बारानोविशी, मिन्स्क और बोरिसोव से गुज़रती हुई ओर्शा पहुँची, जहाँ हम गाड़ी से उतरे।

ओर्शा की जेल बहुत विशाल थी। मध्य में एक बहुत बड़ी सीमेंट की इमारत थी, जिस पर खास पहरेदार तैनात थे। यह इमारत राजनीतिक बन्दियों के लिए थी और कई मंज़िल ऊंची थी। इसके चारों ओर ईंटों के मकान, लकड़ी की बनी बैरकें और अनेक खुले आंगन थे।

हमें नहाने की इजाज़त दी गई और हमारे कपड़ों पर कृमिनाशक दवाएँ छिड़की गईं। इसके बाद हमें सामूहिक बैरकों में ले जाया गया, जहाँ बर्लिन-लिख्टनबर्ग से रवाना होने के बाद हमें पहली बार गर्म भोजन मिला, जिसमें मछली का पतला शोरबा, थोड़ा-सा दलिया और रोटी का एक टुकड़ा था। यहाँ हम कम से कम शान्ति से तो खा सकते थे। यहाँ हरेक व्यक्ति के लिए लेटने को लकड़ी का एक तख्तपोश था जिसपर आरामकर हम करीब एक सप्ताह की यात्रा की थकान मिटा सकते थे। मुझे याद नहीं कि ओर्शा की इस जेल में लकड़ी के सख्त

तख्तपोश पर बीती यह रात मुझे जितनी सुखकर प्रतीत हुई, उतनी सुखकर पहले होटल में कभी मेरी कोई रात बीती या नहीं।

एक दिन हम फिर स्तोलिपिन्स्की मे सवार हुए। ज्यों ही मैं फिर लकड़ी की बेंच पर दूसरे कैदियों से सटकर बैठा त्यों ही मुझे लगा कि शायद में इस गाड़ी से कभी उतरा ही नहीं था। मुझे समय का कोई ज्ञान नहीं रहा।

कुछ दिन बाद गाड़ी फिर रुकी। इस बार हम मास्को में थे।

हमें कैदियों की काली गाड़ी में भरकर शहर में से ले जाया गया। हम गाड़ी के पीछे की ओर बनी छोटी खिड़की में से बाहर देख रहे थे। शानदार चौड़ी अमर की सड़कें थीं जिन पर वैसी ही शानदार लैम्पों की रोशनी थी। अमरीकी ढंग के गगनचुम्बी भवन थे और साथ ही छोटे-छोटे झरोखों से भरी सस्ती पलस्तर की इमारतें भी थीं। यह बढ़िया नई इमारतें और गन्दी लकड़ी की झोपड़ियों का एक अजीब बेढंगा मिश्रण था।

पेरेसिल्का अर्थात् कैदियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजनेवाली तबादला जेल कई मंजिल ऊँची थी और उसके मध्य में एक छोटा सा भवन था। यहां भी वही आम चीजें दोहराई गईं। नहाने के बाद हमारे कपड़ों पर बीमारी के कीड़े मारनेवाली दवाएँ छिड़की गईं। उसके बाद मछली का शोरबा और काली रोटी और अन्त में आराम के लिए लकड़ी के तख्तपोश। किन्तु इस बार एक परिवर्तन था और वह यह कि यहां जूएँ भी थीं।

तीन दिन बाद हम फिर अपनी स्तोलिपिन्स्की में मास्को से उत्तर की ओर चल पड़े। इस बार हम लोगों में जर्मनों की संख्या और भी कम थी। मास्को में अधिकारियों ने हमारे साथ रूसी कैदी भी मिला दिये थे। हम वोलोग्दा के रास्ते आर्चेजल की ओर रवाना हुए। कोनोशा पर हमने पूर्व की ओर यात्रा प्रारम्भ की।

"हम वोर्कुटा अर्थात् उत्तरी यूराल के जंगल कैम्पों में जा रहे हैं।" इस विशाल देश के हमारे साथी कैदियों ने बताया।

मुझे यात्रा की यह मंजिल पिछली मंजिलों की अपेक्षा कम थकानेवाली लगी। मेरे पास सोने लायक जगह थी और मैं खूब सोया भी। मेरे पड़ोसी रूसी ने मुझे लेटने के लिए एक कम्बल दे दिया। वह कामचलाऊ जर्मन भाषा बोल लेता था। किन्तु पहले दिन हमारी बातचीत बहुत सीमित रही, सिर्फ जब कभी हम एक दूसरे के सामने पड़ जाते, हममें 'नमस्ते' या 'माफ कीजिए' आदि एक-दो शब्दों का आदान-प्रदान हो जाता।

रूसी को मेरे आराम का बहुत ख्याल था। उसने कहा "तुम्हें पानी चाहिए।"

मैं सो रहा था। वह मुझे जगाकर बोला—"हमें बाहर गुसलखाने में जाने की इजाज़त दे दी गई।"

शाम को उसने मुझे बताया कि उसका नाम सेर्योशा है। उसे यूरोप के बारे में बहुत दिलचस्पी थी। वह यूरोप के बारे में व्यावहारिक तफसील चाहता था ताकि पश्चिमी देशों के सम्बन्ध में कोई निजी धारणा बना सके।

"आम तौर पर वहां एक बढ़ई सप्ताह में कितना कमा लेता है ? वह उससे क्या-क्या खरीद सकता है ? एक पौंड मक्खन की कितनी कीमत होती है ? और रोटी, चटनी, मुरब्बे और एक सूट की ? एक अच्छे जूते की ? एक छोटी मोटर कार की और एक छोटे घर की ?"

फिर वह इन सबका हिसाब लगाने लगा। सोवियत रूस में एक बढ़ई इतना कमा लेता है। और भोजन की इतनी कीमत होती है, आदि। करीब पन्द्रह मिनट तक वह अपना हिसाब लगाता रहा। उसके बाद उसे उत्तर मिल गया। वह बोला, एक यूरोपीय बढ़ई सोवियत रूस के बढ़ई से तीन-चार गुना अच्छी जिन्दगी बसर करता है।

———

अध्याय ३

वोकुंटा में आगमन

कई दिन बाद गाड़ी की रफ्तार धीमी हुई और वह ठहर गई। यही वोर्कुटा यानी उत्तरी यूराल का जंगल कैम्प था।

लोहे के जंगलों पर चढ़े कुंडे खोल दिये गये। पहरेदार ने चिल्ला कर हुक्म दिया। सेर्योशा ने उसका अनुवाद कर मुझे समझाया—"हमें एक-एक कर नीचे उतरना है।"

हम लोग कतारें बाँधकर खड़े हो गये और हमारी गिनती की गई। सब मिलाकर हम १२३ आदमी थे, जिनमें यूक्रेनियन, रूसी, लर्टवियन, लिथुआनियन, काकेशियन, मंगोल, उजबेक, ताजिक, जापानी और १२ जर्मन थे।

"अब क्या होगा?" मैंने सेर्योशा से पूछा।

वह पहले भी तीन वर्ष यहाँ बिता चुका था। चार मास पूर्व ही वह ओरेल में एक मुकदमे में गवाही देने के लिए ले जाया गया था। और अब वह हमारे साथ मास्को के रास्ते लौट रहा था।

'अब हम पेरेसिल्का यानी एक मध्यवर्त्ती कैम्प में ले जाये जायेंगे। सभी नये आने वाले कैदी पहले वहीं ले जाये जाते हैं। वहाँ उन्हें अलग-अलग कोयला-खानों में काम करने के लिए बांट दिया जाता है।

"हमें पेरेसिल्का में कितने दिन रहना होगा?"

"कम से कम एक या दो सप्ताह। मुमकिन है, इससे भी ज्यादा।"

हमारे दल का इंचार्ज सार्जेन्ट ऊँची, तीखी और नीरस आवाज में जल्दी-जल्दी आदेश देने लगा। सेर्योशा ने अनुवाद करके मुझे समझाया।

"वह कह रहा है कि हम लोग कूच करते हुए आपस में बातचीत

नहीं कर सकते और न ही इधर-उधर देखने या भागने का प्रयत्न कर सकते हैं। जो भी भागने का प्रयत्न करेगा, उसे गोली मार दी जायेगी।"

"आगे बढ़ो !"

हमारा दस्ता आगे बढ़ा। हमारे दोनों ओर टामीगनें लिए एक दर्जन सैनिक चल रहे थे। पुलिस के कुत्ते लिए कुछ सैनिक पीछे भी थे।

हम लोग नीची झोपड़ियों के पास से होते हुए रेलवे स्टेशन के पार पेरेसिल्का की ओर रवाना हुए। फाटक पर पहुँचकर हम लोगों को अलग-अलग नाम पुकारकर गिना गया। हमारे शिनाख्त के कागज़ों पर लगी तस्वीरों के साथ हमारे चेहरे मिलाये गये। हमारे पास जो मामूली-सा सामान था, उसकी तलाशी ली गई।

लकड़ी का यह बड़ा फाटक कटीले तारों से ढका था। एक-एक कर हम उसके भीतर से होकर कैम्प में गये।

कैदियों का एक झुंड, जो चेहरे-मोहरे से ही जर्मन मालूम होता था, फाटक के एकदम भीतर खड़ा था।

"क्या कोई जर्मन है ?" उनमें से एक ने हमारी ओर देखकर ऊँचे स्वर से पूछा।

"हाँ।"

"तुम लोग कहां से आये हो ?"

"बर्लिन से।"

"तुम लोग कब रवाना हुए ?"

"छः सप्ताह पूर्व।"

तुरन्त ही जर्मनों की भीड़ हमें घेरकर खड़ी हो गई और हम पर सैकड़ों सवालों की बौछाड़ करने लगी। उन सबका एक साथ उत्तर देना सम्भव नहीं था। हमने खुद उनसे सवाल कर किसी तरह जान छुड़ाने की कोशिश की।

"तुम लोग यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"हमें बताया गया है कि हम अपने घरों को लौट रहे हैं।"

"क्या तुम यहाँ बहुत समय तक रहे हो ?"

"काफी समय तक।"

उनसे मालूम हुआ कि पेरेसिल्का में सब मिलाकर बारह सौ जर्मन युद्धबन्दी थे। वे विभिन्न खानों के कैम्पों से पिछले कुछ ही दिनों में लाये गये थे। इनमें से बहुत-से चार, पांच या छः साल से वोर्कुटा में थे।

"अच्छा, हमें जर्मनी के हाल-चाल सुनाओ !"

वे हमें अपनी बैरकों में ले गये और अलग-अलग गुटों में बांटकर हमसे बातचीत करने लगे। पन्द्रह से पच्चीस तक कैदियों का झुंड हर नये आगन्तुक जर्मन के चारों ओर एकत्र हो गया और उससे तरह-तरह के सवाल पूछने लगा।

जार निकोलस प्रथम के सलाहकारों ने जब उसे सलाह दी थी कि वह पेचोरा और वोर्कुटा नदियों के बीच के प्रदेश को निर्वासित लोगों की एक बस्ती बना दे तो उसने वहां की परिस्थितियों के बारे में एक रिपोर्ट मंगवाई और उसे देखकर फैसला किया कि "किसी आदमी से यहाँ रहने को कहना ज्यादती करना है।"

इसी बीच जार के शासन का अन्त हो गया और सत्ता पोलिटब्यूरो के हाथ में आ गई। सोवियत संघ के कोमी गणराज्य के सबसे उत्तरी सिरे पर स्थित वोर्कुटा में प्रति वर्ष करोड़ों टन कोयला पैदा हो सकता है, किन्तु वहां का जल-वायु इतना खराब है कि बलात् श्रम (बेगार) के सिवाय और किसी उपाय से कोयला नहीं निकाला जा सकता। कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा से उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्र में काम करने के लिए जाना नहीं चाहता। वोर्कुटा की खानों से आज सोवियत रूस के समूचे कोयले के उत्पादन का बारहवां भाग उत्पन्न होता है।

वोर्कुटा नगर की स्वतन्त्र आबादी का एक भाग जर्मन है। ये लोग रूस में ही रहते हैं और मुख्यतः सन् १९४० और १९४१ में लाखों की

संख्या में उत्तर में तथा हज़ारों की संख्या में वोर्कुटा में निर्वासित कर दिये गये थे। १९४० में वाल्टिक राज्यों पर रूस का अधिकार हो जाने पर लिथुआनियनों, लटवियनों और इस्टोनियनों को भी वहुत बड़े पैमाने पर निर्वासित किया गया। पश्चिमी यूक्रेनियनों का निर्वासन भी लगभग इसी समय शुरू हुआ। आज ये सब लोग वोर्कुटा की 'स्वतन्त्र' आबादी का मुख्य भाग है, जिनमे से सत्तर हज़ार के लगभग वोर्कुटा नगर में और पचास हज़ार के लगभग खानों के इर्दगिर्द के गाँवों में रहते हैं।

नगर के शिष्ट समाज में एन० के० वी० डी० हैडक्वाटर के अफसर तथा 'वोल्कुटुगोल कम्वाइन' के टैकनीशियन और अधिकारी हैं जो विभिन्न खानों के संचालन और कार्य का समन्वय करता है।

इस स्वतन्त्र आवादी में उन कैदियों की निरन्तर वृद्धि होती रहती है जो अपनी पूरी सजा काट चुकने के बाद रिहा कर दिये गये हैं, किन्तु जिन्हें दक्षिण की ओर अपने घरों को लौटने के लिए अनुमति-पत्र देने से वार-वार इन्कार कर दिया जाता है।

सब मिलाकर पचास खानें हैं। हर खान के साथ खनकों और दूसरे गुलाम मजदूरों के रहने के लिए झोपड़ों का एक कैम्प है। इस प्रकार के लगभग तीस कैम्प हैं, जिनमें से हर एक में औसत साढ़े तीन हजार आदमी रहते हैं। इस प्रकार वोर्कुटा की कुल आवादी में से एक लाख पांच हजार कैम्पों में रहनेवाले मजदूर, एक लाख बीस हजार 'स्वतन्त्र' निर्वासित नागरिक और बारह हजार एन० के० वी० डी० के अधिकारी व अन्य अधिकारी और टैकनीशियन हैं। इस तरह सारी आबादी लगभग दो लाख पैंतीस हजार है।

वोर्कुटा की खानें कोयला उत्पादन मंत्रालय के अधीन हैं और उनके साथ लगे कैम्प एन० के० वी० डी० के अधीन। इन तीस के लगभग खानों में से तेरह में सिर्फ राजनीतिक कैदी ही काम करते हैं और उनके कैम्प विशेष कैम्प कहलाते हैं। ये तेरह विशेष कैम्प

एन० के० वी० डी० के एक खास विभाग के अधीन हैं। शेष कैम्प सिर्फ वोर्कुटा कैम्प कहलाते हैं और उनमें कम गम्भीर राजनीतिक अपराधों के अपराधी रहते हैं। उनमें अनुशासन बहुत कठोर नहीं है। जिनका व्यवहार अच्छा होता है उन्हें शहर में जाने के अनुमति पत्र भी मिल जाते हैं। हरेक खान अपने कैम्प से भाड़े पर कैदी लेती है और उनके काम के मेहनताने के रूप में कैम्प को प्रति मास प्रति व्यक्ति कुछ रकम देती है, जो औसत प्रति व्यक्ति बारह सौ रूबल मासिक पड़ती है।

"क्या यहाँ से निकल भागने की कोई गुंजायश है?" मैंने उनमें से एक युद्धबन्दी से पूछा जो कई वर्ष से यहाँ था।

वे हँसे।

"क्या तुम समझते हो कि यदि कोई गुंजायश होती तो हम यहाँ होते?"

उन्होंने बताया कि कैम्प पर कैसे पहरा और निगरानी रखी जाती है।

हरेक कैम्प के चारों ओर बारह फुट ऊँची कंटीले तारों की बाढ़ होती है। इस बाढ़ के भीतर चारों ओर करीब छः गज़ चौड़ा एक निषिद्ध क्षेत्र है जिसके भीतर किसी के पहुँचते ही ऊँचाई पर टावर में खड़े सन्तरी उसे गोली मार देते हैं। इसके भीतर स्प्रिंगदार बन्दूकें लगी रहती हैं। सन्तरियों के टावर परस्पर टैलीफोन से और अपने सदर मुकाम से बिजली के अलार्मों के ज़रिये जुड़े रहते हैं। तार के साथ-साथ हर दस या पन्द्रह फुट के फासले पर तेज़ रोशनी के लैम्प लगे रहते हैं और अन्धेरे के समय इस निषिद्ध क्षेत्र को इन लैम्पों से दिन की तरह रोशन और जगमग रखा जाता है। बाढ़ के बाहर उसके समानान्तर एक और तार लगी रहती है, जो पुलिस के कुत्तों का पथ प्रदर्शन करती है। उदाहरण के लिए यदि बिजली की बत्तियाँ गुल हो जाएँ और चेतावनी दे दी जाय तो कुछ मिनट के भीतर ही सारा कैम्प एक विशेष दस्ते से घिर जाता है, जो हर वक्त तैयार रखा जाता है।

किन्तु वर्फीले तूफान के समय या ध्रुवीय कुहरे के समय, जो कभी-कभी एकाएक ही यहाँ आ जाता है, कैम्प की किलेबन्दी से निकला भी जा सकता है। लेकिन टंड्रा प्रदेश से पार पाना सम्भव नहीं है। इसकी छोटी-छोटी झाड़ियों में न तो छिपना सम्भव है और न उनका सहारा लिया जा सकता है। सन्तरी ऊपर से ढकी खाइयों में छिपकर अपनी दूरबीनों से चारों ओर के ऊँचे-नीचे प्रदेश पर नज़र रखते हैं। धीमी रफ्तार से उड़नेवाले छोटे-छोटे हवाई जहाज़, जिन्हें लड़ाई के दिनों में सिपाही 'कपड़े सीने की मशीनें' कहते थे, कुछ सौ फुट की ऊँचाई पर उड़ते रहते और भगोड़े संदिग्ध व्यक्तियों की खोज-बीन करते रहते हैं।

टंड्रा के एकमात्र निवासी कोमी लोग जो सामोयीद (साइबेरियन मंगोल) जाति की ही एक शाखा है, यदि किसी भगोड़े कैदी को पकड़-कर पुलिस के हवाले करते हैं तो उन्हें उसके लिए इनाम मिलता है, जो उनकी सालाना आमदनी का काफी बड़ा भाग होता है।

किन्तु इसके बावजूद हर वर्ष बदस्तूर वोर्कुटा से निकल भागने की कोशिशें होती हैं और उसी तरह बदस्तूर भागे हुए कैदी वापस कैम्पों में पहुँचा दिये जाते हैं। भागे हुए कैदी को अपने इस प्रयत्न की कीमत चुकानी पड़ती है। पहले इस तरह भागनेवालों को गोली से मारकर दूसरों के लिए चेतावनी के तौर पर कुछ दिन फाटक पर पड़े रहने दिया जाता था। किन्तु आजकल ऐसे लोगों को सिर्फ मार-मारकर अधमरा कर दिया जाता है।

जब तक मैं वोर्कुटा में रहा, सिर्फ एक फिनलेंड के कैदी ने भागने का प्रयत्न किया। वह कैम्प में वापस नहीं लाया गया, किन्तु कोई नहीं जानता कि वह अपने घर पहुँच सका या नहीं।

हमारे नये मित्र कैम्प की हर बात से अच्छी तरह वाकिफ थे।

"यहाँ दिक्कतें होती हैं, कभी-कभी बहुत बड़ी, किन्तु खैर, तुम देख ही रहे हो, हम किसी-न-किसी तरह यहाँ काम चला ही रहे हैं।"

सबसे अधिक मुसीबत के वर्ष स्पष्टतः १९४७ से पहले के थे ।

"आजकल तो", इन पुराने कैदियों ने कहा, "ज़िन्दा बचे रहने की कुछ गुंजायश भी है । किन्तु फिर भी यहाँ ज़्यादा वर्ष तक नहीं रहना चाहिए । यहाँ की आबोहवा ख़ूनी है । जो कोई भी व्यक्ति यहाँ अधिक समय तक रहता है, वह खोखला हो जाता है ।"

हम सारे तीसरे पहर बातें करते रहे । शाम के समय मुझे भूख लगने लगी । मैंने अपने तख़्तपोश के नीचे से अपना थैला खींचा, जिसमें मेरा थोड़ा-सा सामान था, मैं उसमें से कुछ रोटी निकालना चाहता था । किन्तु थैला किसी ने काट लिया था । उसमें से मेरी वास्कट नदारद थी, जिसे मैंने चोरी होने से बचाने के लिए सावधानी से उसमें छिपा दिया था । मेरे चेहरे पर परेशानी का भाव देखकर मेरे देशवासी हंस पड़े ।

उनमें से एक ने कहा, "हमें तुम्हें पहले ही चेतावनी दे देनी चाहिए थी । किन्तु हम जर्मनी के बारे में सुनने को इतने अधीर थे कि हम भूल गये । तुम्हें अभी इन रूसी मुजरिमों का पता नहीं है ।"

अहा! कैसी हाथ की सफाई थी । मैं उधर बातें कर रहा था कि इसी समय एक प्लातनोई यानी कैम्प का एक रूसी मुजरिम चुपचाप मेरे तख़्तपोश के नीचे घुस गया और मेरे पाँवों के पास पड़े थैले को काटकर फिर चुपचाप रेंगकर लापता हो गया । साथ ही मेरी वास्कट भी लापता हो गई । बढ़िया वास्कट थी जिसे मैं अपने सर्वोत्तम काले सूट के साथ पहनता था और जिस दिन गिरफ्तार हुआ उस दिन भी उसी को पहनकर थियेटर गया था । वोर्कुटा में उसे बेचकर मैं अच्छी कमाई कर सकता था ।

युद्ध वन्दियों ने मुझे सलाह दी कि पेश्तर इसके कि रूसी मुजरिम मेरी चीजें चुरा लें, मैं उन्हें बेच डालूं । वुपरटाल के एक कैदी ने मेरी चीजें बेचना स्वीकार कर लिया । जिस बैरक में पूरी सजा काट चुकने

वाले कैदी रहते थे, उसमें वह चीजें बेचने का धन्धा किया करता था। इन कैदियों को स्वतन्त्र नागरिकों के पहनने लायक कपड़े खरीदने की आज्ञा थी क्योंकि वे रिहा किये जा रहे होते थे। मुझे अपना सामान बेचकर ७५ रूबल मिले, जो कैम्प की एक साधारण पूंजी थी। एक युद्ध बन्दी ने मुझे अपनी रूईदार पतलून दे दी और कपड़ों के स्टोर से मुझे एक बुशलात यानी रूईदार जाकट मिल गई। जल्दी ही मेरी वेशभूषा बदल गई जिससे वर्षों से कैम्प में रहनेवाले कैदियों से मुझे अलग पहचानना भी कठिन हो गया।

दूसरे दिन सुबह मैं एक सभा में गया जिसमें सब युद्धबन्दी बुलाये गये थे। एक रूसी मेजर ने सभा में भाषण देते हुए कहा।

"वोर्कुटा के कैम्प प्रबन्धकों की ओर से मुझे तुम लोगों को यह सूचना देने का आदेश दिया गया है कि अब तुम लोग अपने घरों को भेजे जा रहे हो।"

कैदी जोर से कहकहा लगाकर हँस पड़े। उनमें से एक ने चिल्लाकर कहा, "यह बात सातवीं बार मुझसे कही गई है, किन्तु आज भी मैं यहीं सोवियत रूस में ही हूँ।"

मेजर को गुस्सा आ गया। वह बोला, "जब मैं तुम्हें कैम्प के प्रबन्धकों की ओर से यह सूचना देता हूँ तो तुम्हें मेरे शब्दों पर सन्देह करने का कोई अधिकार नहीं है।"

कैदी फिर जोर से हँसने लगे। मेजर शायद ईमानदारी से ही कह रहा था। मुमकिन है वोर्कुटा के कैम्प अधिकारियों ने भी उसे ईमानदारी से ही यह सूचना देने का भेजा हो, किन्तु कैदियों का अभ्रान्त मन उनसे कह रहा था कि रूसी सिर्फ उन्हें धोखा दे रहे हैं।

युद्धबन्दियों की रवानगी की तैयारियाँ जारी रहीं। उनका निजी सामान, उनकी घड़ियाँ, अँगूठियाँ और उनका पैसा, जो कुछ भी गिरफ्तारी के समय उनसे छीन लिया गया था, उन्हें लौटा दिया गया।

अगर किसी को पिछले कैम्प से रूईदार कपड़े नहीं मिले थे तो उसे वे भी दिये गये। उन्होंने हमें शाल, गुलूवन्द तथा पाँवों को लपेटने के कपड़े, जो उन्होंने स्वयं तैयार किये थे, हमें भेंट किये। जाड़ों के लिये ये चीज़ें अत्यन्त अनिवार्य हैं। रूसी मेजर फिर आया और उसने एक और भाषण दिया। उसने कहा, "पशुओं की जिन गाड़ियों में लादकर तुम्हें ले जाया जायगा, उन पर ताले नहीं लगाये जायेंगे। कोई भी आदमी भागने की कोशिश करके अपनी घर लौटने की संभावनाओं को खतरे में न डाले। तुम्हारे साथ सन्तरी चलेंगे, किन्तु वह सिर्फ एक ज़ाब्ते की कार्रवाई होगी।

युद्धबंदियों ने हमें इसका अर्थ यह बताया कि हम लोगों को अब अधिक अच्छे काम मिल जाएँगे, जो अब तक उन्हें मिले हुए थे। इन कामों में हमें राशन भी ज्यादा मिलेगा। इसीलिए मुझे और दो अन्य जर्मनों को वान्या में काम मिल गया। हमें वहीं सोने की भी इजाज़त मिल गई, जिससे हमें रूसी मुजरिमों से, जो हमारा सब सामान चुरा लेते थे, छुटकारा मिल गया। एक और व्यक्ति को पानी ढोने का काम मिल गया जिस पर उसे थोड़े-से काम के लिए पौंड रोटी का अतिरिक्त राशन प्रतिदिन मिल जाता था।

युद्धबंदियों की रवानगी के समय का ऐलान कर दिया गया। इससे अत्यन्त मायूस लोगों को भी कुछ-कुछ आशा होने लगी।

वे बोले, "शायद इस बार हम सचमुच ही घर जा रहे हैं।"

मैंने उनमें से करीब एक दर्जन व्यक्तियों से अपने सम्बन्धियों को यह सन्देश देने के लिए कहा कि मुझे बलात् श्रम कैम्प में पच्चीस वर्ष काम करनें की सज़ा देकर वोर्कुटा भेज दिया गया है।

बारह सौ जर्मन कैम्प की मुख्य सड़क पर खड़े ट्रकों में सवार हो गये और रेलवे स्टेशन की ओर चल पड़े।

किन्तु हमारे मन में यह सवाल उठने लगा कि न जाने उन्हें कहाँ ले जाया जा रहा है।

हममें से किसी ने भी नहीं सोचा था कि साढ़े तीन वर्ष बाद, दिसम्बर, १९५३ में दोन वेसिन के एक कैम्प में इनमें से अधिकतर लोगों से फिर हमारी मुलाकात होगी। उनमें से एक भी व्यक्ति १९५० में अपने घर नहीं पहुँच सका।

———

अध्याय ४

नई दुनियां का निर्माण

तीन सप्ताह कैम्प में बिताने के बाद एक दिन शाम को सन्तरी हम लोगों को खान नं० ६ और १० के कैम्प में ले गये।

एक बार फिर हमें वहां दो सप्ताह तक शेष कैम्प से लकड़ी की बाढ़ से अलग की हुई एक बैरक में रखा गया। संक्रामक रोगों के भय से हर नये आनेवालों को वहाँ रखा जाता है।

एक दिन सुबह एक कमीशन हमें रोगयुक्त करने के लिए आया। हमें चीरफाड़ के कमरे में ले जाकर कपड़े उतारने के लिए कहा गया। एक-एककर हम कैम्प के डाक्टरी विभाग की इंचार्ज महिला डाक्टर के सामने पेश हुए। उसका नाम था त्रोफिमोविच। अर्दली ने हमें अपनी पतलूनें उतार देने और मुँह फेरकर खड़े होने का इशारा किया। त्रोफिमोविच ने हमारे नितम्बों के बचे-खुचे मांस में जल्दी कुछ भारी इजेक्शन लगा दिये।

त्रोफिमोविच ने मेरे कागजात को देखा।

"तुम डाक्टर हो ?"

"हां।"

"तुमने किस विषय का विशेष अध्ययन किया है ?"

"एक्स-रे।"

"अगला आदमी आओ।"

उसे मेरे प्रति इससे अधिक कोई दिलचस्पी नहीं थी।

उसी दिन शाम को श्रम विभाग के मुखिया ने हम लोगों के नाम और हमारे लिये निर्धारित की गई बैरकों के नाम हमें पढ़कर सुनाये। मैंने अपना सामान का थैला कन्धे पर डाला और कैम्प की मुख्य सड़क

से होता हुआ दूसरे सिरे पर अवस्थित २७वीं बैरक की ओर चल पड़ा।

इस बैरक की लम्बाई १०० फुट, चौड़ाई २० फुट और मध्य में उंचाई १२ फुट थी। ये बैरकें बिल्कुल सीधे-सादे ढंग से बनाई जाती हैं। टंड्रा प्रदेश की इस जमीन पर एक पंक्ति म बहुत-से ठोस खम्भे गाड़ दिये जाते हैं। इसके बाद उन्हें भीतर और बाहर से लकड़ी की पतली खपच्चियों स जोड़कर लकड़ी के तख्तों से ढक दिया जाता है। बीच में जो स्थान खाली रह जाते हैं उन्हें ईंट, पत्थर या रोड़ी आदि के मलवे से भर दिया जाता है और ऊपर से दीवारों पर गारे का पलस्तर कर सफ़ेदी कर दी जाती है। खिड़कियां छोटी से छोटी बनाई जाती हैं ताकि भीतर ज्यादा से ज्यादा गर्मी बनी रहे। जाड़ों म बाहर की दीवार के सामने दो फुट मोटी बरफ की परत जम जाती है। बीच-बीच में सिर्फ खिड़कियों का स्थान खुला रह जाता है।

मैं छोटे से दरवाजे से होकर दस फुट लम्बे और दस फुट चौड़े एक छोटे पीछे के कमरे में गया जहां दीवार पर जगह-जगह रूईदार जाकटें टंगी हुई थीं। कैदी जमीन पर ही सो रहे थे।

बैरक का सरदार, जो एक दढ़ियल यूक्रेनी था, सोने और रहने के मुख्य कमरे में था। दीवारों के साथ-साथ लकड़ी के तख्तपोशों की दो कतारें सीधी चली गई थीं और उन पर चटाइयां बिछी थीं। एक अंगीठी और दो मेजें थीं, जिनके चारों ओर करीब दर्जन भर कुर्सियां रखी थीं। यह बैरक ७० आदमियों के लिए थी।

जब मैंने बैरक के मुखिया से कहा कि वह मुझे भी कोई स्थान रहने को दे तो उसने सिर्फ कन्धा हिला दिया।

"मेरे पास इस बैरक में १४० आदमी हैं। तख्तपोशों पर अब और जगह नहीं रही। तुम फर्श पर ही कहीं जगह तलाश कर लो।"

ऐसा लगा कि शायद यहां भी जगह मिलना मुश्किल होगा, क्योंकि फर्श पर भी स्थायी बाशिन्दों ने कब्जा कर रखा था। किन्तु अन्त में बैरक के भीतर हाजिरी ली जाने के बाद मुझे अंगीठी के पास पड़े पांच

यूक्रेनियों के नजदीक कुछ जगह मिल गई। मेरी लेटने की जगह एक फुट से अधिक चौड़ी नहीं थी। प्राय: और सभी कैदियों की भाँति मैं भी सिर्फ करवट लेकर ही लेट सकता था। किन्तु अपने उन सब साथियों से जो मेरे ही साथ वहाँ आये थे, मैं अधिक खुशनसीब था, क्योंकि उन्हें फर्श पर भी जगह नहीं मिली। उन्होंने साथ के छोटे कमरे में बैठकर ही सारी रात बिताई।

पर हर किसी के नसीब में करवट लेकर सोना नहीं बदा था। इस मामले में भी एक उच्च वर्ग था। बैरक के एक कोने में कुछ चौड़े और मोटे गद्दे थे जिन पर सफेद चादरें बिछी थीं और साफ-सुथरे कम्बल रखे थे। इस कोने में मजदूरों की पलटन के नेता सोते थे। उनमें से हर एक के पास कम से कम तीन-चार फुट चौड़ी सोने की जगह थी। इस उच्च वर्ग को यह विशेषाधिकार प्राप्त था कि उसके सदस्य कमर सीधी कर सो सकते थे।

सुबह तीन बजे हमें सोते से जगा दिया गया।

"नाश्ते के लिए उठो!"

नाश्ते में बन्द गोभी की कांजी और १२ औंस डबल रोटी थी। कांजी के बारे में कैम्प के इन पुराने विशेषज्ञ कैदियों का कहना था कि इसमें ५० फी सदी से ज्यादा पानी है।

खाने का कमरा छोटा था, उसमें सिर्फ ढाई सौ आदमी बैठ सकते थे। अगर किसी तरह की गड़बड़ न हो तो वहाँ एक घंटे में एक हजार आदमियों को खिलाया जा सकता था। किन्तु क्योंकि ६ बजने से पहले ही तीन हजार आदमियों को खिला देना जरूरी था, इसलिए हमारी बैरक के लोगों ने तीन बजे ही नाश्ता शुरु कर दिया। साढ़े तीन बजे तक हम फिर बैरक में आकर सो गये और पांच बजे फिर उठे।

"काम करने चलो!"

साढ़े पांच बजे कैदी मजदूरों के दल चलने प्रारम्भ हो गये। इनके साथ चलनेवाले रक्षक सिपाही कैम्प के उत्तरी सिरे पर स्थित

सन्तरियों के कमरे के बाहर जमा हो गये और वहीं से एक-एक कर मजदूरों के जत्थे विभिन्न कामों के स्थानों की ओर चल पड़े।

मुझे खान के ऊपरी सिरे पर काम करनेवाले एक दल में शामिल किया गया था। हम सब लोग कैम्प से खान की ओर जानेवाले मार्ग के फाटक पर जमा हो गये, जहां एक बार फिर हाजिरी हुई।

सात बजे के कुछ ही देर बाद हमने खान के भीतर से कोयलों से भरे छकड़े खींचनेवाली रात पाली के आदमियों से काम संभाला। छकड़े छः से दस तक की कतारों में एक दूसरे के साथ जुड़े हुए थे और उन्हें फौलाद के एक रस्से से ढाल से ऊपर खींचा जाता था। हमारे दल का काम इन छकड़ों से निकालकर कोयले को एक गोदाम में भरना था जहां से एक घूमता हुआ पट्टा उसे दूसरे गोदाम में और ऊपर पहुंचा देता। वहां एक दूसरा विशेष दल कोयल को छांटता और अच्छा कोयला नीचे खड़े ६० टन के रेल के छकडों में जा पडता। हर रोज इस खान से २५ से ३० तक कोयले के रेल छकड़े रवाना होते जिसका अर्थ था कि यहां का दैनिक उत्पादन १५ हजार से १८ हजार टन तक होता।

यह कोयला निकालनेवाले खानकों को नं० ६ राशन, यानी प्रतिदिन ढाई पौंड रोटी, दो पिंट शोरबा, सवा पौंड दलिया, एक-दो बूंद तेल और साढ़े तीन औंस मछली तथा प्रति मास डेढ़ पौंड चीनी मिलती। यदि वे अपना सामान्य काम पूरा करने में सफल हो जाते, जिसके लिए अपनी शक्ति की आखिरी बूंद तक लगा देनी पड़ती थी, तो उन्हें हर रोज माचोरका (एक प्रकार का तम्बाकू) का एक पैकेट भी मिलता, जिसकी कीमत कैंटीन में ८० कोपेक थी। यदि उनका काम सामान्य से कम रहता तो उनके लिए भूखे रहने की नौबत आ जाती। पेट भरने के लिए पूरा काम करना जरूरी था। इसीलिए वे लोग पूरा काम करते थे।

तीन बजे के कुछ देर बाद दूसरी पाली के आदमियों ने आकर

हमसे काम संभाल लिया। चार बजे के लगभग हमारी फिर हाजिरी ली गई और हम लोग सन्तरियों के कमरे की तरफ से होते हुए कैम्प में लौट आये। पाँच बजे तक हमारा खाना समाप्त हो गया। जो लोग माचोरका पीते, वे उसे कागज में लपेटकर सिगरेट बना लेते। हममें से बहुत से रात की हाजिरी तक एक नींद ले लेते और हाजिरी होने के बाद फिर पड़े रहते। महीने में चार दिन काम की छुट्टी रहती। इन दिनों कैदी सोकर अपनी बची हुई थकान मिटाने का प्रयत्न करते।

इसी तरह सप्ताह पर सप्ताह, महीने पर महीना और वर्ष पर वर्ष बीतते चले जाते हैं। मैंने अपने साथ के कैदी से पूछा कि उसे कैम्प में कितना समय हो गया है। उसने उत्तर दिया, "मैं सन् १९३९ से यहीं हूँ।"

चार सप्ताह तक खान के ऊपरी सिरे पर काम करने के बाद मुझे शहर में काम करनेवाले एक दल में शामिल कर दिया गया। हमारा दल हर रोज सुबह छः बजे कैम्प से रवाना होता। आधे घंटे बाद हम रेलवे साइडिंग के पास से गुज़रते, जहाँ कभी-कभी सप्ताह में दो बार मास्को और वोर्कुटा के बीच चलनेवाली एक्सप्रेस गाड़ी के नीले डिब्बे दीख पड़ते।

पहले हम एक बड़े दुमंज़िले मकान के निर्माण में लगे जिसकी छत तीस फुट ऊँची बनाई जानी थी। इसमें तीस कमरे थे जिनमें टैकनिकल कालेज के छात्रों के रहने की व्यवस्था की जानी थी।

तीसरे पहर चार बजे काम समाप्त होगया।

कैम्प नं० ९/१० नगर में पाँच अलग-अलग भवन-निर्माण योजनाओं के लिए करीब पाँच सौ कैदी-मजदूर मुहय्या करते थे। अक्टूबर के प्रारम्भ में मुझे एक ऐसे दल में शामिल किया गया जो रात में काम करता था। यह दल हर रोज़ शाम को सात बजे कैम्प से रवाना होता। एक घंटे बाद काम शुरु होता और सुबह पांच बजे खतम होता।

हमारे दल के हर आदमी को भूख सताती। राशन में मिलनेवाली तेरह औंस रोटी, जो हमें नाश्ता और रात का भोजन दोनों का काम

चलाने के लिए दी जाती थी, समय से बहुत पहले ही निबट जाती। अगला भोजन दस घंटे बाद सुबह साढ़े छः बजे होता। हम उसके लिए बहुत तरसते, हालांकि हम जानते थे कि वह हमारी हर वक्त लगने वाली भूख को मिटा नहीं सकेगा।

एन० के० वी० डी० के अफसर आधी रात के करीब सोने जाते और एक बजे रात लाउड-स्पीकरों पर प्रोग्राम खत्म होता। इसके बाद जैसे-जैसे प्रतिपल जाड़ा बढ़ता जाता और हम थकान से अधिकाधिक क्लान्त होते जाते, वैसे ही वैसे लगता मानो समय अत्यन्त असह्य मन्द गति से बीत रहा है। हालांकि अभी अक्टूबर का मध्य ही था, फिर भी सुबह चार बजे तापमान शून्य अंश से भी २५ अंश शतांश नीचे होता। हमें पास की खाई से भाफ सीमेंट से उठती स्पष्ट नजर आती।

वोर्कुटा में इमारतें बनाने का काम जाड़ों में भी उसी रफ्तार से होता है जिस रफ्तार से गर्मियों में। एक खाली खड़े रेल के इंजन से भाफ एक मोटी रबड़ की नली के जरिये एक बड़े पानी के हौज में पहुँचाई जाती। सीमेंट मिलानेवाले यन्त्र में सीमेंट, गर्म पानी, रेत और रोड़ी मिला दी जाती (रेत और रोड़ी ६ फुट चौड़ी और १२ फुट लम्बी एक लोहे की गर्म चादर पर गर्म रखी जाती)। इसके बाद कंक्रीट को जमा देनेवाली ध्रुवीय क्षेत्र की सर्द हवाओं के स्पर्श से पहले ही लकड़ी के सांचों में उंडेल दिया जाता। सबसे अन्त में कंक्रीट में लगे लोहे के सरिये एक अत्यधिक शक्तिवाले बिजली के तार से जोड़ दिये जाते। इस प्रकार कंक्रीट सूख जाता। इस तरह के कंक्रीट की बुनियादें बहुत मजबूत साबित हुई हैं। उन्हीं के ऊपर विशाल नई ईंटों की इमारतें खड़ी हैं जो १९५४ के वोर्कुटा की विशेषता हैं।

ज्यों ही "काम बन्द करो" की आवाज गूंज उठती, हरेक कैदी रेलवे इंजन की ओर चल पड़ता। क्षण भर में उस पर गुच्छों की भांति आदमियों के ढेर उसके साथ इस आशा से लटक जाते कि शायद जो

गर्मी पैदा करने में उनके अपने शरीर असमर्थ हैं, उसे वे इंजन से प्राप्त कर सकें।

वोर्कुटा के रास्ते जब हम कैम्प को लौटते, सारा नगर निद्रा मग्न और बच्चों के अस्पताल के सामने का चौक खाली सुनसान होता।

हम नगर के सिरे पर अवस्थित अन्तिम झोंपड़ी भी अपने पीछे छोड़ आते। नदी के उस पार ८ नं० की खान में जाप्रत्नाया जोना की रोशनियाँ टिमटिमाती दीख पड़तीं। बाईं तरफ मध्यवर्त्ती खान की कोयले की राख का चमकता हुआ ढेर नजर आता। सन्तरियों के कमरे के पास पहुँचकर हमारी फिर गिनती होती। स्तोलोवाया (खाने का कमरा) में पहुँचकर हम फिर अपने पानी की तरह पतली गोभी की कांजी पर पिल पड़ते। अपनी बैरक में पहुँचने पर हर रोज सुबह मुझे पहले दिन से अधिक भूख लगती। किन्तु उस भूख का सिर्फ एक ही इलाज था—नींद !

१९५० की गर्मियों में जब मैं वोर्कुटा पहुँचा, हर जर्मन बहुत असह्य हालत अनुभव कर रहा था। सिर्फ उन्हीं लोगों को खाने को पर्याप्त मिलता जो खान के भीतर काम करते। अधिकतर लोग किसी न किसी पुष्टिकारक अन्न के अभाव के दुष्परिणामों से ग्रस्त थे। तीस से चालीस प्रतिशत आदमी तो इतने दुबले हो गये थे कि त्रोफिमोविच के लिए भी उन्हें अस्पताल में रखने से इंकार करना मुश्किल था। वे वहाँ लगातार एक, दो या शायद तीन सप्ताह तक रहते। वहाँ उनका वजन कुछ पौंड बढ़ता किन्तु काम पर लौटने के बाद तीन सप्ताहों में ही फिर वही पुरानी दशा हो जाती। ऐसे जर्मन भी थे जो इसी तरह छः या सात बार कैम्प से अस्पताल और अस्पताल से कैम्प आ-जा चुके थे।

जर्मनों के दूसरों की अपेक्षा अधिक कमजोर हो जाने का एक कारण यह था कि उनका अपने घरों के साथ कोई सम्पर्क नहीं था। सोवियत रूस के हरेक नागरिक को अपने घर से चाहे जितने राशन के

पार्सल प्राप्त करने का अधिकार था और कैम्प के कुल राशन में से उतनी ही मात्रा काट ली जाती थी। यह सही है कि कैदियों के परिवार भी उनके लिये बहुत अधिक नहीं बचा सकते थे, किन्तु फिर भी कैम्पों की हालत को देखते हुए कुछ पौंड रोटी या माचोरका के दस छोटे पैकेट भी बहुत बड़ी दौलत थे, जिनसे कोई भी कैदी चाहे जो कर सकता था।

यह रिआयत रूसी कैदियों पर दया करके नहीं, बल्कि सिर्फ बचत के लिए दी गई थी। जितना किसी कैदी का परिवार उसे भेजता, उतना ही सोवियत सरकार को उसे कैम्प में रखने के लिए कम खर्च करना पड़ता। मैंने इनमें से बहुत-से पार्सल देखे थे। उनसे इस बात का भली भाँति पता चल जाता था कि सोवियत रूस के लोग कितनी गरीबी की हालत में रहते हैं। उदाहरण के लिए एक पार्सल में दो पौंड ज्वार, एक पौंड आटा और आधा पौंड सूखे और रद्दी बिस्कुट थे। पार्सल भेजने-वाली एक यूक्रेनी कैदी की स्त्री ने लिखा था।

"प्रियतम, काश, मैं तुम्हें और भी अधिक भेज सकती, किन्तु तुम जानते हो कि खुद मेरे ही पास बहुत अधिक नहीं है। मैं ओम्स्क के पास एक सामूहिक फार्म में रहती हूँ और यहाँ खाने को अधिक नहीं मिलता।"

केवल बाल्टिक राज्यों के कैदियों के पास अच्छे पार्सल आते थे। रूस अभी तक इन देशों की पिछली खुशहाली को नष्ट नहीं कर सका था।

जर्मनों की दुर्दशा का एक कारण और भी था कि उनकी अपने घरों के साथ चिट्ठी-पत्री भी नहीं होती थी। जहाँ तक उनके परिवारों का सम्बन्ध था, ये लोग उनके लिए मर चुके थे। जुलाई, १९५० से दिसम्बर, १९५३ तक जबकि मैं यहाँ रहा, मुझे ऐसे किसी जर्मन कैदी का पता नहीं चला, जिसे एक बार भी अपने घर से पत्र प्राप्त हुआ हो।

वोर्कुटा में रहनेवाले तमाम जर्मन कैदियों में से एक-तिहाई बिल्कुल निर्दोष थे। एक-तिहाई के बारे में आम तौर पर यह समझा जाता था

कि उन्होंने रूसियों के विरुद्ध काम किया। शेष एक-तिहाई भी जर्मन पैमाने के अनुसार तो निर्दोष ही हैं, हालांकि रूसी पैमाने के अनुसार वे अपराधी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, मैकलेनबर्ग के एक जंगलात कर्मचारी को एक जंगल में जहां एक रूसी टैंक दस्ते न एक रात बिताई थी, भोजन की कुछ जूठन मिली। उसने उसे एक बहुत बड़ी टोकरी में इकट्ठा किया और अपने कुत्तों को खिलाने के लिए घर ले गया। उसी दिन शाम को उसने इस बात का गाँव की सराय में ज़िक्र कर दिया, यह ध्यान नहीं रखा कि वहीं जर्मन खुफिया पुलिस का एक मुखबिर यह बात सुन रहा था। उसकी यह बात सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थी। उसे दस वर्ष की सजा दे दी गई।

बाल्टिक सागर के एक तटवर्ती नगर में एक यात्री एक स्थानीय मछुए के घर एक कथित जासूस के रूप में गिरफ्तार किया गया। मछुए को उसके बारे में कोई जानकारी नही थी, फिर भी उसे दस साल की सजा दे दी गई।

रोस्टोक के एक छात्र का एक मित्र रूसी क्षेत्र में एक प्रतिरोधकारी संगठन का सक्रिय सदस्य था। यह मान लिया गया कि छात्र को अपने मित्र की इन कारवाइयों की अवश्य जानकारी होगी, इसलिए उसे पन्द्रह साल की सजा दे दी गई।

कैम्प नं० ६/१० में पूर्वी जर्मनी की पुलिस के कुछ भूतपूर्व सदस्य भी थे जिन पर राजनीतिक अपराधों के अभियोग थे। इनके अलावा जर्मन साम्यवादी दल का एक महत्वपूर्ण भूतपूर्व सदस्य एरविन जेरेस भी इस कैम्प में था।

जेरेस का अनुभव एक खास ढंग का था। वह बर्लिन का रहने-वाला है, उसके पिता एक पुराने सोशल डेमोक्रेट थे। १९३१ में वह बर्लिन-लिख्टनबर्ग में साम्यवादी युवक संगठन का नेता बन गया। मार्च, १९३३ में वह गिरफ्तार किया गया और वह सारा साल उसने सोनेन-

वर्ग नजरबन्दी कैम्प में बिताया। १६३४ में वह रिहा कर दिया गया और तत्काल ही वह नात्सियों के विरुद्ध साम्यवादी गुप्त संगठन में काम करने लगा। १६३५ में गेस्टापो को उसके संगठन का पता चल गया और वह प्राग भाग गया। वहां के सोवियत दूतावास की सहायता से वह मास्को जाने में सफल हो गया। प्रायः इसी समय मास्को आये हुए जर्मन साम्यवादी रूसियों के लिए परेशानी का कारण बनने लगे। उनमें रूसियों के विरोध के लक्षण दीख पड़ने लगे थे। इस पर उनके नेताओं की गिरफ्तारियाँ प्रारम्भ हो गईं। जेरेस तथा अन्य अवशिष्ट व्यक्ति अपने होटलों से निकाल दिये गये और उनकी जिन्दगी मुसीबत में पड़ गई। किसी को उनकी कोई फिक्र नहीं थी, कोई इन्हें काम नहीं देता था। एक-एक कर वे भी गिरफ्तार कर लिये गये। जिन लोगों में रूसियों के विरोध के चिन्ह दीख पड़े थे, उनमें से कोई भी एन० के० वी० डी० के पंजे से बच नहीं सका। १६३७ में जेरेस की भी बारी आ गई। उसे सोवियत नागरिक बन जाने का आदेश दिया गया, किन्तु उसने इन्कार कर दिया।

कुछ समय उसने लुब्यांका में और कुछ बुतिर्का में बिताया और अन्त में मिन्स्क में एन० के० वी० डी० की जेल में भेज दिया गया। एक रात इसे अपनी कोठरी से बाहर ले जाया गया और मास्को के जर्मन दूतावास द्वारा जारी किया गया जर्मनी में प्रवेश का एक अनुमति-पत्र दिया गया। इस अनुमति-पत्र के अनुसार, जो सिर्फ दो सप्ताह के लिए वैद्य था, वह नौए-बेंटशेन के रास्ते जर्मनी जा सकता था।

जेरेस चाहता तो पौलैंड में भागने की कोशिश कर सकता था और फरार हो सकता था। किन्तु वह अत्यन्त निराश हो चुका था। उसका श्रमिक क्रांति का स्वप्न भंग हो गया था। मास्को में जो समय उसने बिताया था, उसने उसकी आशाओं का महल ढा दिया था।

पोलेंड के रास्ते उसने यात्रा की और सीधा गेस्टापो के हाथों में जा पड़ा, जहां उसे बताया गया कि वे लोग उसकी इन्तजार ही कर रहे

थे। एक वर्ष तक वह हवालात में रहा, जहाँ उससे तरह-तरह के सवाल-जवाब और जिरह का सिलसिला जारी रहा। अन्त में नात्सियों ने उसे रिहा कर दिया। किन्तु उस समय तक उसका साम्यवाद का नशा उतर चुका था।

युद्ध के दिनों में वह सिपाही हो गया। १९४४ में रूसियों ने उसे लड़ाई में कैद कर लिया। दो वर्ष तक वह सोवियत रूस में कैद रहा। १९४६ में पुष्टिकारक भोजन के अभाव में अत्यन्त दुर्बल हो जाने के कारण उसे बर्लिन में रिहा कर दिया गया। ज्यों ही उसका शरीर स्वस्थ हुआ, उसने अपना बढ़ईगिरी का पुराना पेशा फिर अपना लिया। राजनीतिक जीवन में भाग लेना उसने बिल्कुल छोड़ दिया। एक दिन अचानक उसकी मास्को प्रवास के दिनों के एक पुराने साम्यवादी मित्र कार्ल जुंग्समान से भेंट हो गयी। जुंग्समान ने अब अपना नाम एरिक होनेकर रख लिया था और स्वतन्त्र जर्मन युवक आन्दोलन का नेता बन गया था।

होनेकर ने उससे पूछा—"आजकल तुम क्या कर रहे हो? यानी राजनीतिक क्षेत्र में तुमक्या कर रहे हो?"

"कुछ नहीं।"

"क्यों नहीं?"

"मेरी अब इसमें कोई दिलचस्पी नहीं।"

पन्द्रह दिन बाद ही एन० के० वी० डी० ने उसे गिरफ्तार कर लिया। सजा थी, पच्चीस वर्ष सपरिश्रम कारावास। और अपराध था, १९३७ की जिरह में सोवियत रूस के बारे में गेस्टापो को खबरें देना और इस प्रकार एक ऐसे संगठन की सहायता करना जिसे न्यूरेम्बर्ग के युद्धापराधी न्यायालय ने अपराधी ठहरा दिया था।

और सबसे अन्त में इस कैम्प में कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने युद्धोत्तर काल में किसी आन्तरिक राजनीतिक विश्वास के कारण नहीं,

वल्कि ग्रार्थिक कारणों से साम्यवादियों के विरुद्ध कार्रवाइयों में भाग लिया था। एक वार कैम्प में पहुँच जाने के वाद इन लोगों को एन० के० वी० डी० के हाथों में ग्रपने ग्रापको वेच देने में कोई हिचक नहीं होती। उनके नाम उस ग्रलिखित सूचि में दर्ज हैं, जिन्हें कयामत के दिन सजा दी जायगी।

अध्याय ५

यहूदियों की दुर्दशा

एक दिन सुबह दो कैदी, जो एक ही दिन पहले अपने शरीर की परीक्षा से छुट्टी पाकर कैम्प में आये थे, हमारे दल में शामिल कर दिये गये। वे पिछली गर्मियों में पकड़े गये थे और हाल में ही दोनों को पच्चीस-पच्चीस वर्ष की सज़ा मिली थी।

उनमें से एक कीव के नज़दीक का एक यूक्रेनी था। उसके आते ही उसके प्रदेश के लोगों ने उसे घेर लिया। वह वहाँ एक बड़े सामूहिक फार्म में रहता था। जब जर्मनों ने १९४१ में यूक्रेन पर कब्ज़ा किया तो उन्होंने उसे साम्यवादी दल का सदस्य होने के कारण गिरफ्तार कर लिया। किन्तु जल्दी ही उन्हें मालूम हो गया कि उससे किसी तरह के नुक़सान की आशंका नहीं है। वफादारी की शपथ लेकर उसे रिहा कर दिया गया।

करीब दस वर्ष बाद, सन् १९५० में, वे सभी रूसी नागरिक, जो जर्मनी के अधिकार के दिनों में जर्मनों द्वारा एक बार गिरफ्तार कर रिहा कर दिये गये थे, पुनः रूसियों द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये। हमारे यूक्रेनी साथी ने बताया कि उन सभी को पच्चीस-पच्चीस वर्ष के सपरिश्रम कारावास की सज़ा दी गई है।

दूसरा कैदी करीब ६० वर्ष की आयु का एक ठिगना आदमी था, उसका चेहरा प्रभावशाली और सौम्य था। सभी नवागन्तुकों की भाँति वह भी कैम्प के जीवन और तौर-तरीकों से बिल्कुल अनजान और फलतः बिल्कुल असहाय था। जब उसे औज़ार दिये गये तो उसने अच्छे औज़ार चुनने की ज़रा भी कोशिश नहीं की और जब हम काम पर

जाने लगे तो उसके पास सबसे निकम्मा बेलचा था। वह उसे औरों की भाँति कन्धे पर भी नहीं उठाये था, बल्कि हाथ में लेकर चल रहा था। यह स्पष्ट था कि बेलचे से काम करना तो दूर उसने ज़िन्दगी में कभी उसे उठाया भी नहीं होगा।

दल के नेता ने काम बांटा। हममें से चार को स्नान गृह के पीछे पड़े मलबे को छोटी-छोटी स्लेज गाड़ियों में भरकर ऐसी जगहों पर ले जाना था, जहाँ दूसरी इमारतें बन रही थीं।

बूढ़े ने बेलचे से मलबा इकट्ठा करना प्रारम्भ कर दिया। वह बेचारा बहुत भला मानस था, किन्तु इससे पहले जीवन में कभी भी उसने बेलचे से काम नहीं किया था। उसके यूक्रेनी साथी दाज़ुक ने उसका मज़ाक उड़ाते हुए कहा, "देखो यहूदी कैसे काम करता है!"

वह भी अन्य यूक्रेनियों की भाँति यहूदी-विरोधी था, हालांकि वह यहूदियों पर अत्याचार करनेवाले उन लोगों में से नहीं था जो यह शेखी बघारते हैं कि उन्होंने इतने यहूदी मारे हैं।

"उसे मेरे साथ कर दो।" मैंने दाज़ुक से कहा, "तुम मेरा लिथुआनियन साथी ले लो।"

लिथुआनियन बूढ़े से अच्छा काम करता था। इसलिए दाज़ुक राज़ी हो गया। मैंने बूढ़े से रूसी भाषा में कहा, "तुम मेरे साथ आ जाओ, हम दोनों इकट्ठे काम करेंगे।"

"बहुत अच्छा।"

हमने मलबे से भरा हुआ अपना ढोल लादा और स्लैज को आहिस्ता-आहिस्ता चढ़ाई पर खींचकर नई इमारत की जगह पर ले गये।

"क्या तुम बीमार हो?"

"मुझे दिल की कमज़ोरी की शिकायत है।"

हमने ढोल को उतार लिया और स्लैज को कोने में धकेल दिया। हम ब्लाक नं० ३१ में गये, जहाँ मेरा एक मित्र कोयला झोंकनेवाले खलासी का काम कर रहा था।

उसने पूछा, "तुमने चाय पी ली है?"

उसने हमें दो मग भरकर चाय दी। बूढ़े ने जेब से एक छोटी-सी थैली निकाली।

"क्या तुम कुछ चीनी लोगे ?" उसने कहा।

मेरे पास अब भी रोटी का एक टुकड़ा बचा था। उसने रोटी लेना पसन्द नहीं किया, किन्तु अन्त में राजी हो गया। अन्त में झिझकते हुए उसने पूछा, "तुम लटवियन हो ?"

"नहीं, जर्मन।"

उसके चेहरे से लगा कि इस उत्तर से उसे बड़ा आघात लगा है। मैं समझ गया कि वह क्या सोच रहा है और मैंने उसे इस आकस्मिक आश्चर्य से संभलने का मौका दिया। कुछ देर बाद निहायत रिवाजी तरीके से उसने पूछा, "तुम किस शहर के रहनेवाले हो ?"

"बर्लिन। और तुम ?"

"ओडेसा।"

मैंने कैम्प में कुछ कैदियों से ओडेसा में १९४१-४२ में यहूदियो के विरुद्ध हुए अत्याचारों के बारे में सुना था। हरेक यहूदी को, जो उस समय तक वहाँ से भाग नहीं गया था, जर्मनों ने मौत के घाट उतार दिया था। जब लाल सेना ने नगर पर फिर अधिकार किया तो यहूदियों को वहां सिर्फ सामूहिक कब्रें मिलीं, जिनमें उनके रिश्तेदार और मित्र दफनाये गये थे। निःसन्देह यह यहूदी, जिसका नाम मोइरेद्दीन था, इन सब बातों को विस्तार से जानता था। इसलिए किसी भी जर्मन से सामना होने पर उसके लिए उसके मन में क्रोध पैदा होना स्वाभाविक था। यह सिर्फ ओडेसा के यहूदियों का ही नहीं, यूरोप के ६० लाख अन्य यहूदियों का भी सवाल था।

इस पहले दिन की मुलाकात में हममें बहुत थोड़ी बातचीत हुई। हम अपनी स्लेज गाड़ियाँ लादकर नयी इमारतों की जगह पर पहुँचाते

रहे। मैंने इस बात का ध्यान रखा कि बूढ़े को ज्यादा काम न करना पड़े। जब हम एक दूसरे से विदा हुए तो वह कुछ झुका और बोला, "बहुत धन्यवाद।"

दूसरे दिन मैंने उसे कैम्प के जीवन के बुनियादी नियम समझाये।

१. जितना कम संभव हो, काम करो।

२. जितना अधिक खा सको, खाओ।

३. जितना आराम कर सको, करो।

४. जब मौका मिले शरीर को गर्म करने का यत्न करो।

५. किसी की बेहूदा बात बर्दाश्त मत करो।

६. यदि तुम पर कोई चोट करे तो एक क्षण भी हिचके बिना उस पर उलटी चोट कर दो।

"किन्तु मैंने अपने जीवन में कभी किसी इन्सान पर चोट नहीं की।" मोइरेट्टीन ने उत्तर दिया।

"यदि यहाँ तुम किसी पर चोट करोगे, तो वह इन्सान पर नहीं, इन्सानियत के कूड़े-कचरे पर चोट होगी। यहाँ तुम्हें जिन्दगी कम-से-कम उतनी मुश्किल तो लगेगी, जितनी जर्मनों की लगती है। अगर एक बार तुमने यहाँ बिना प्रतिरोध किये किसी का जुल्म सहन कर लिया तो फिर उसके जुल्मों का कोई अन्त नहीं रहेगा।

एक सप्ताह बाद उसका रद्दी कोयले ढोनेवाले दल में तबादला कर दिया गया। उसके लिये यह गन्दा काम था। पालियाँ बदलते समय मैं मोइरेट्टीन को रोज देखता। एक दिन वह नजर नहीं आया। मैंने उसके दल के लोगों से पूछा तो उन्होंने बताया, "मोइरेट्टीन को पांच दिन की सजा मिली है।"

"किस लिए ?"

"दल के नेता पर हमला करने के कारण।"

और तब उन्होंने मुझे सारी घटना सुनाई। दल के नेता ने एक दिन मोइरेट्टीन को लारी में रद्दी कोयले को फैलाने और उसे लारी से

गिरने से रोकने का काम सौंपा। यह सबसे रद्दी काम था। यह काम करनेवाले को सारे दिन धूल में खड़े रहना पड़ता था और काम खत्म होने तक वह बुरी तरह धूल से भर जाता।

मोइरेद्दीन ने दल के नेता से कहा, "मुझे तुम सबसे कठिन और सबसे रद्दी काम देते हो। मेरी उम्र ६२ वर्ष है और मैं तुम्हारे दल में सबसे बूढ़ा हूँ। यह काम किसी जवान आदमी को दो।"

इस पर तू-तू मैं-मैं हो गई। दल के नेता ने मोइरेद्दीन को धक्का दिया। मोइरेद्दीन ने बेलचा फेंक दिया और आश्चर्यजनक तेजी से अपने दुश्मन की जाकट पकड़कर उसे पीछे पड़े मलबे के एक ढेर पर फेंक दिया। इसके बाद उसने गन्दे कोयले का एक बड़ा-सा टुकड़ा उठाया और उसे वह उस पर फेंकने ही वाला था कि वह उठ खड़ा हुआ और कूदकर भाग गया।

यदि उस समय ड्यूटी पर तैनात अफसर ने सन्तरियों के कमरे से इस घटना को देख न लिया होता तो शायद यह घटना आई-गई हो जाती। उसने मोइरेद्दीन को बुला भेजा।

"तुमने अपने दल के मुखिया पर इस तरह हमला क्यों किया ?"

"मैं किसी को इस तरह अपने ऊपर हाथ रखने नहीं दे सकता।"

"सिर्फ इसलिए कि उसने तुम पर हाथ रखा, तुम्हें उसे मलबे के ढेर पर धक्का देने की आवश्यकता नहीं थी।"

"यह सोचना मेरा काम है, तुम्हारा नहीं।"

"मैं तुम्हें बताऊँगा कि यहाँ किसका काम है। अपने दल के मुखिया पर हमला करने के लिए तुम्हें पांच दिन के लिए जेल भेजा जा सकता है।"

मोइरेद्दीन को उसी दिन शाम को जेल भेज दिया गया। अब वह वहाँ से लौटा, उसका चेहरा नींद और थकावट के कारण उतरा हुआ था। मैंने उसे उसकी बहादुरी के लिए बधाई दी।

"तुम तो खुद बार कोचबा की तरह लड़े।"

इस घटना से मोइरेद्दीन की शोहरत हो गई। लोग कहने लगे, वह किसी को इस तरह अपने आपको हाथ नहीं लगाने देता। उसकी इज्जत होने लगी। उसके दल का मुखिया उससे खास तौर पर नम्रता से पेश आने लगा। उसने उसे फिर कभी कठिन या गन्दा काम नहीं सौंपा। कुछ दिन बाद जब एक दिन एक रूमानियन यहूदियों को गाली देने और कोसने लगा तो मोइरेद्दीन ने कसकर उसकी नाक पर घूंसा जमाया।

वोर्कुटा के कैम्पों में यहूदी विरोधी भावना उससे भी कहीं अधिक है, जितनी कि हिटलर के शासन में यहूदीविरोधी जर्मन मध्य वर्ग में रही होगी। यहूदी इन कैम्पों में अपने बहुत-से अत्यन्त क्रूर अत्याचारियों के साथ अगल-बगल रहते हैं।

उदाहरण के लिए कातचेन्को को लीजिये।

जर्मनों द्वारा अधिकृत कुछ इलाकों में जर्मनों ने स्वयं यहूदियों का कत्ले-आम नहीं किया, बल्कि उन्होंने वहीं के रहनेवाले लोगों में से कुछ वालंटीयर इकट्ठे कर उनमें यहूदियों को मारने के लिए हथियार बाँट दिये। कातचेन्को भी इन वालंटीयरों में से एक था। वोर्कुटा में ऐसे अनेक यहूदी-घाती वालंटीयर हैं।

स्टालिन ने मृत्यु से ठीक पहले जो आखिरी काम किये उनमें से एक सुयोजित यहूदी-विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ करना था। इस दिशा में उसके पहले कदमों पर मुश्किल से ही जनता की नजर पड़ी। उदाहरण के लिए सेना ने एक हुक्म जारी किया कि ऐसे सोवियत नागरिक, जिनके सोवियत रूस से बाहर जातीय राज्य हैं, सैकिंड-लैफ्टीनेंट से ऊँचा दर्जा नहीं पा सकते।

इस आदेश में यहूदियों का कोई जिक्र नहीं था। किन्तु इसका असर जर्मनों, यूनानियों और फिनों की भांति, जिन्हें कि सोवियत सरकार अविश्वसनीय समझती थी, उन पर भी पड़ा। इस आदेश का दृढ़ता से पालन किया गया है। उस दिन के बाद से आज तक लाल-सेना में न किसी यहूदी को तरक्की दी गई है और न कोई सैकिंड-

लैफ्टीनेंट के दर्जे से ऊपर जा सका है। कोई यहूदी रूसी सैनिक एकाडमी में दाखिल नही हो सकता।

यहूदियों के विरुद्ध आन्दोलन का सर्व प्रथम सार्वजनिक प्रयत्न था स्लान्स्की मुकदमा, जिसकी खबरें प्रावदा ने उसी तरह मजाक और घृणा के साथ छापी थीं, जैसे कि १९३६ से १९३८ तक रूस के विरोधी दल के नेताओं और कार्यकर्ताओं के मुकदमों की खबरें। इस मुकदमे का, जिसमें चैकोस्लोवाकिया के साम्यवादी दल के कितने ही नेताओं को जान से हाथ धोना पड़ा, इस्तेमाल यहूदियों की पृथक् राज्य की मांग, इजरायल और सामान्यत: यहूदियों के विरुद्ध प्रचार करने के लिए किया गया।

स्टालिन भली भाँति जानता था कि सोवियत रूस के भीतर उसका शासन कितने कच्चे आधार पर टिका हुआ है। वह जानता था कि उसे जनता का बहुत कम समर्थन प्राप्त है, और वह यह भी जानता था कि हर तरह की सरकार को कम-से-कम एक निश्चित मात्रा में जनता के समर्थन की अवश्य जरूरत होती है। उसे मालूम था कि रूसी जनता के मन में यहूदियों के विरुद्ध भावना भरी पड़ी है और क्योंकि यहूदी और साम्यवाद का परस्पर सम्बन्ध समझा जाता है, इसलिए जैसे-जैसे सामाजिक और राष्ट्रीय असन्तोष बढ़ता जाता है, लोगों में यहूदियों के विरुद्ध द्वेष भी तीव्रतर होता जाता है। स्टालिन को आशा थी कि यहूदियों के विरुद्ध स्वयं एक आन्दोलन खड़ा करके वह भी वही लाभ प्राप्त कर सकेगा, जो हिटलर ने प्राप्त किया। रूस की यहूदी-विरोधीं जनता को स्टालिन और कुछ नहीं दे सकता था, इसलिए स्टालिन ने उसकी हीनतर यहूदी-विरोधी भावना को तृप्त कर उसका हृदय जीतने की कोशिश की।

स्टालिन की मृत्यु ने इस घृणापूर्ण खेल का अन्त कर दिया। यहूदियों की जान कुछ समय के लिए बच गई। किन्तु यह बहुत संभव प्रतीत होता है कि स्टालिन द्वारा प्रारम्भ किये गये। परीक्षण की

एक-न-एक दिन पुनरावृत्ति होगी। जार ने भी जनता का ध्यान वास्तविक समस्याओं की ओर से हटाने के लिए ठीक यही उपाय बरता था। सोवियत रूस की जनता पहले हमेशा की अपेक्षा आज अधिक यहूदी-विरोधी है और निश्चय ही रूस की नई सरकार को भी उचित-अनुचित की बला स्टालिन या ज़ारों से किसी कदर अधिक नहीं है।

———

अध्याय ६

अस्पताल में

वोर्कुटा आने के बाद नवम्बर के प्रारम्भ तक इन तीन महीनों में मेरा वज़न २८ पौंड से अधिक घट गया था। हर दस दिन बाद जब हम स्नान करते तो मुझे अपने नंगे बदन पर अपोषण के कारण तेज़ी से बढ़ते हुए कमज़ोरी और ह्रास के चिह्न स्पष्ट दीख पड़ते। निरन्तर भारी-भारी वज़न उठाने के कारण मेरी आंतें उतर गई थीं। मुझे लगने लगा कि शायद इसके बहाने से कुछ आराम के दिन मिल जायें। मैं सर्जन के पास गया और उससे आपरेशन करने के लिए कहा।

"मैं आपरेशन नहीं कर सकता।" वह बोला, "इस तरह के आपरेशन जाड़ों में नहीं हो सकते।"

"क्यों नहीं हो सकते?"

"त्रोफिमोविच का आदेश है कि आंतों का कोई आपरेशन जाड़ों में न किया जाय।"

"अजीब बात है।"

"देखो, हर तीन या चार कैदियों में से एक को आंतें उतरने की शिकायत है। कठोर काम और पुष्टिकारक भोजन के अभाव के कारण कैम्प मे यह शिकायत आम है। किन्तु हर किसी को उसके आपरेशन के लिए जाड़े भर इन्तजार करना पड़ता है। आपरेशन का मतलब है अस्पताल में चार सप्ताह का आराम। अब समझे?"

दूसरे दिन मैं फिर अस्पताल गया।

"मेरी बाईं ओर की आंतों में दर्द है।"

उसने मुझे प्रमुख सर्जन लेवचेंको के नाम एक चिट लिख दी, जिसमें उसे मेरी परीक्षा करने के लिए कहा गया था। त्रोफिमोविच को

छोड़कर ग्रस्पताल के ग्रौर सब डाक्टरों की भाँति लेवचेंको भी कैदी ही था। हालांकि उसका व्यवहार रूखा था, फिर भी वह बुरा ग्रादमी नहीं था। जब उसने मेरी परीक्षा की तो मैंने उसे रूसी में कहा, "मुझे डर है, यह ग्रंदर की सिकुड़न के कारण है।"

लेवचेंको ने, जो भली भाँति जानता था कि मेरी बीमारी ग्रान्तरिक सिकुड़न से उतनी ही दूर है जितना कि वोर्कुटा पेचोरा से, निदान करके लिख दिया "तत्काल ग्रापरेशन ग्रावश्यक।"

उसी दिन शाम को मुझे नहला-धुलाकर ग्रौर हजामत कर ग्रापरेशन के रोगियों की बैरक में डाल दिया गया। जब लेवचेंको घूमता हुग्रा ग्राया तो मैंने उससे कहा, "मेरा दिल कमजोर है। क्या ग्राप मेहरबानी कर ग्रापरेशन करने से पूर्व मुझे डिजिटालिस (दिल को ताकत देने वाली एक दवा) दे सकते हैं?"

उसने स्वीकार कर लिया। यह दवा दस दिन चली। ग्रापरेशन के बाद स्वास्थ्य-लाभ व ग्राराम करने के लिए तीस दिन का समय निर्दिष्ट था। इस तरह मैं जनवरी, १९५१ तक खून जमा देनेवाले कड़कड़ाते जाड़े में काम करने की चिन्ता से मुक्त हो गया था।

मेरा पलंग छोटा, कम चौड़ा ग्रौर लकड़ी का पुराने ढंग का था। उस पर घास-फूस भरा एक गद्दा था जो पत्थर की तरह कड़ा था। करीब एक सप्ताह तक मैं लगातार सोता रहा। सिर्फ बीच-बीच में थोड़ी देर के लिए जागता। इसके बाद ग्राहिस्ता-ग्राहिस्ता ग्रत्यधिक थकान ग्रौर क्लान्ति का भाव, जो वोर्कुटा में हर कैदी पर बुरी तरह सवार रहता है ग्रौर जो ग्रति स्वल्प ग्राहार, ग्रत्यधिक परिश्रम ग्रौर ग्रपर्याप्त नींद का परिणाम है, दूर होने लगा।

जब निरन्तर सोते रहने से मेरी थकान मिट गई, तो मेरी भूख बुरी तरह भड़क उठी। लेकिन बीमारों के लिए सरकार की ग्रोर से जो राशन बंधा था वह काफी नहीं था। राशन इस सिद्धान्त के ग्राधार पर

दिया जाता था कि जो लोग काम नहीं करते उन्हें खाने को भी नहीं मिलना चाहिए ।

आपरेशन अपने आप में एक निहायत वहशियाना ढंग की चीर फाड़ था । लेवचेन्को ने एक साथी के प्रति मित्रता की भावना से ही मुझे अपने अस्पताल में दाखिल कर लिया था, किन्तु दुर्भाग्य से आपरेशन के लिए बेहोशी की दवा देने के मामले में उसकी वह मित्रता कायम नहीं रही । मैंने खुद अपने ज़माने में अपने हाथों से आँतों के कई आपरेशन किये हैं और रोगी के कमज़ोर होने से सारे शरीर को बेहोश करना असम्भव होने के कारण सिर्फ आपरेशन वाली जगह को ही सुन्न करके भी चीर-फाड़ की है, किन्तु मुझे ऐसी कोई घटना याद नहीं आती, जिसमें रोगी को दर्द अनुभव हुआ हो ।

लेवचेन्को ने आपरेशन की जगह की ओर जानेवाली नसों को सुन्न नहीं किया, उसने सिर्फ वहाँ की चमड़ी को ही सुन्न कर दिया और उसके बाद नश्तर से पेट का इतना बड़ा भाग काट दिया जितना कि कभी-कभी स्त्री का पेट चीरकर बच्चा निकालने के लिए काटना आवश्यक होता है । जिन नाड़ियों से खून बह रहा था, उन्हें बाँधने के बाद उसने दूसरी परत को सुन्न किया और काटा, फिर तीसरी को भी इसी तरह सुन्न किया और काटा । सारे आपरेशन के दौरान में वह मुँह पर कपड़ा बाँधे बिना मज़े से घाव के ऊपर ही सांस लेता रहा । यूरोप भर में कहीं भी आपरेशन करने का यह तरीका इस्तेमाल नहीं किया जाता । महान् रूसी सर्जन विश्नेव्स्की के नाम पर यह विश्नेव्स्की तरीका कहा जाता है । अन्त में लेवचेन्को ने अपनी मोटी उंगली आँतों के भीतर घुसेड़ दी ।

मैं दर्द के मारे करीब-करीब बेहोश हो गया । लेवचेन्को ने कटी हुई मांसपेशियाँ फिर सी दीं । जब वह बाहर की चमड़ी सीने लगा तब तक उसे सुन्न करने के लिये दी गई दवा का असर खत्म हो चुका था ।

उसने सात टांके लगाथे, उन सबसे मुझे जितनी पीड़ा हुई उतनी जिन्दगी भर में कभी किसी चीज़ से नहीं हुई थी।

ऑपरेशन के बाद नौवें दिन त्रोफिमोविच हमें देखने के लिए आई। लेवचेन्को ने रोगियों का उससे परिचय कराया। जब वह मेरे पास पहुँची तो बोली, "इसे छुट्टी दी जा सकती है।"

"असम्भव", लेवचेन्को ने उत्तर दिया।

"क्यों नहीं? तब वह यहाँ लेटे रहने के बजाय कुछ काम कर सकेगा........"

"इसका आपरेशन हुए अभी आठ दिन हुए हैं। अभी तक ज़ख्म सूखा नहीं है। यदि वह वजन उठायगा तो वह फिर फूट जायगा।"

त्रोफिमोविच ने उसे सन्देह की दृष्टि से देखा।

"केन्द्रीय चिकित्सा अधिकारियों का आदेश है" लेवचेन्को ने कहा, "कि हर्निया की बीमारी के आपरेशन के बाद कैदी चार सप्ताह तक आराम करें।"

वह बिना एक भी शब्द कहे चली गई।

"तुमने देखा, वह तुम्हारी ओर कैसी नज़र से देख रही थी?" मेरे पास के रोगी ने कहा, "अगर वह किसी नदी पर इसी तरह की नज़र डालती तो उसकी सब मछलियाँ एकदम मर जातीं।"

और वस्तुतः ही वह इसी तरह अनेक आदमियों को मार चुकी थी।

त्रोफिमोविच सप्ताह में दो बार अस्पताल आती और हर दफा वह मुझे ऐसी नज़र से घूरती जो छोटी मछलियों को मार सकती थी। आपरेशन के तीन सप्ताह बाद उसने कहा, "अब तो सचमुच ही इसे यहाँ लेटे-लेटे बहुत दिन हो गये हैं।"

यह अभी तक कमज़ोर है।" लेवचेन्को ने कहा, "इसका शरीर पर्याप्त आहार न मिलने के कारण कमज़ोर है।"

"अच्छी बात, एक सप्ताह और सही। किन्तु उसके बाद एक दिन भी नहीं।"

एक सप्ताह बाद उसने मुझे फिर पहले की ही काम की श्रेणी में रख दिया, यानी मैं दर्म्यानि ढंग के काम के योग्य था। मुझे खान के ऊपर के सिरे पर लकड़ी के यार्ड में काम करनेवाले एक दल में शामिल कर दिया।

इस नये दल में करीब-करीब सभी लिथुग्रानियन थे। ये सब देश के मुक्ति-युद्ध में लड़ते हुए पकड़े गये थे। ये लोग खूब तकड़े ग्रौर तन्दुरुस्त थे। पहली बात यह कि इन्हें नं० ३ राशन मिलता था जिसमें हर रोज ढाई पौंड रोटी होती थी। दूसरे, उन्हें घर से या लियुग्रानियन सहायता संगठन से खाने के सामान के पार्सल ग्राते रहते थे। ग्रौर तीसरे, वे लकड़ी चुरा ले जाते थे।

वोर्कुटा में खानों ग्रौर कैम्पों का प्रवन्ध ग्रलग-ग्रलग है। जब किसी कैम्प को कोई नई बैरक बनानी होती है तो उसे भी उसी तरह लकड़ी खरीदनी पड़ती है, जिस तरह खानों को ग्रपने गढ़ों को नीचे से थामने के लिए इस्तेमान करने को उसे खरीदना पड़ता है। इस लिहाज से कैम्प के ग्रधिकारियों ग्रौर कैदियों का हित एक ही हो जाता है। कैदियों का लाभ इसी में है कि उनके लिए नई ग्रौर बेहतर बैरकें बनें। इसलिए वे जो लकड़ी चुराकर लाते हैं, उससे नई बैरकें बनने पर उनका रहन-सहन भी सुधरता है ग्रौर उन्हें मुनाफा भी मिल जाता है।

मैं इन लिथुग्रानियनों के साथ रहना ग्रौर ग्रच्छी तरह काम करना चाहता था, किन्तु कर नहीं सका। जो इन्सान बीमार रह चुका हो ग्रौर जिसने कभी लकड़ी का काम न किया हो, उसके लिए यह काम बहुत भारी था। मैं जितना काम कर सकता था, करता था। एक सप्ताह तक मैंने ट्रकों से माल उतारा, पेड़ों के बड़े-बड़े तने इधर से उधर ले गया या ग्रारा चलाया।

"तुम काम में होशियार नहीं हो", मेरे लिथुग्रानियन साथियों ने कहा, "हम जानते हैं तुम डाक्टर हो, इसलिए हम तुमसे लकड़ी के यार्ड में ग्रच्छा काम करने की ग्राशा भी नहीं करते। जो हो, तुम

मेहनत करते हो, और वक्त आने पर तुम यह काम खूब सीख जाओगे।"

मैं स्वयं अनुभव करता था कि मैं इस तरह के काम के लायक कभी नहीं हो सकता। यहां कम काम करने से भी गुजारा नहीं हो सकता था, क्योंकि इस दल में काम का सामान्य स्तर इतना ऊँचा निर्दिष्ट किया गया था कि यदि दूसरी पाली के आने से पूर्व ही निर्दिष्ट काम समाप्त करना हो तो सबको बड़ी कड़ी मेहनत करनी पड़ती। यदि मैं अपना काम पूरा न करता तो दल के किसी और व्यक्ति को उसे पूरा करना पड़ता। लेकिन यह उनके लिए सम्भव नहीं था, क्योंकि उनके पास पहले ही काफी से अधिक काम था।

एक चीज़ सम्भव थी। अभी तक मैं दल के मुख्य भाग में शामिल था, जिसे भारी काम करना पड़ता था। किन्तु मैं इस बात की कोशिश कर सकता था कि मुझे हलका काम करनेवाले दल के बूढ़े और कमजोर लोगों में शामिल कर लिया जाय।

एक दिन शाम को मैं अपने इस्टोनियन दोस्त रिचर्ड के पास गया और उसे अपनी कठिनाई बतलाई।

"तो तुम क्या करना चाहते हो ?"

"मैं चाहता हूँ, तुम लकड़ी से मेरी कलाई तोड़ दो।"

"मुझे उम्मीद है, तुम सोच-समझकर ही कह रहे हो। जानते हो टूट जाने पर कलाई अकड़ जावेगी ?"

"कलाई अकड़ जाने पर फिर मुझे दर्म्याने ढंग के काम में नहीं लगाया जायगा।"

"अच्छा, जैसा तुम ठीक समझो। तो, आओ।"

मैंने पूरी तैयारी कर रखी थी। कैम्प में एक जगह ऐसी थी जहाँ चारों ओर बर्फ जम गई थी। वहाँ किसी की नजर पड़ना सम्भव नहीं था। वहाँ मैंने बरफ के भीतर एक भारी लक्कड़ छिपाकर रखा हुआ था। मैंने अपना हाथ बाहर की एक अंगीठी पर रखा और अपनी कलाई पर रस्सी का एक टुकड़ा रखकर रिचर्ड से बोला, "ठीक यहाँ।"

"कितने जोर से प्रहार करूँ ?'

"जितना तुममें जोर है उसके तीन-चौथाई से ।"

"अच्छी बात ।"

उसने लक्कड़ ऊपर उठाया । मैंने आंखें बंद कर लीं ।

मेरा सारा हाथ चोट से सुन्न पड़ गया । प्रारम्भ में दर्द सह्य मालूम हुआ, किन्तु बाद में हालत बद से बदतर होती गई । मैं जाकर अपनी बैरिक में लेट गया और साढ़े सात बजने की इन्तजार करने लगा, जबकि हमारा दल रात की पाली के लिए उठता था । सुबह पांच बजे तक मैं सारी रात काम करता रहा । उसके बाद मैं मुख्य ओवरसीयर के पास गया और उससे कहा कि मेरा हाथ कुचल गया है ।

"मुझे दिखाओ ।"

मैंने अपने रूईदार दस्ताने में से अपना हाथ बाहर निकालकर दिखाया । रिचर्ड की चोट कलाई के बजाय हाथ की पीठ पर पड़ी थी । हाथ सूजकर बेडौल हो गया था ।

"यह कब हुआ ?"

"करीब आधी रात को ।"

"तुमने पहले इसकी खबर क्यों नहीं दी ?"

"उस समय दर्द बहुत नहीं था । मैंने सोचा, चोट ज्यादा नहीं है ।"

"मेरे साथ प्राथमिक सहायता-केन्द्र में चलो ।"

हम प्राथमिक सहायता केन्द्र में गये । डाक्टर ने मेरे हाथ की सूजन देखी और मुझ पर सन्देह से भरी नजर डाली । उसके पास हर रोज ही ऐसे कैदी आते थे जो स्वयं अपने आप को चोट मार लेते थे ।

"क्या तुम्हारी इस दुर्घटना का कोई गवाह है ?"

"जितने चाहो उतने ।"

"हाथ की बीच की हड्डियाँ टूट गई हैं । फिलहाल वह काम के लायक नहीं है", डाक्टर ने कहा, हमें दुर्घटना की रिपोर्ट लिख लेनी चाहिए ।"

ओवरसीयर यह नहीं चाहता था। यदि उसके दल में एक भी दुर्घटना न हो तो उसे दूध, तम्बाकू या चीनी का अतिरिक्त राशन इनाम में मिलता था। इस दुर्घटना का नतीजा यह होता कि एक सप्ताह के लिए वह उच्च वर्ग के इन विशेषाधिकारों से वंचित हो जाता।

"मेरी बात सुनो", उसने मुझसे कहा, "हम इस मामले को आपस में ही निबटा लेंगे। तुम अस्पताल जाने के बजाय इसी डाक्टर को यहां अपना इलाज करने दो। मैं तुम्हें दस दिन की छुट्टी दे दूंगा। तुम इसी दल में बने रहोगे और नं० ३ राशन लेते रह सकोगे। दस दिन बाद में तुम्हें हल्का काम दे दूंगा जिसे तुम अपने हाथों से कर सकोगे।"

मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं थी। अगले दिन शाम को मैं अपनी बैरक में ही रहा और मेरी दस दिन की छुट्टी शुरु हो गई। एक बार फिर मैं लगातार कई दिन तक आराम की नींद सोया। इसके बाद मुझे खूब आराम महसूस होने लगा। म अपनी शाम अपने दल के लिथुआनियन साथियों क साथ, उनकी छुट्टी के दिनों में, बातचीत कर बिताने लगा।

अध्याय ७

वोकुंटा में विभिन्न जातियाँ

कैम्प में संख्या की दृष्टि से सबसे अधिक युक्रेनियन थे। पैंतीस सौ कैदियों में से उनकी संख्या अठारह सौ थी। इनमें से सत्तर से अस्सी प्रति शत तक पश्चिमी युक्रेन के थे, जो १९३९ तक पोलैंड का एक भाग था। लेम्बर्ग—यूक्रेनियन भाषा में ल्वोव—उसकी राजधानी थी।

वोर्कुटा में पूर्वी यूक्रेनियनों की अपेक्षा पश्चिमी यूक्रेनियनों की अधिक संख्या के अनेक कारण थे, किन्तु उनमें से सबसे मुख्य यह था कि रूसियों को पूर्वी यूक्रेन में राजनीतिक विरोधियों को विनष्ट या कम करने के लिए कई वर्ष का समय मिल गया था।

इस बात का ठीक-ठीक अनुमान लगाना संभव नहीं है कि सोवियत सरकार ने यूक्रेन को सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टि से पूर्णतः अपना गुलाम बनाने में कितने लोगों का खात्मा किया, किन्तु जिन लोगों ने सन् १९१७ से इस सारी प्रक्रिया को अपनी आँखों से देखा है, उनका अनुमान नब्बे लाख का है। इनमें अधिकतर संख्या उन किसानों की है जिन्हें खेती के सम्मूहिकीकरण के समय गिरफ्तार या निर्वासित किया गया। इसके अलावा तीस लाख और आदमी सन् १९३२ के भयानक दुर्भिक्ष में काल कवलित हो गये।

१९४१ तक सरकार ने यूक्रेन का सोवियतीकरण करने में कोई कसर नहीं रखी। किन्तु इसमें वह कितनी असफल रही, इसका पता १९४१ की गर्मियों में लगा जबकि जर्मन आक्रमण के बाद यूक्रेन का हर आदमी अपने पिछले अत्याचारी शासकों के विरुद्ध शस्त्र उठाने के लिये तैयार हो गया। किन्तु जल्दी ही यह ज़ाहिर हो गया कि हिटलर का इरादा यूक्रेन को मुक्त करने का नहीं, वरन् सोवियत रूस की

अत्याचारपूर्ण प्रणाली के बजाय अपनी निज की अत्याचारपूर्ण प्रणाली उन पर लाद देने का था।

एक यूक्रेनियन अफसर ने मुझसे कहा था, "हमारा देश साम्यवादियों के खिलाफ लड़ने के लिए पचास लाख आदमी देने को तैयार था—सब प्रशिक्षित और अव्वल दर्जे के सिपाही, जो साम्यवाद को एकदम कुचल डालने को तैयार थे। ये पच्चास लाख आदमी होते तो न जर्मनों को मास्को से वापस लौटना पड़ता और न स्टालिनग्राड में उनकी हार होती। साम्यवाद उससे बहुत पहले ही अतीत की वस्तु बन जाता। किन्तु ये पच्चास लाख आदमी तभी लड़ते जबकि उन्हें पता होता कि वे अपने देश की आज़ादी के लिए लड़ रहे हैं, न कि सिर्फ एक नई गुलामी के लिए।

अन्त में उन्होंने अपने आपको छापामार दलों में परिणत कर लिया और दो मोर्चों पर—रूसियों के खिलाफ भी और जर्मनों के खिलाफ भी—लड़ना शुरु कर दिया। उनके दुर्भाग्य की इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है। वर्षों तक वे बहादुरी से लड़ते रहे और जब तक सम्भव हुआ, उस स्थिति पर डटे रहे जिससे सैनिक या राजनीतिक दृष्टि से बच निकलने की कोई सूरत नहीं थी।

जर्मनों के प्रति उनका रवैय्या अमित्रतापूर्ण नहीं है, किन्तु विरक्तिपूर्ण अवश्य है। युद्ध में उनसे यूक्रेनियों को गहरी निराशा हुई और हिटलर द्वारा जर्मन कारखानों में काम करने के लिए निर्वासित किये गये यूक्रेनियनों के प्रति दुर्व्यवहार को वे कदापि नहीं भूल सकते। रूसियों ने पश्चिमी देशों में लोगों की अत्यन्त दयनीय परिस्थितियों का प्रचार करने के लिए इसका खूब लाभ उठाया।

आज यूक्रेनियनों की स्वभावतः दो कारणों से अमरीकियों के प्रति सहानुभूति और आकर्षण है।

"पहिला यह कि आज सिर्फ अमरीकी ही सोवियत शासन को खत्म करने की स्थिति में हैं और दूसरा यह कि यूक्रेनियों को आज़ादी

न देने में उनका कोई स्वार्थ नहीं है। उन्होंने इस बात का काफी सबूत दे दिया है कि वे अन्य राष्ट्रों के आत्म-निर्णय के अधिकार का आदर करते हैं। यह मानने का कोई कारण नहीं है कि वे यूक्रेनियनों के साथ भी वैसा ही बर्ताव नहीं करेंगे।"

"पश्चिमी यूक्रेन के लोग सोवियत शासन के सबसे कट्टर शत्रु हैं। उन्हें पश्चिम की स्वतन्त्रता का अनुभव है, भले ही वह उन्होंने "पोलैंड के शासन" में प्राप्त किया है। किन्तु वे इस स्वतन्त्रता का मूल्य जानते हैं। पश्चिमी यूक्रेन के बुद्धिजीवी वर्ग ने बहुत हद तक यूरोप में शिक्षा प्राप्त की है। वे प्राग, जूरिख, पेरिस और बर्लिन के बारे में जानते हैं। आज सोवियत शासन पश्चिमी यूक्रेन में वही नीति बरत रहा है, जो वह पूर्वी यूक्रेन में सन १९१७ से बरतता रहा है। उसका पहला काम था कृषि के सम्मूहिकीकरण का आदेश जारी करना; और इस आदेश का बड़ी बेरहमी से पालन किया गया। पश्चिमी यूक्रेन के किसान से उसकी जमीन छीन ली गई और उसे बलात् सामूहिक कृषि में शामिल कर लिया गया। समूची जनता ने इसका विरोध किया। अन्त में "सम्पन्न व्यक्तिगत किसानों" और "विध्वंसकारियों" का बड़े पैमाने पर निर्वासन प्रारम्भ हुआ। दूसरा आन्दोलन पश्चिमी यूक्रेन के बुद्धिजीवी वर्ग के खिलाफ किया गया। अध्यापकों, डाक्टरों और पिछले प्रशासन के सदस्यों की सामूहिक गिरफ्तारियाँ हुईं। यह समस्त पश्चिमी यूक्रेनियन जनता के सिर कलम कर देने का प्रयत्न था। किन्तु इन सबके बावजूद उसे पश्चिमी यूक्रेनियनों से अपनी नीति स्वीकार कराने में उससे अधिक सफलता नहीं मिली जितनी कि १९४१ में पूर्वी यूक्रेन में मिली थी।

सारा यूक्रेन लड़ाई का इन्तज़ार कर रहा है, जिसके बिना, वह समझता है, उसे आज़ादी नहीं मिलेगी। इस लड़ाई में उन्हें भारी नुकसान होगा, परन्तु यूक्रेनियन लोग यह नुक्सान उठाने को तैयार हैं। उन्होंने महसूस कर लिया है कि इसके सिवाय आज़ादी का और कोई उपाय नहीं है।

जब वह शुभ दिन आयगा, हज़ारों देशभक्त लड़ाके जंगलों में चले आयेंगे, जहाँ उनके हथियार गड़े हुए हैं, और सारा यूक्रेन विद्रोह का अखाड़ा बन जायगा।

"हम हथियार चाहते हैं, सिर्फ हथियार!" वे बार-बार कहते हैं, "बाकी काम हम स्वयं कर लेंगे।"

उनके बारे में जानकारी रखनेवाला कोई भी व्यक्ति यह समझ सकता है कि वे झूठी शेखियां नहीं बघारते।

मेरे वक्त में कैम्प नं० ६/१० में साढ़े तीन हज़ार कैदियों में से करीब अठारह सौ यूक्रेनियन थे। अन्य जातियों के लोगों की संख्याएँ इस प्रकार थीं—लगभग आठ सौ लिथुआनियन, तीन सौ लटवियन, तीन सौ रूसी, दो सौ इस्टोनियन और एक सौ नब्बे जर्मन (जिनमें से एक सौ बीस खास जर्मनी से लाये गये और शेष सत्तर सोवियत रूस से)। किन्तु कैम्प में विभिन्न जातियों के लोगों की सूचि यहीं समाप्त नहीं हो जाती। कुल छत्तीस जातियों के लोग थे। उनकी पूरी सूचि लगभग इस प्रकार थी।

तीस जार्जियन, जिनसे बातचीत करने से आपको अनुभव होगा कि शायद स्टालिन ही जार्जिया का एकमात्र साम्यवादी था।

पच्चीस आर्मीनिया, जिनमें से बहुत-से यूनान और मिस्र के रहने वाले थे, जिन्हें बहुत बड़े-बड़े प्रलोभन देकर वहाँ से सोवियत रूस लाया गया था।

बीस पोल, जिनमें से अधिकतर वे लोग थे जो युद्ध के दिनों में पोलिश प्रतिरोध आन्दोलन की ओर से जर्मनों के खिलाफ लड़ चुके थे।

बीस रूमानियन, जिनमें कुछ कोद्रेनु के आयरन गार्ड के भूतपूर्व सदस्य थे।

पन्द्रह सोवियत यूनानी, जिनके पूर्वज दो हजार वर्ष पूर्व एशिया में जा बसे थे।

दस हंगेरियन, जो अधिकतर भूतपूर्व सैनिक अधिकारी थे और हंगरी पर रूस का कब्जा हो जाने के बाद प्रतिरोध आन्दोलन में शामिल हो गये थे। इनमें से कुछ कार्डिनल मिन्दजेन्ती के मित्र भी थे।

दस आस्ट्रियन, जिनमें शुत्जबुंड के भूतपूर्व सदस्य भी थे जो १९३४ की समाजवादी क्रान्ति के बाद रूस में आ बसे थे।

आठ चीनी, जो पहले च्यांग काई-शेक की सेना में अफसर थे।

छः जापानी, जो जापान के सबसे उत्तरवर्त्ती द्वीप होक्काइदो में मछली पकड़ने का व्यवसाय करते थे, किन्तु एक तूफान में फंसकर सोवियत रूस के तट के पास आ पड़ने से एक गश्ती दल द्वारा गिरफ्तार कर व्लाडीवोस्टोक लाये गये थे और जिन्हें बाद में जासूसी के अभियोग में पच्चीस वर्ष की सजा दी गई थी।

पाँच फिन।

तीन यूगोस्लाव।

दो दक्षिण कोरियन।

दो ईरानी, जो युद्ध के बाद रूसियों के अस्थायी अधिकार के दिनों में उत्तरी ईरान में पकड़े गये थे। वे ईरानी प्रशासन के सदस्य थे और उन्हें उसी तरह अपहरण किया गया था जैसे रूसी बर्लिन में प्रशासन के सदस्यों का अपहरण करते हैं।

दो डच, जो युद्ध के बाद रूसी क्षेत्र में पकड़े गये थे।

एक फ्रांसीसी, जिसका नाम रोजर मार्क्वेट था और जो हिटलर के हाथों निर्वासित होकर आया था और जिसने युद्ध के बाद भी रूसी क्षेत्र में बने रहने की भूल की थी।

एक अमरीकी, और एक तिब्बती।

अमरीकी एक नौजवान पत्रकार था। पहले वह साम्यवादी था और अपनी इच्छा से ही मास्को गया था, किन्तु अमरीकी दूतावास के साथ सम्पर्क होने के कारण उसे जासूसी के अभियोग में पच्चीस वर्ष की सजा दी गई थी।

इसके अलावा सोवियत रूस की भी विभिन्न जातियों के लोग वहां थे; मसलन कजाक, उजबेक, मोलदावियन, किरगीज, ताजिक, तुर्कमेन, वशकीर, मंगाल, मोर्दविन, तातार, ताकुत, सरकेशियन।

दो कैदी वोर्कुटा के वहुत नजदीक के थे। वे कोमी थे। जब मैंने उनसे पूछा कि वे लोग वहां से भाग क्यों नहीं गये तो उन्होंने उत्तर दिया, "यह प्रश्न ही व्यर्थ है। किसी के भी भागने की गुंजायश नहीं है।"

श्रौर उन्हें तो यह वात मालूम होनी ही चाहिए।

मैंने बाल्टिक राज्यो के कैदियों में से बहुतों को अपना मित्र वना लिया था। ये राज्य भी आज अपने आपको यूक्रेन की-सी ही दयनीय स्थिति में पा रहे हैं।

मेरा लटवियन कैदी मित्र मुझसे अपने देश के बारे में बातें किया करता था।

सोवियत रूस में एक कहावत है "लेनिन ने यहूदियों की बुद्धि, रूसियों की मूर्खता और लटविया के साहस से क्रान्ति की रचना की।"

लटविया के रूसियों के साथ राजनीतिक झगड़े का इतिहास गृह-युद्ध से शुरू होता है जबकि नवोदित लटवियन राज्य को बोल्शेविकों से आत्म-रक्षा के लिए लड़ना पड़ा था। दो शताब्दियों तक लटविया की आन्तरिक नीति कट्टर बोल्शेविक-विरोधी नीति रही। १६४० में जब रूसियों ने उस पर कब्जा कर लिया तो उन्होंने तुरन्त उन सब लोगों को हटाना शुरू कर दिया जो खतरनाक प्रतीत हुए या जिनके बारे में यह संभावना हुई कि वे एक "वास्तविक लोकतन्त्रीय प्रणाली" के निर्माण में सहयोग नहीं करेंगे।

किन्तु उस समय से १६४१ की ग्रीष्म ऋतु तक उन्हें उस नीति को विकसित करने का समय नहीं मिला जिसे वे उसके बाद से बराबर प्रयुक्त करते आये हैं। इस नीति की तीन विशेष बातें हैं (१) लटविया की आधी आबादी का साइबेरिया और मध्य एशिया में निर्वासित करना,

(२) युद्ध के दिनों में सोवियत रूस के विरुद्ध लड़नेवाले लाखों लटवियनों को इन श्रम कैम्पों में काम करने की सजाएँ देना, और (३) लाखों रूसियों को लटविया में ले जाना। उदाहरण के लिए रीगा में, जिसकी आबादी पहले तीन लाख थी, आज दस लाख रूसी आबाद हैं। हाल के वर्षों में सोवियत-विरोधी कार्रवाइयों के अपराध में वोर्कुटा भेजे गये सभी लटवियनों का कहना है कि रीगा आज पूर्णतः रूसी शहर बन गया है। रूसी भाषा की ही स्कूलों में प्रधानता है। अधिकतर थियेटरों में रूसी नाटक होते हैं। पांच करोड़ यूक्रेनियनों का जो "रूसीकरण" करना सम्भव नहीं हुआ और समस्त सोवियत रूस में फैले ४ करोड़ से अधिक जर्मनों का जो "रूसीकरण" करने में एक पीढ़ी लग जायगी, वही रूसीकरण आज लटविया में पूर्ण रूप में दीख पड़ रहा है। रूसियों और लटवियन कन्याओं के, जो अपनी सुन्दरता के लिए मशहूर हैं, विवाह आम होते जा रहे हैं, सिर्फ इसलिए कि सामूहिक पैमाने पर निर्वासन के कारण लटवियनों की संख्या वहां निरन्तर घटती जा रही है।

राजनीतिक दृष्टि से कहा जाय तो जो बात युक्रेनियनों के बारे में सही है, वही लटवियनों के बारे में भी सही है। उन पर साम्यवाद का रंग नहीं चढ़ सकता, क्योंकि उन्होंने उसका असली रूप देख लिया है।

सोवियत रूस के कब्जे से पूर्व के वर्षों में लटवियनों ने अपने देश को काफी उन्नत कर लिया था और इस बात पर वे गर्व भी करते हैं, अहंकार नहीं। उन्होंने डेनमार्क को अपना आदर्श बनाया था, और संसार का घटना-चक्र यदि उनके लिए इतना क्रूर सिद्ध न होता तो उनका जीवन-स्तर आज डेनमार्क के लोगों के स्तर से बहुत नीचा न होता।

अस्पताल में एक सप्ताह तक मेरे साथ के बिछौने पर दोपांत का एक इस्टोनियन भी था। उसका नाम था रिचर्ड। वह जर्मन बहुत अच्छी बोल सकता था।

इस्टोनियन लोग भी लटवियनों की भाँति रूसियों के कट्टर विरोधी हैं। रिचर्ड रूसी भाषा का एक भी शब्द नहीं बोलता था। मैंने उससे पूछा कि वह कितने वर्ष से कैम्प में था।

"६ वर्ष से।"

"तब तुमने रूसी भाषा क्यों नहीं सीख ली ?"

"मैं सीखना ही नहीं चाहता।"

यह प्रवृत्ति इस्टोनियनों में ग्राम तौर पर पाई जाती है। उनकी रूस-विरोधी भावना इतनी प्रबल है कि वे "राजकीय भाषा" तक नहीं सीखना चाहते।

रिचर्ड खान में काम करता था। यह ग्रावश्यक था कि वह वहाँ ग्रपने दल के साथियों के साथ ग्रच्छी तरह बातचीत कर सके। वह बहुत ग्रच्छा काम करता था, इसलिए उनकी दृष्टि से वह बड़ा महत्त्व-पूर्ण व्यक्ति था। वे नहीं चाहते थे कि वह उनसे ग्रलग कर किसी ग्रन्य दल में शामिल कर दिया जाय।

"तब तुम उन्हें ग्रपनी बात समझाते कैसे हो?" मैंने उससे पूछा।

"इस्टोनियन भाषा में। रूसी भी मुझे काम की सब बातें इस्टोनियन भाषा में बता देते हैं। उन्हें वह सीखनी पड़ती है। इसके सिवाय उपाय भी क्या है?"

कैम्प में सबसे ग्रच्छा काम इस्टोनियन ही करते हैं। उनका मेहनती स्वभाव उनके जातीय चरित्र का ही एक ग्रंग है। वे बहुत कम बात करते हैं ग्रौर परिश्रमी व ग्रात्मनिर्भर होते हैं। वे ग्रपने घर के लोगों से काफी सम्पर्क बनाये रखते हैं। सम्भवतः लिथुग्रानियनों को छोड़कर उन्हीं को कैम्प में सबसे ग्रधिक सूग्रर का मांस मिलता है। ग्रस्पतालों में भेंट-मुलाकात करनेवालों को ग्राने की ग्रनुमति नहीं होती, इसलिए उसके दूसरे इस्टोनियन साथी खिड़की की राह उसे सूग्रर का मांस पहुँचा देते थे ग्रौर वह उसमें से कुछ हिस्सा मुझे भी दे देता था।

इस्टोनियन कैदी कैम्प में बहुत लोकप्रिय हैं, क्योंकि वे बड़े शान्त-प्रकृति, कठोर परिश्रमी और कट्टर साम्यवाद-विरोधी हैं। कोई भी इस्टोनियन रूसियों को अपने आपको हाथ नहीं लगाने देता। मैंने एक घटना सुनी थी जो मेरे कैम्प में आने से कुछ समय पूर्व वोर्कुटा में एक इमारत के निर्माणस्थल पर घटी थी।

एक रूसी ओवरसीयर का, जो वोर्कुटा का "स्वतन्त्र" नागरिक था, एक इस्टोनियन युवती से झगड़ा हो गया, जिसमें उसने उस युवती पर प्रहार कर दिया। दूसरे दिन वह उस रूसी ओवरसीयर की छोटी-सी झोंपड़ी में गई और भीतर से दरवाजा बन्दकर उससे शान्ति से बोली, "अगर तुम ईश्वर में विश्वास रखते हो तो अपनी अन्तिम प्रार्थना कर लो, क्योंकि कल तुमने मुझ पर जो प्रहार किया था, उसका बदला लेने के लिए मैं तुम्हें अभी मार डालूंगी।"

यह कहकर उसने अपनी जाकट में से एक कुल्हाड़ा निकाल लिया।

प्रार्थना करने के बजाय रूसी उस पर टूट पड़ा। लड़की एक तकड़े किसान परिवार की कन्या थी। वह कुल्हाड़े का इस्तेमाल करना खूब जानती थी। उसने उसी सफाई से सधा हाथ चलाकर उसकी खोपड़ी के दो टुकड़े कर दिये जिस सफाई से किसी समय वह अपने घर के पीछे के आंगन में लकड़िया चीरा करती थी।

रूसी ऐसे लोगों से कैसे निबट सकते हैं? इसलिए उनके पास उन्हें निर्वासित करने का उपाय ही शेष रह गया है और वही वे करते हैं। १९४० से, जबकि इस्टोनिया पर रूसियों का कब्जा हुआ, जून, १९४१ तक दो लाख इस्टोनियन साइबेरिया भेजे गये। १९४४ में निर्वासित किये गये लोगों की संख्या इस्टोनिया की पुरानी ११ लाख की जनसंख्या का आधा थी।

वोर्कुटा के अपने निवास के पहले तीन महीनों में रूसी कैदियों से (जिनकी संख्या कैम्प नं० ९/१० में तीन सौ के लगभग थी) मेरा कुछ विशेष परिचय नहीं हुआ। मेरे दो-एक रूसी मित्र अवश्य थे, किन्तु मुझे

इस बात की जानकारी नहीं थी कि रूसियों का भी यहाँ कोई अलग दल है। यह जानकारी बाद में तब हुई जबकि कैम्प में मेरी आँखों के सामने घटने वाली बहुत-सी चीजें पहली बार मेरे ध्यान में लाई गई। इस बीच में रूसियों में और उस शासन में कोई फर्क नहीं करता था जिसने हमें बन्दी बना रखा था और इसीलिए मैं उनसे दूर रहता था। कई रूसी ऐसे थे जो इस बात को छिपाते नहीं थे कि कैदी बन जाने पर भी साम्यवाद में उनकी आस्था शिथिल नहीं हुई है। कुछ अन्य रूसियों के बारे मे यह मशहूर था कि वे कैम्प में एन० के० वी० डी० के भेदियों के रूप में काम करते हैं। बाकी लोगों के पास औरों से अलग रहने के पर्याप्त कारण थे।

अध्याय ८

डाक्टर के रूप में मेरा काम

मैं जब वोर्कुटा आया था तब मेरे मन में एक क्षीण-सी आशा थी कि शायद मुझे यहाँ डाक्टर के रूप में काम करने की अनुमति मिल जाय, किन्तु मेरे पल्ले सिर्फ निराशा ही पड़ी। कैम्प के साढ़े तीन वर्ष के जीवन में मुझे कभी भी डाक्टरी की प्रेक्टिस का लाइसेंस नहीं मिला। इसके दो कारण थे। पहला यह कि एन० के० वी० डी० को भय था कि विदेशी डाक्टर अपनी स्थिति का लाभ उठाकर "औद्योगिक विध्वंस" कर सकते हैं। कैम्प में किसी भी डाक्टर के लिए अपनी जांच के परिणामों को अधिक अत्युक्ति के साथ बताना और रोगियों का ऐसा निदान कर देना संभव है, जोकि तथ्यों के अनुकूल न हो। उदाहरण के लिए डाक्टर अक्सर रोगी को "सूखी प्लुराइटिस" की बीमारी बता देते हैं जो मुख्यतः रोगी के अपने बयान पर ही निर्भर है और जिसकी पुष्टि करना बड़ा कठिन है।

किन्तु इसके अलावा एक बात और भी थी और वह यह कि मेरे साथी कैदी ही मेरे प्रैक्टिस करने के विरुद्ध यथा शक्ति प्रयत्न करते रहते थे। उनका तर्क बिल्कुल स्पष्ट था, कैम्प में डाक्टरों की संख्या जरूरत से अधिक है। हरेक डाक्टर को, जो अस्पताल में काम नहीं करता "साधारण काम" में लगा दिया जाता है। यदि कैम्प में मौजूद रूसी डाक्टरों से कहा जाय कि वे इन दो चीजों में से किसी एक को चुन लें कि या तो वे स्वयं मकान बनाने का काम स्वीकार कर जर्मन डाक्टर को अस्पताल में डाक्टरी के काम पर भेज दें अथवा स्वयं अस्पताल में डाक्टर का काम स्वीकार कर जर्मन डाक्टर को इमारत बनाने के काम में जात दें, तो निःसन्देह वे दूसरे विकल्प को ही चुनेंगे। डाक्टर लोग

कैम्प के उच्च भद्र वर्ग में समझे जाते हैं। अस्पताल में उनके अपने अलग छोटे-छोटे कमरे होते हैं और उन्हें अस्पताल की रसोई में से अतिरिक्त राशन भी मिलता है। उनका काम ऐसा है कि उन्हें अपना रहन-सहन का स्तर ऊँचा करने के लिए हर तरह का मौका मिलता है।

किन्तु वस्तुतः कम्प में मेरी खूब अच्छी गैरकानूनी प्रैक्टिस चलती थी, क्योंकि बहुत-से कैदी मेरे पास सहायता लेने के लिए आया करते थे। उनमें से बहुतों को युद्ध-काल में जर्मन चिकित्सकों का अच्छा अनुभव था और वे जानते थे कि जर्मन डाक्टर रूसी डाक्टरों से अधिक प्रशिक्षित होते हैं। इस प्रकार कैदियों के आम स्वास्थ्य की तस्वीर मेरे सामने उतनी ही स्पष्ट थी जितनी कि बाकायदा मैडिकल सर्विस में काम करनेवाले डाक्टरों के सामने।

वोर्कुटा में कैदी जिन दो मुख्य बीमारियों से पीड़ित थे वे थीं दिल की कमजोरी और तपेदिक। कैदियों के मन और शरीर पर जो बहुत भारी बोझ पड़ता है वह जल्दी ही उनमें से बहुतों पर रक्त चाप के रूप में प्रकट हो जाता है। रक्त चाप कभी-कभी इतना बढ़ जाता है कि किसी यूरोपीय डाक्टर को तो वह असम्भव ही प्रतीत होता। कई कैदियों का रक्त चाप तो २४० से २५० मिलीमीटर तक होता है। क्योंकि इस शिकायत के कारणों को अर्थात् उन परिस्थितियों को जिनमें कैदी रहते हैं, दूर करना सम्भव नहीं है, इसलिए कोई उनकी कुछ सहायता नहीं कर सकता। वे हमेशा बड़े तीव्र सिर दर्द से पीड़ित रहते हैं, जो इस ध्रुवीय क्षेत्र में वायुमंडल के दबाव में बहुत अधिक उतार-चढ़ाव के कारण और भी बढ़ जाती है और अक्सर असह्य हो जाता है। इस प्रकार के मामलों में अन्तिम परिणाम हमेशा मस्तिष्क का पक्षाघात होता है जो दस में से नौ कैदियों की मृत्यु का कारण होता है।

व्यापक तपेदिक का कारण कैदियों की बैरकों में अत्यधिक भीड़ और रोग-निवारक परिस्थितियों का अभाव है। दस से पन्द्रह फी सदी तक कैदी या तो उग्र तपेदिक से पीड़ित हैं या अभी-अभी उससे मुक्त

होकर निरन्तर डाक्टरों की देखरेख में हैं। कैदियों की नियमित शरीर-परीक्षा के लिए पर्याप्त डाक्टरी सुविधाएँ नहीं हैं। तपेदिक की परीक्षा तापमान, पसीना, थकावट और दुबलापन आदि लक्षणों से की जाती है, मानो एक्स-रे की विधि का अभी आविष्कार ही न हुआ हो। जब इन लक्षणों से इस रोग का पता चलता है तब यह मालूम होता है कि यह काफी बढ़ चुका है और फेफड़े गल गये हैं या दूसरी मलामतें शुरु हो गई हैं। जब इस रोग का पता चल जाता है तो तपेदिक के रोगी कैदियों को एक विशेष रोगी कैम्प में रखा जाता है, जिसमें तपेदिक के बीमारों की संख्या कभी भी बारह सौ से कम नहीं होती। वहाँ इतनी कम जगह होती है कि जिन लोगों में इस रोग का पता चल जाता है, उनमें से भी सबको वहाँ रखना सम्भव नहीं होता। हर कैम्प में एक ऐसी बैरक होती है, जिसमें इस विशेष कैम्प में स्थान न पा सकने वाले चालीस से अस्सी तक रोगी रहते हैं। इस बैरक का प्रबन्ध स्वयं कैम्प के आदमी ही करते हैं।

रद्दी भोजन होने पर भी यहाँ तपेदिक का प्रकोप दक्षिण के जलवायु की अपेक्षा हल्का होता है। वोर्कुटा में वायुमंडल का दबाव उतना ही है जितना कि नौ हज़ार फुट ऊँचे पहाड़ी सैनिटोरियम पर होता है।

तपेदिक का निदान ठीक-ठीक न हो सकने का कारण यह है कि यहाँ परामर्श के समय जो "डाक्टर" उपलब्ध होते हैं उनका डाक्टरी का ज्ञान अत्यन्त साधरण व नाम मात्र का होता है। उनकी मुख्य योग्यता तो यह है कि वे एन० के० वी० डी० के "विश्वास-भाजन" हैं। कैम्प के औद्योगिक उत्पादन स्तर को कायम रखने की आखिरी ज़िम्मेवारी एन० के० वी० डी० के अधिकारियों की है। वे जानते हैं कि अस्पताल में भरती होने का प्रलोभन ऐसी चीज़ है जिसकी ओर सच्चे या झूठे आधार पर सब तरह सुविधाएँ पाने के लिए कैदी आकृष्ट होते हैं। इसलिए डाक्टर लोग जिन रोगियों को अस्पताल में रखने का

आदेश देते हैं, उन्हें वे टाल देते हैं और इसके लिए अस्पतालों में अपने आदमी भरे रखते हैं।

उदाहरण के लिए कैम्प नं० ६/१० के "सीनियर डाक्टर" ने वास्तव में डाक्टरी की कोई शिक्षा प्राप्त नहीं की हुई थी। वह दांत बनानेवाला मिस्त्री था और उसे चिकित्सा के सम्बन्ध में जो कुछ जानकारी थी, वह उसने कैम्प में ही प्राप्त की थी, जहां वह सन् १९४४ से था। स्वभावतः उसके पास चिकित्सा के लिए इतने आदमी आते थे कि उनसे उसे उसी तरह कुछ न कुछ अनुभव हो गया था जैसे कि टोने-टोटके करनेवालों को भी अभ्यास करते-करते हो जाता है। किन्तु ऐसे आदमी ऐसा केस सामने आने पर जिसमें कि चिकित्सा शास्त्र की वास्तविक योग्यता आवश्यक होती है, बिल्कुल अनुपयोगी साबित होते हैं। सचाई यह है कि यह "सीनियर डाक्टर" जो अवाकियन नाम का एक आर्मीनियन था, वस्तुतः उन बदनाम लोगों में था जिनका एन० के० वी० डी० के स्थानीय मुखिया के साथ सम्बन्ध था। उसे यह हिदायत थी कि वह एक दिन में एक प्रतिशत से अधिक कैदियों को बीमारी की छुट्टी ही न दे। कैम्प में कैदियों के आम स्वास्थ्य की जो दशा थी, उसे देखते हुए यह संख्या बहुत बड़ी नहीं थी। जो डाक्टर राजनीतिक-आर्थिक सिद्धान्तों के बजाय चिकित्सा शास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार काम करते थे, उन्होंने मुझे बताया कि वस्तुतः रोग के कारण काम के अयोग्य कैदियों की संख्या इससे तिगुनी होती थी। संक्रामक रोगों के दिनों में, जब मजदूरी करनेवालों की संख्या में कमी की सम्भावना पैदा हो जाती तो डाक्टरों की नहीं, बल्कि कैम्प के अन्य अधिकारियों, यथा कारखाना विभाग के प्रमुख, की इस बारे में अधिक चलती थी कि किसे बीमारी की छुट्टी दी जाय और किसे नहीं। ऐसे मौके पर जिस किसी को अस्पताल जाने की अनुमति मिलती, वह समझ लेता कि वह मौत के नजदीक पहुँच चुका है।

बाद में कैम्प नं० ६ में मैंने ऐसी ही दशा पाई। वहां डाक्टरी

परामर्श का इंचार्ज बोइकोव नाम का एक व्यक्ति था। उसमें और अवाकियन में सिर्फ इतना ही फर्क था कि वह दाँत बनानेवाला मिस्त्री भी नहीं था। इसलिए यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वह जो इलाज करता वह भी वैसा ही बेहूदा होता।

कैम्प के अधिकारियों ने कैदियों को संक्रामक बीमारियों से बचाने का सफल प्रयत्न किया था, किन्तु उनके प्रति दया के वशीभूत होकर नहीं। सोवियत रूस को मजदूरों की जरूरत है। वोर्कुटा के विस्तार सम्बन्धी किसी-न-किसी अत्यन्त महत्वपूर्ण योजना के लिए हमेशा मजदूरों की कमी रहती है। हरेक कैदी जो बीमार पड़ जाता है और काम के योग्य नहीं होता, रूस के एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र के विकास में विलम्ब करता है। इसलिए पिछले कुछ वर्षों में कैम्पों ने यथासम्भव अपनी चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं में सुधार किया है। किन्तु जहाँ रूस के औद्योगिक उत्पादन का हित प्रारम्भ होता है, वहीं ये सुविधाएँ खत्म हो जाती हैं। उदाहरण के लिए कैम्प के लिए एक्स-रे की मशीन खरीदना सम्भव नहीं है। १९५० में सारे वोर्कुटा इलाके के लिए, जिसमें वहाँ की स्वतन्त्र आबादी भी शामिल है, कुल छः एक्स-रे मशीनें उपलब्ध थीं। जब हम यह देखते हैं कि वहाँ रहनेवाले ढाई लाख व्यक्ति किस तरह तपेदिक के खतरे में रहते हैं, तब हमें प्रतीत होता है कि ये छः एक्स-रे मशीनें कितनी अपर्याप्त हैं।

वोर्कुटा में सोवियत सरकार की चिकित्सा व्यवस्था के नीचे स्तर का इससे बड़ा सबूत और क्या हो सकता है कि अनेक अस्पतालों की मुखिया मामूली नर्सें हैं, जो कोम्सोमोलों (युवक कैम्पों) में ट्रेनिंग पाई हुई विश्वसनीय साम्यवादी हैं और जो अपने चिकित्सा शास्त्र के ज्ञान की कमी को अपनी राजनीतिक ट्रेनिंग में प्राप्त अनुशासन से पूरा करती हैं। त्रोफिमोविच की उत्तराधिकारिणी एफिमेन्को ऐसी ही स्त्री थी। वह उन सोवियत स्त्रियों में से थी, आदेश मिलने पर साम्यवाद की खातिर सब कुछ कर सकती हैं—पैराशूट से कूद सकती हैं, नर्स का

काम कर सकती हैं, राजनीतिक प्रचार कर सकती हैं, नहरों की खुदाई कर सकती हैं और पश्चिम के विरुद्ध आखिरी लड़ाई करने के लिए दर्जन भर बच्चे भी पैदा कर सकती हैं।

वहाँ चिकित्सक लोगों में सबसे अच्छे सर्जन हैं। इनमें से बहुतों ने व्लासोव की सेना के अस्पतालों में या युद्ध के दिनों में जर्मन अस्पतालों में अच्छा तजुर्बा हासिल किया हुआ है। वे कैदियों की काफी सेवा करते हैं, हालांकि उनका भी प्रैक्टिस का अधिकार अन्ततः एन० के०-वी० डी० की दया पर ही निर्भर है। नासेदकिन को भी, जो रूस के सबसे प्रसिद्ध सर्जनों में से हैं और जिसने युद्ध के दिनों में सौएरब्रुख के काम किया था, राजनीतिक कारणों से प्रैक्टिस करने की अनुमति नहीं है। एक और यूक्रेनियन सर्जन की, जो वोर्कुटा में प्रैक्टिस करता था, कैम्प के एक मुखिया से कहा—सुनी हो गई, जिससे उसे चिकित्सा के काम से हटाकर दूसरे साधारण काम में लगा दिया गया।

चिकित्सा शास्त्र के विशिष्ट अंगों के विशेषज्ञों का भी सर्वथा अभाव है। वोर्कुटा के एक भी कैम्प में कान, नाक और गले का कोई विशेषज्ञ नहीं है। यदि किसी रोगी को कान के मध्य भाग में सूजन होने से 'साइनस थ्रोम्बीसिस' जैसी तकलीफ हो जाय तो उसकी मौत अवश्यम्भावी है, क्योंकि 'थ्रोम्बोसिस' का आपरेशन करने के लिए वहाँ कोई विशेषज्ञ नहीं है।

कैम्प में सबसे दयनीय स्थिति दिल की बीमारियों के रोगियों की है। वोर्कुटा के अधिकतर रूसी डाक्टरों की शिक्षा इतनी कम है कि एक तरह से उन्हें दिल की बीमारियों की कोई जानकारी नहीं है। कैम्प में अपने साढ़े तीन वर्ष के निवास काल में मैंने ऐसा एक भी डाक्टर नहीं देखा जो इस तरह के रोगों का निदान कर सके। इन रोगों के रोगियों के सामने एक दिक्कत यह होती है कि वे अपनी बीमारी दिखा नहीं सकते। अगर उनकी किस्मत अच्छी होती है तो उनके दिल की धड़कन इतनी ऊँची हो जाती है कि एक साधारण आदमी भी यह समझ

सकता है कि कुछ गड़बड़ है। सिर्फ ऐसे ही आदमियों को "कमजोर दिल" का रोगी घोषित किया जाता है।

साधारण स्वतन्त्र परिस्थितियों में डाक्टर यह मानकर चलता है कि वह लोगों को तन्दुरुस्त करने के लिए प्रयत्न कर रहा है। किन्तु कैम्प में बहुत कम कैदियों की इस बात में दिलचस्पी होती है कि वे जल्दी या पूर्णतः स्वस्थ हो जायें। वे अपनी बची-खुची बीमारी को जितने दिन सम्भव होता है पालते रहते हैं ताकि उन्हें कम कठोर काम करनेवाले दल में रखा जाय। कैम्प में मेरी गैरकानूनी डाक्टरी प्रैक्टिस का बहुत बड़ा भाग इस बात के प्रयत्न के लिए होता था कि मेरे रोगी जल्दी स्वास्थ्य लाभ न कर सकें। मेरे पास ऐसे भी बहुत से केस थे जिनमें कैदियों से इतना अधिक काम लिया जाता था कि उन्हें जिन्दा रखन के लिए सिर्फ एक ही उपाय रह जाता था कि मैं उन्हें किसी तरह बीमार कर दूँ।

कुछ रोगियों का इलाज मैंने सिर्फ उनसे प्राप्त होनेवाली फीस के लिए ही किया। इस फीस से रोटी खरीदकर जरूरतमन्दों को दे दी जाती थी। उदाहरण के लिए वास्याने अपने इलाज के लिए मुझे जो फीस दी उससे मेरे दो मित्रों का बहुत दिन तक निर्वाह होता रहा। एक दिन उसने मुझे यह कहने के लिए बुलाया कि उसकी बाईं आंख का अन्धापन अब दाईं आंख में भी फैलता जा रहा है। पहले पहल मैंने उसका इलाज करने से इन्कार कर दिया क्योंकि वह एन० के० वी० डी० के भेदिये के रूप में काम करता था। किन्तु उसने दो बार फिर मुझे बुलाया और अन्त में इतनी बड़ी फीस देने का प्रस्ताव किया कि यदि मैं उसे लेनें से इन्कार करता तो वह एक गुनाह होता।

उसकी परीक्षा करके देखा कि उसकी बाईं आंख में मोतिया काफी उतर आया है, किन्तु वह अभी बिल्कुल बन्द नहीं हुई है। उसकी दाईं आंख बिल्कुल ठीक थी। वास्या उत्सुकता से मेरी परीक्षा की प्रतीक्षा कर रहा था।

मैंने उससे कहा, "मैं तुम्हारी दाईं आँख बचा सकता हूँ, यदि तुम अपने आपको मुझे सौंप दो और हर रोज मुझे दो पौंड रोटी दो।"

वह इतना सम्पन्न था कि उसके लिए यह कोई बड़ी समस्या नहीं थी।

"मेरे पास एक ऐसी दवा है" मैंने कहा, "जो रोग को तुम्हारी दाईं आँख में फैलने से रोक देगी।"

मैं प्रयोगशाला में गया और एक पुरानी बोतल ढूंढ़ लाया। उसे मैंने सादे गर्म पानी से भर लिया और वास्या के पास ले गया। वास्या स्टूल पर बैठ गया और मैंने उसकी कुछ बूंदें उसकी दाईं आँख में टपका दीं। वास्या ने एकदम आँखें बन्द कर लीं। स्पष्ट था कि उसकी आँख में बहुत दर्द हुआ था। आँसू उसके गालों पर से बह रहे थे। मैं भी उतना ही घबरा गया जितना कि वह। वापस लौटते हुए मुझे मालूम हुआ कि मेरा गर्म पानी वस्तुतः आयोडीन का घोल था। बोतल में पहले आयोडीन रखा था और उसका कुछ भाग उसके भीतर सूखकर जम गया था, जो गर्म पानी पड़ने पर उसमें घुल गया। वास्या मेरे इलाज से बहुत सन्तुष्ट था। उसके मन में जरा भी सन्देह नहीं हुआ कि वस्तुतः यह बड़ी तेज और जलानेवाली दवा थी जो उसकी दाईं आँख बचाने को दी जा रही थी। उसके बाद जब तक मैं कैम्प नं० ९/१० में रहा तब तक सप्ताह में तीन दिन तक यह दवा उसकी आँख में डालता रहा।

जून, १९५२ में, एक विशेष स्वास्थ्य कमीशन कैम्प में आया। जिस समय मेरी शरीर-परीक्षा हुई, उससे एक घंटा पहले ही मैंने ६ पिंट पानी में एक औंस जार्जियन चाय मिलाकर पी ली थी। इससे जब मेरा रक्त का दबाव देखा गया तो वह २२० निकला जिसका अर्थ था कि मैं मस्तिष्क के पक्षाघात की हालत के नजदीक पहुँच गया हूँ।

इसका परिणाम यह हुआ कि मेरी "सामाजिक उत्पादकता" की मंजिल खत्म हो गई। मुझे अशक्त करार देकर कोयला झोंकनेवाला

बना दिया गया। मेरा एक मात्र काम वैरकों की अंगीठियों को एक निश्चित तापमान पर गर्म रखना था, जिसके लिए मैं लकड़ी और कोयला ले आता था। मेरी एक अलग छोटी-सी ईंधन की कोठरी थी। अब से मुझे एक वास्तविक "पूँजीवादी सामाजिक पराश्रित" के रूप में जीवन यापन करना था।

———

अध्याय ६

कैम्प नं० ६

उसी साल जाड़ों की एक रात को मैं अपनी अंगीठी के आगे अकेला बैठा था कि मेरी खिड़की पर किसी ने दस्तक दी। बाहर के दरवाज़े रात को बन्द कर दिये जाते थे ताकि एक बैरक के लोग दूसरी बैरक वालों से मिल-जुल न सकें और इस प्रकार कोई विध्वंसक कार्रवाई न हो सके।

दस्तक आफिस के एक सन्देशवाहक ने दी थी। उसने मेरा नाम लेकर पुकारा और कहा, "चलने के लिए तैयार हो जाओ।"

एक कैम्प से दूसरे कैम्प में तबादले का काम अक्सर रात को और वह भी एकाएक होता है। जिन लोगों का तबादला होना होता है उनके नाम अन्तिम क्षण तक गुप्त रखे जाते हैं। इससे एन० के० वी० डी० को यह आशा रहती है कि कैदी पहले से कोई योजना नहीं बना पायेंगे और एक कैम्प की खबर दूसरे में नहीं ले जा सकेंगे।

सफर के लिए तैयार होने में सिर्फ दो मिनट लगे। मैंने अपना गद्दा लपेटा, अपना कम्बल एक रस्सी से उसके साथ बाँध लिया और चम्मच जेब में डालकर तैयार हो गया। और कुछ करने को था ही नहीं। आधे घंटे में कुछ सिपाही आये और उन्होंने दरवाज़ा खोला। मैंने अपने मित्रों से अलविदा कहीं और जाड़े की उस सबसे ठण्डी रात को बाहर निकल पड़ा।

करीब पचास और आदमी बान्या में इन्तज़ार कर रहे थे। नहाने के बाद हम एक बड़ी बैरक में ले जाये गये, जो बिल्कुल खाली पड़ी थी और हम आराम से सो सकते थे। जब हम बान्या में थे तभी कैदियों का एक दल उसी लारी से जो हमें यहाँ लाई थी, इस बैरक से कैम्प

नं० ९/१० में भेजा गया था। यह लारी अशक्त लोगों के एक दल को लाई थी और अब दर्म्याना काम करनेवाले लोगों के एक दल को वापस ले जा रही थी।

हरेक कैम्प में अशक्त लोगों की संख्या अलग-अलग होती है। कैम्प नं० ६ में हमारे पहुँचने पर साढ़े तीन हज़ार कैदियों में से सात सौ कैदी अशक्त थे। ये लोग मजदूरी के अयोग्य होते हैं, इसलिए उत्पादन के काम में भविष्य में कोई भाग नहीं लेते।

कैम्प नं० ६ में सिर्फ वही कैदी थे जिन्हें सन् १९४७ के बाद श्रम-कैम्पों में रहने की हल्की मियाद की सज़ाएँ दी गई थीं। यहां वातावरण अपेक्षाकृत सभ्य और शान्त था। उदाहरणार्थ कैम्प नं० ९/१० में कैदियों में आपस में लड़ाई हो जाना रोजमर्रा की बात थी। ये लड़ाइयां खाने के कमरे के किसी स्थान या स्टूल या बैरक के किसी स्थान पर कब्जा जैसी बिल्कुल बेकार की बातों पर भी हो जाती थीं। कैम्प नं० ६ में ऐसी घटनाएँ कभी नहीं सुनी गई थीं।

कैम्प नं० ६ में, इसीलिए, सुरक्षा की व्यवस्था भी उसी अनुपात में नर्म थी। कैम्प के हर कोने में स्थिति पहरेदारों के खड़े होने की ऊँचा जगहों के बीच में ६०० गज़ लम्बी तार थी और पहरेदारों के कमरे के ऊपर एक ही साधारण अतिरिक्त टावर था।

कैम्प नं० ९/१० से रवाना होने से पूर्व मेरी अपने एक रूसी मित्र से बहुत कम आखिरी बातें हुईं। इन विशेष कैम्पों में इन्सान को उन लोगों से कुछ ही मिनटों में विदा लेनी पड़ती है जिनसे ऐसा अनुराग हो जाता है, मानो वे उसके ही परिवार के सदस्य हों। मेरे मित्र ने मुझसे कहा था, "यह दुःख की बात है कि तुम यहाँ से जा रहे हो। यदि तुम्हारी दिलचस्पी हो तो दूसरे कैम्प में पहुँचकर तुम वहां के लोगों के साथ काम करते रह सकते हो। तुम उनके लिए उपयोगी हो सकते हो। क्या ख्याल है?"

"मैं ज़रूर उनके साथ काम करना पसन्द करूँगा।"

"बहुत अच्छा! ....आज ६ दिसम्बर है। २०वीं तारीख की शाम को ६ बजे खाने के कमरे के साथ वाले कमरे में जाना और इन्तज़ार करना। कोई आदमी वहाँ आयगा और तुमसे दियासलाई मांगेगा और फिर तुम्हें सिगरेट पेश करेगा। तुम उसे उत्तर देना, 'मैं सिगरेट नहीं पीता।' जो आदमी तुम्हें सिगरेट पेश करेगा वही वह मध्यवर्त्ती आदमी होगा जिसके साथ मिलकर तुम्हें काम करना होगा। यदि २०वीं तारीख को कोई न आये या तुम ही किसी वजह से वहाँ न जा सको तो दो दिन बाद फिर जाना। अगर फिर भी कुछ न हो तो दो दिन बाद फिर जाना। वह आख़िरी दफा होगी।"

मैं समझ गया। मेरे साथ कैम्प नं० ६/१० से जानेवाले लोगों में गुप्त प्रतिरोधकारी दल के सदस्य भी होंगे। मैं नहीं जानता था कि ये लोग कौन थे और न मैं कभी जान ही सकूंगा। किन्तु वे लोग दूसरे कैम्प के गुप्त प्रतिरोधकारी दल के पास इस व्यवस्था की तफसील पहुचाते होंगे। यह तफसील शायद सिफारिशों के रूप में होगी जिसे दूसरे कैम्प के गुप्त दल के लोग चाहे स्वीकार करें और चाहे न करें। ये लोग पहले दस दिनों में नये कैम्प में मेरी जांच करेंगे और मेरे बारे में अपना मत स्थिर करेंगे। यदि उन्होंने मुझे अपने काम के योग्य न समझा तो कोई भी उस निर्दिष्ट स्थल पर मुझसे मिलने नही आयेगा।

२० दिसम्बर को मैं निश्चित समय से कुछ मिनट पूर्व खाने के कमरे के साथ वाले छोटे कमरे में गया। ठीक छः बजे एक रूसी भीतर आया। उसकी आयु करीब तीस वर्ष होगी। उसके चेहरे से स्लाव लोगों की स्वभावगत शान्ति और परिश्रमशीलता टपकती थी। इससे पूर्व कि वह मुझसे दियासलाई मांगता मैं समझ गया कि यही वह आदमी है जिसके साथ मिलकर मुझे काम करना है।

"क्या तुम मेहरबानी कर मुझे दियासलाई दे सकते हो ?"

उसने मुझे सिगरेट पेश की। मैंने उससे कहा कि मैं सिगरेट नहीं

पीता। वह क्षण भर मुस्कराया और उसके बाद दियासलाई निकाल कर उसने अपनी सिगरेट जला ली।

"आओ चलें !" वह बोला।

किसी यूरोपीय व्यक्ति के लिए, जो धीरे-धीरे अपने नये साथियों का विश्वास प्राप्त करने लगता है, शायद सबसे अधिक आश्चर्य की बात यही होती है कि वोर्कुटा के विशेष कैम्पों में भी गुप्त रूप से काम करने वाले अनेक संगठन हैं और कि वे किस ढंग से काम करते हैं।

हरेक गुप्त दल जातीय आधार पर बनाया जाता है। इसके लिए सर्वथा युक्तिसंगत और व्यावहारिक कारण हैं। सिर्फ एक राष्ट्र के लोग ही एक-दूसरे के बारे में जान सकते हैं कि कौन व्यक्तिगत और राजनीतिक दृष्टि से गुप्त काम में शरीक किये जाने के योग्य है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि इन गुप्त दलों में कैम्पों के हर जाति के सिर्फ चुने हुए आदमी ही होते हैं।

इन सब दलों का संगठन एक केन्द्र के चारों ओर किया जाता है और यह केन्द्र बहुत छोटा रखा जाता है ताकि एन० के० वी० डी० के आदमी किसी भी तरह उसका पता न पा सकें। इन दलों के काम तीन श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं, राजनीतिक, सूचना सम्बन्धी और सैनिक।

व्यावहारिक दृष्टि से उनका काम क्या होता है ?

कल्पना कीजिए, एक कैम्प में एक गुप्त दल का सूचना विभाग एक भूतपूर्व वकील की अधीनता में है। वह एक अशक्त कैदी है जिसे कोई काम नहीं करना पड़ता। वह एक वैरक का मुखिया है इसलिए उसके रेडियो पर आनेवाली और अखबारों में प्रकाशित होनेवाली खबरों की छानबीन के लिए काफी खाली समय होता है। वह कोमी गणराज्य की राजधानी सिक्तिव्कार से प्रकाशित होनेवाला स्थानीय पत्र 'जा नोवाई सेवेर' या 'प्रावदा', 'इजवेस्तिया' और 'कोम्सो मोल्स्काया प्रावदा' आदि केन्द्रीय पत्र ही नहीं पढ़ता, वरन् 'नोवाई व्रेम्या', 'बोल्शेविक' और 'लितेरातूनीया गाज्येता' आदि राजनीतिक पत्र-

पत्रिकाएँ भी पढ़ता है जो सिर्फ कैम्प के पुस्तकालय में ही मिल सकती हैं और जिन्हें पढ़ पाना साधारणतः कठिन होता है।

वह समय-समय पर बुलेटिन और टिप्पणियां जारी करता रहता है, जिन पर एक छोटा दल विचार करता है और उसके बाद उन्हें कैम्प के पठित वर्ग में, जिसकी राजनीतिक मामलों में दिलचस्पी होती है, वितरित कर दिया जाता है। उसे इतना राजनीतिक अनुभव होता है कि वह सरकारी विज्ञप्तियों से भी गुप्त रहस्यों को निकाल सके और वह अपने देशवासियों को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की सही तसवीर देने का नियम बना लेता है।

इनके अलावा वह पश्चिमी देशों के रेडियो स्टेशनों के रूसी प्रोग्रामों में प्रसारित की जानेवाली सूचनाएँ भी संगृहीत करने का प्रयत्न करता है। अधिकतर कैम्पों में यह सम्भव भी है। बाहर से खबरें अक्सर अत्यन्त पेचीदा षड़यन्त्रपूर्ण मार्गों से आती हैं और उनके विकृत हो जाने का काफी भय रहता है। किन्तु इस प्रकार की खबरों को काफी आसानी से या तो राजनीतिक दल के लोगों से बातचीत के द्वारा अथवा मास्को रेडियो द्वारा की जानेवाली टिप्पणियों से जांच की जा सकती हैं। उदाहरण के लिए बरमूडा सम्मेलन की योजना, पश्चिमी रेडियो स्टेशन की घोषणा के कुछ ही दिनों बाद मास्को रेडियो की तत्सम्बन्धी घोषणा से काफी पहले, वोर्कुटा में लोगों को मालूम हो गई थी।

बन्दियों की बातचीत का विषय बहुधा यह होता है कि "यदि युद्ध छिड़ गया तो क्या होगा ?" वे जानते हैं कि युद्ध ही वोर्कुटा से उनकी मुक्ति का सर्वोत्तम अवसर हो सकता है। इसीलिए वे युद्ध की कामना करते रहते हैं। दूसरी ओर वे यह भी अच्छी तरह अनुभव करते हैं कि उनमें से बहुतों के लिए युद्ध का अर्थ टंड्रा प्रदेश में कब्र में दफन हो जाना होगा। १९४१ की गर्मियों में सोवियत सरकार ने वोर्कुटा के कैम्पों में जो कत्ले-आम किया था, उसकी स्मृति अभी तक

बहुत से कैदियों के मन में ताजा है। उन दिनों की घटनाओं के प्रत्यक्ष दर्शन आज भी मिल जाएँगे।

सोवियत यूनियन के विरुद्ध हिटलर के आक्रमण के प्रारम्भ में एन० के० वी० डी० ने हजारों कैदियों को गोली से उड़ा दिया था। उनमें से अधिकतर व्यक्ति या तो वे थे जिन्हें मास्को के १९३६-३८ के ऐतिहासिक मुकदमों में सजाएँ मिली थीं, यानी वे लोग जिन्हें ट्राट्स्की अथवा बुखारिन का समर्थन करने या तुकातचेव्स्की, गमारनिक या उनके साथियों के साथ सम्बन्ध रखने के अभियोग में सजाएँ दी गई थीं, या उनमें मेनशेविक यूक्रेन और बाल्टिक राज्यों के राष्ट्रीय प्रतिरोध आन्दोलनों के सदस्य थे।

एक व्यक्ति ने जो उन दिनों वोर्कुटा में था, कैम्प नं० ८ में घटी घटना का दृश्य मेरे सामने इस प्रकार वर्णित किया।

"एक सौ से अधिक आदमी एकाएक बुलाये गये और उनसे कहा गया कि उन्हें और अधिक दक्षिण की तरफ एक कैम्प में भेजा जा रहा है। उन्हें नये कपड़े दिये गए और थोड़े से पहरेदारों के साथ ही उन्हें कूच करा दी गई। उसी शाम एक लारी में उनके कपड़े वापस आ गये। इन्होंने यह भी चिन्ता नहीं की कि यदि उन पर गोली चलानी ही है तो दक्षिण के किसी जंगल में जाकर चलाते। अगले कुछ दिनों में ही जो कुछ घटित हुआ था उसका सारा वृत्तान्त उन पहरेदारों के मुँह से, जो इस गोलीकांड के समय उपस्थित थे, छन-छनकर वहाँ पहुँच गया। उन्होंने बताया कि कैदियों को अभी सिर्फ कुछ ही मील दूर टंड्रा प्रदेश में ले जाया गया था कि वहाँ गोली चलानेवाले एक दल ने जो पहले से ही वहाँ उनका इन्तजार कर रहा था उन्हें घेर लिया और गोलियों से भून दिया।"

एन० के० वी० डी० ने भी इन तथ्यों को छिपाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। यह गोलीकाण्ड बंदियों को शान्त करने और डराने के लिए ही किया गया था और उसका वही परिणाम हुआ भी।

प्रतिरोधकारी दल जानते हैं कि आज भी हरेक कैम्प के कमांडेंट के पास सरकार के मुहरबन्द आदेश हैं, जिन्हें आम लामबन्दी का आदेश होते ही खोलन का हुक्म है। इनमें बताया गया है कि युद्ध छिड़ जाने की दशा में सोवियत सरकार क्या कदम उठायेगी। क्या इन पत्रों में कमांडेंटों को १६४१ की भाँति निवारणात्मक कत्ले-आम का अधिकार दिया गया है? क्या उस भयंकर गर्मी के मौसम के उस कत्ले-आम की पुनरावृत्ति होगी?

रूसियों के अलावा दूसरों के तमाम राष्ट्रीय प्रतिरोधकारी दलों में दो विशेषताएँ हैं—पहली यह कि वे समूची साम्यवादी प्रणाली के साथ किसी भी तरह का समझौता करने को तैयार नहीं हैं और दूसरी यह कि वे रूसियों को रूसी होने के कारण ही नापसंद करते हैं। यूक्रेनियनों के मन में रूसियों के प्रति घृणा तीन सौ वर्ष से चली आ रही है। पोलैंड में भी १६वीं शताब्दी के विद्रोह की याद आज भी इतनी ताज़ा है कि मानो यह विद्रोह कल ही घटित हुआ हो। १६४४ में वारसा के विद्रोह की दुःखान्त असफलता, जिसका कारण लाल सेना की घृणापूर्ण निश्चेष्टता थी, और भी आग में घी का काम कर दिया है। बाल्टिक राष्ट्रों के लोग भी उन दिनों को अभी नहीं भूले हैं, जबकि उन्हें अपनी भाषा और साहित्य की ज़ारों से रक्षा करनी पड़ी थी। आज जिस प्रणाली के कारण उन पर विनाश का खतरा मंडरा रहा है, उस पर भी मुख्यतः रूसियों का नियन्त्रण है।

रूसी प्रतिरोधकारी दल स्वभावतः ही रूस-विरोधी नहीं हो सकते, किन्तु वस्तुतः वे अन्य सभी राष्ट्रों के प्रतिरोधकारी दलों से कम राष्ट्रीयतावादी हैं। वर्तमान शासन के प्रति उनके विरोध का मुख्य कारण यह है कि वे व्यक्ति के अधिकारों और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा चाहते हैं। सोवियत प्रणाली के बहुत-से बुनियादी सामाजिक और आर्थिक सिद्धान्तों को वे स्वीकार करने को तैयार हैं। वे यह स्वीकार करते हैं कि सन् १६१७ के बाद सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में प्रगति

हुई है। उन्हें रूस की औद्योगिक सफलताओं और शिक्षा के क्षेत्र में भारी प्रगति पर गर्व है। बहुत से मनीषी लोग कृषि के सामूहिकीकरण का भी अनुमोदन करते हैं, हालांकि किसानों द्वारा उसके वर्तमान रूप के विरोध के प्रति उनकी सहानुभूति है और वे अनुभव करते हैं कि इसमें कुछ सुधार करने पड़ेंगे। किन्तु चीज को वे एकदम अस्वीकार करते हैं वह है डिक्टेटरशाही प्रणाली। उनका व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में बिना किसी शर्त के पूर्ण विश्वास है और वे बहुत-से पश्चिमी देशों के उदार दली लोगों की अपेक्षा भी व्यक्ति के अधिकारों के अधिक कट्टर समर्थक हैं।

इन रूसियों ने बड़ी मेहनत से पश्चिम की आज की स्थिति की एक निष्पक्ष तस्वीर तैयार की है और सारे कैम्पों में ये रूसी दल ही एक मात्र ऐसा प्रतिरोधकारी दल है जो वस्तुत: बीसवीं शताब्दी की समस्याओं को बाकायदा और बिना किसी पक्षपात के देखता है। इन दलों के नेता, अधिकारी पढ़े-लिखे रूसी लोग या भूतपूर्व छात्र एवं अव्वल दर्जे के चरित्र और बुद्धिवाले व्यक्ति हैं और वे तथा सोवियत रूस के अन्य श्रम कैम्पों के उनके साथी ही शायद आज पश्चिम और सभ्यता के भविष्य के लिए सबसे बड़ी आशा हैं। कुछ लोग यूरोप को जानते हैं। कुछ को यूरोप से भी अधिक की जानकारी है। १६४१ में उनमें से बहुत-से लाल सेना के सिपाहियों के रूप में जर्मनों द्वारा कैद कर लिये गये थे। जब उनके सामने इन दो विकल्पों में से किसी एक को चुनने का अवसर उपस्थित हुआ कि या तो वे जर्मन बन्दी कैम्पों में भूख से तड़प-तड़पकर मर जायँ या व्लासोव की सेना में भरती हो जायँ तो उन्होंने दूसरा विकल्प ही पसन्द किया। व्लासोव की सेना में रहते हुए उन्हें जर्मनी, हालैंड, फ्रांस और इटली को देखने का मौका मिला। इटालियन मोर्चे पर अमरीकियों ने उन्हें कैद कर लिया। उन्होंने बहुत-सा समय अमरीका में बिताया जहाँ उन्हें पश्चिम की जीवन-झांकी देखने का और भी अवसर मिला। किन्तु उस समय अमरीका का

सोवियत रूस के साथ एक समझौता था जिसके अनुसार उसे युद्ध में वन्दी बनाये गये तमाम सोवियत नागरिक रूस को वापस लौटाने थे। फलतः ये रूसी प्रशान्त महासागर के रास्ते व्लाडीवोस्टोक भेज दिये गयें। वहां पहले इन लोगों को कैद कर लिया गया। किन्तु लड़ाई के मोर्चे पर आदमियों की कमी थी, इसलिए जिन्दगी में एक वार फिर उन्होंने अपने आपको लालसेना के, जो उस समय पोलेंड के पार आगे वढ़ रही थी, सिपाही के रूप में पाया। उन्होंने वर्लिन पर अधिकार करने में भाग लिया और उसके वाद वापस रूस में लाकर उन पर मुकदमे चलाये गये। उन्हें देश-द्रोह के अभियोग में पच्चीस-पच्चीस वर्ष के कारावास की सजाएँ दी गई।

अमरीका के वारे में ये लोग कहते हैं कि अमरीकी श्रमजीवी का जीवन-स्तर बहुत ऊँचा है और उन्हें उस स्तर के नजदीक पहुँचने में भी अभी बीस या तीस वर्ष और लगेंगे। किन्तु जव वह बीमार हो जाता है तव क्या होता है? वे कहते हैं, "जब हमारे श्रमिक बीमार हो जाते हैं तो वे महज़ अस्पताल जाते हैं और तुरन्त उन्हें सहायता मिल जाती है। उन्हें दवा दे दी जाती है और उसका कोई मूल्य उन्हें नहीं देना पड़ता। हो सकता है कि हमारे डाक्टर अमरीकी डाक्टरों के समान अच्छे न हों, किन्तु एक दिन वे अच्छे हो जायेंगे।"

या वे फिर कहते हैं, "यदि किसी सामूहिक फार्म में किसी व्यक्ति का सुयोग लड़का हो तो वह उसे एक भी पैसा खर्च किये बिना उच्च शिक्षा दिला सकता है।"

इन प्रतिरोधकारी दलों के नौजवान सदस्यों का पुराने मेनशेविक युग के साथ या पुराने वोलशेविक विरोधी दलों के साथ, जिनका १९३६-३८ के मुकदमों में सर्वथा अन्त कर दिया गया, कोई सम्पर्क नहीं है। आज के इन तरुण रूसी समाजवादियों के लिए वह सव अव अतीत इतिहास की वस्तु बन गया है। इन मुकदमों से वचे हुए बहुत ही कम लोग हैं जिनसे वे उस ज़माने के बारे में कुछ जान सकते हैं। बुखारिन

के सिद्धान्तों में उनकी कोई दिलचस्पी नहीं रही। मेनशेविक लोगों के विचार भी अब केवल इतिहास के लिए ही महत्वपूर्ण रह गये हैं। वे स्वीकार करते हैं अक्तूबर क्रान्ति को; वे स्वीकार करते हैं अपने देश के लिए समाजवाद के सिद्धान्त को। किन्तु जिस चीज़ को वे बलपूर्वक अस्वीकार करते हैं, वह है किसी भी रूप में डिक्टेटरशिप। इन मुद्दों पर रूसी प्रतिरोधकारी दलों के सभी सदस्य सहमत हैं, फिर चाहे वे विश्वविद्यालय के छात्र हों, टैकनीशियन हों, अध्यापक हों या इंजीनीयर हों।

आज सोवियत रूस में कोई व्यापक, संगठित या सुयोजित गुप्त आन्दोलन काम नहीं कर रहा। सोवियत रूस जैसे तानाशाही देश में, जिसके पास इतिहास का सबसे विशाल और सबसे मज़बूत पुलिस तन्त्र हो, इस प्रकार का संगठित प्रतिरोध आन्दोलन असम्भव है। किन्तु छोटे-छोटे हज़ारों दलों के रूप में, जो विश्वविद्यालयों, टैकनिकल कालेजों, कारखानों और नगरों में बिखरे हैं, यह प्रतिरोध आन्दोलन विद्यमान है। ये दल इस बात पर गर्व करते हैं कि वे उन वीर रूसी प्रतिरोधकारियों की परम्परा के उत्तराधिकारी हैं, जिनके भाग्य में दिसम्बर क्रान्ति के ज़माने से ही साइबेरिया अथवा उत्तर में निर्वासन लिखा था। उनके मन में यूक्रेनियनों, बाल्टिक देशों के लोगों या अन्य राष्ट्रों के प्रति कोई रोष नहीं है। उनकी एकमात्र आकांक्षा सभी देशों के साथ शान्ति से रहने और अपने देश को फलता-फूलता देखने की है।

उनमें से भी जो अधिक तरुण हैं, वे अपना सामान्य ज्ञान बढ़ाने के लिए बहुत अधिक और बाकायदा मेहनत करते हैं। कैम्प नं० ६ में एक रूसी मित्र के यहां मैंने एक नोट बुक देखी जिसमें उन सब पुस्तकों का, जो उसने एक वर्ष में पढ़ी थीं, सार लिखा हुआ था। पुस्तकालय से हमेशा अपने मन के अनुकूल पुस्तकें प्राप्त करना सम्भव नहीं होता। जो कुछ वहां हों वही स्वीकार करना पड़ता है। मैंने उसमें पचास

पुस्तकों के नाम देखे और उन सबके सार से यह स्पष्ट था कि ये पुस्तकें निष्पक्ष भाव से और समझदारी के साथ पढ़ी गई हैं।

रूसी प्रतिरोधकारी दल भी, हालांकि वे "राष्ट्रीय" विचारों के नहीं होते, अन्य दलों की भांति राष्ट्रीयता की छाप पाये विना नहीं रहते। जहां तक शेष कैम्प का ताल्लुक है इन रूसियों को उनके देशवासी, जो सोवियत शासन प्रणाली को स्वीकार करते हैं और कैम्प के प्रशासन में विविध विशिष्ट पदों का उपयोग करते हैं, यह सोचकर सहन कर लेते हैं कि आखिर वे रूसी ही हैं। इस मामले में भी कैम्प अपने आप में एक छोटा रूस ही है, क्योंकि वहां भी "प्रशासन" दूसरे राष्ट्रों के लोगों को उनकी अपनी सीमा में रखने के लिए रूसियों का ही इस्तेमाल करता है।

एन० के० वी० डी० का मुख्य सुरक्षा अधिकारी भली भांति जानता है कि कैम्प में प्रतिरोधकारी दल हैं। वह कभी-कभी उनमें से किसी-किसी दल को वेनकाव करने में भी कामयाव हो जाता है। उदाहरण के लिए वह जानता है कि इन लोगों के पास खानों से चोरी किये हुए विस्फोटक पदार्थ होते हैं। किन्तु साथ ही वह यह भी जानता है कि एक सुरक्षा अधिकारी होने के नाते उसे उनके वारे में जितनी जानकारी होनी चाहिए उतनी नहीं होती।

उनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का उसका मुख्य जरिया मुखबिर लोग हैं। कैम्प नं० ६ के साढ़े तीन हजार के लगभग निवासियों में एक सौ बीस को प्रतिरोधकारी दल के लोग मुखविर समझते थे। इनमें से बहुत अधिक व्यक्ति रूसी थे। एन० के० वी० डी० रूसियों की सहायता से क्यों काम करना चाहता है, इसका स्पष्ट कारण यह है कि अब भी उनमें से बहुत से लोग पक्के साम्यवादी हैं और दल की नीति के प्रति वफादार रहना चाहते हैं और यह बात किसी भी तरह उनकी समझ में नहीं आती कि सिर्फ सजा पाने के कारण ही

साम्यवादी प्रणाली के प्रति उनकी निष्ठा में फर्क आ जाना चाहिए। राजनीतिक दृष्टि से कहा जाय तो कैम्प से उनके जीवन में कोई अन्तर नहीं आता।

उदाहरण के लिए सीमावर्ती सेना के कप्तान को अपने कर्त्तव्य-पालन के सम्बन्ध में अपराध करने पर पन्द्रह वर्ष की सजा मिलती है। किन्तु इससे वह राज्य का दुश्मन नहीं बन जाता। सुरक्षा अधिकारी उसे बुला भेजता है। वे दोनों आपस में बातचीत करते हैं। एक सप्ताह बाद वह भूतपूर्व कप्तान एक बैरक का प्रमुख बना दिया जाता है। उनका काम सिर्फ बैरक में रहनेवालों पर जासूसी करना होता है। वह यह खबर देता है कि उनसे मिलने के लिए कौन-कौन आते हैं और सम्भव हो तो वह यह भी सूचना देता है कि उनमें क्या बातचीत होती है।

एक सोवियत रेजीमेंट का जासूसी अधिकारी जर्मनों द्वारा युद्ध में बन्दी बना लिया गया था। उसका कहना है कि वहां उसे अपना परिचय गुप्त रखने में सफलता मिल गई। बाद में अमरीकियों ने उसे जर्मनों से मुक्त किया और सोवियत रूस को लौटा दिया, जहाँ उसे बीस वर्ष के कठोर सपरिश्रम कारावास की सजा दी गई। किन्तु इसके बावजूद उसके राजनीतिक विश्वासों में कोई शिथिलता नहीं आई है।

सोवियत गणतन्त्र संघ की दूसरी जातियों के लोगों में ऐसे बहुत कम हैं जिन्हें उनके राजनीतिक विश्वासों को देखते हुए भेदिया का काम देना सम्भव है। कैम्प में यूक्रेन या बाल्टिक राज्यों के साम्यवादी दलों के भूतपूर्व सदस्य मुश्किल से ही मिलेंगे। कैम्प नं० ६/१० में दो सौ इस्टोनियनों में से सिर्फ एक ही भेदिया था। दूसरे लोग इसे अपने राष्ट्रीय सम्मान पर धब्बा समझते थे। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं था कि वे उससे मित्रता न रखें, इसके विपरीत वे उसके जरिये सुरक्षा अधिकारी को गलत सूचनाएँ देकर गुमराह करने की चेष्टा करते रहते

थे। इसी प्रकार ढाई सौ लटवियनों में से सिर्फ तीन और एक सौ बीस जर्मनों में से सिर्फ चार मुखबिर थे।

मुखबिर को उसके काम के पुरस्कार के रूप में यथासम्भव हल्का और आमदनी वाला काम दिया जाता था। १९५०-५१ के दुर्भिक्ष के वर्षों में रसोई घर के काम एक तरह से इन्हीं लोगों के लिए सुरक्षित थे। सुरक्षा अधिकारी को यह हक होता है कि वह रसोई घर में सिर्फ अपने ही आदमी रख सकता है। वढ़ईखाने, वान्या और कपड़ों के गोदाम के सभी मुखिया एवं अधिकतर कर्मचारी कैदी मुखबिर ही होते हैं। जब तक मुखबिर के रूप में उनका काम सन्तोषजनक होता है तब तक वे इन कामों पर तैनात रखे जाते हैं। यदि सुरक्षा अधिकारी उनसे असन्तुष्ट हो जाता है तो उन्हें खास तौर से खराब दल में, मसलन पाखाना साफ करनेवाले दल में भेज दिया जाता है। निःसन्देह मुखबिर की दिलचस्पी इसी में रहती है कि किसी तरह जल्दी से जल्दी ऐसे दल से मुक्ति पा जाय।

प्रतिरोधकारी दलों को सब मिलाकर इन मुखबिरों के कामों के सम्बन्ध में भली भाँति जानकारी होती है। उनका मुख्य कार्य इन कामों को व्यर्थ करने का प्रयत्न होता है। बहुत मर्तबा ऐसा भी होता है कि स्वयं प्रतिरोधकारी दलों के सदस्य अपने नेताओं के आदेश से मुखबिर बन जाते हैं। इस प्रकार सुरक्षा अधिकारी की बहुत-सी योजनाओं का उन्हें पता लग जाता है।

उदाहरणार्थ मुखबिरों और एन० के० वी० डी० के अधिकारियों के बीच पारस्परिक सम्पर्क के जरियों का उन्हें भली भाँति पता रहता है। यह सम्पर्क सीधा शायद ही कभी होता हो। हर कैम्प में शिकायतों की एक पेटी रहती है, जिस पर एक सूचना लगी होती है, जिस पर उन लोगों के नाम लिखे रहते हैं जिन्हें शिकायतें लिखी जानी चाहिए। उदाहरण के लिए उन पर निम्न नाम लिखे होते हैं।

सुप्रीम सोवियत की कौंसिल,

साम्यवादी दल का पोलिटब्यूरो,
सोवियत रूस का सरकारी अभियोक्ता,
सोवियत रूस के राष्ट्रपति ।

नये आये कैदी, जिन्हें इन चीजों का कोई अनुभव नहीं होता, हमेशा यह प्रयत्न करते हैं कि शिकायत भेजकर अपने मामले पर पुर्नविचार या अपनी सजा में कमी करा सकें । किन्तु इससे उनकी सजाएँ सिर्फ पक्की ही होती हैं ।

किन्तु शिकायतों की पेटियों का प्रयोजन सिर्फ शिकायतें इकट्ठी करना ही नहीं, इससे भी कुछ अधिक होता है । हर रोज सायंकाल उन्हें खाली किया जाता है । इनमें डाले गये पत्र प्रत्यक्षता यद्यपि "सोवियत रूस के सरकारी अभियोक्ता" को लक्ष्य कर लिखे होते हैं, तथापि वस्तुतः उनमें मुखबिरों द्वारा दी गई सूचनाएँ होती हैं और उन पर संकेत के लिए खास संख्याएँ भी लिखी रहती हैं । रिश्तेदारों के नाम पत्रोंवाली पेटी का भी यही उपयोग किया जाता है । रिश्तेदारों के नाम लिखे जानेवाले सभी पत्र खुले ही पेटी में डाले जाते हैं ताकि कैम्प का सेंसर अधिकारी उन्हें पढ़ सकें । यह सेंसर अधिकारी हमेशा एन० के० वी० डी० का आदमी होता है जो सुरक्षा अधिकारी के घनिष्ट सहयोग से काम करता है । जब वह पेटी में किसी मुखबिर की लिखी कोई सूचना पाता है तो उसे तुरन्त यथास्थान पहुँचा देता है ।

मुखबिरों की भर्ती हमेशा सुरक्षा अधिकारी स्वयं व्यक्तिशः करता है । एक यूक्रेनियन फौजी डाक्टर ने मुझे बताया कि किस प्रकार उसे भी इसके लिए भर्ती करने का प्रयत्न किया गया ।

"एक दिन शाम को मुझे कमांडेंट के दफ्तर में बुलाया और कमांडेंट के निजी कमरे में ले जाया गया । सुरक्षा अधिकारी वहाँ मेरी प्रतीक्षा कर रहा था । उसने मुझे बैठने को कहा और मुझसे पूछने लगा कि मेरी तबीयत कैसी है, क्या मैं अपना काम पसन्द करता हूँ, क्या मुझे खाने को काफी मिल जाता है और क्या मुझे अपने परिवार से ठीक-

ठीक समाचार मिलते रहते हैं, आदि । निःसन्देह वह इन प्रश्नों के उत्तर पहले से ही जानता था । इसके वाद उसने मुझे सुझाव दिया कि मैं कैम्प में उसके काम में उसे सहायता दूं । मैंने उत्तर दिया, "मैं आपका मतलब नहीं समझा ।"

"तुम खूब अच्छी तरह समझते हो", वह बोला, "तुम्हें इस समय जो काम मिला हुआ है वह बहुत कठिन नहीं है । बाहर जब बरफानी तूफान चल रहा हो, उस समय भी तुम मजे से भीतर गर्मी में बैठ सकते हो । लेकिन मेरे एक इशारे से तुम्हारा यह काम छिन सकता है । सारी खान में सबसे रद्दी जगह तुम्हें काम के लिए भेज दिया जायगा । मैं तुम्हारे रिकार्ड पर ऐसा संकेत दे दूंगा । जिसका अर्थ यह होगा कि आयन्दा तुम्हें कभी अस्पताल में काम न दिया जाय ।"

"मैंने उसे बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में कहा कि मैं किसी भी परिस्थिति में मुखबिर नहीं बन सकता, चाहे इसका नतीजा कुछ भी हो ।"

"मेरे प्रस्ताव पर एक बार फिर विचार करो । शायद एक-आध महीने में तुम्हारा विचार बदल जाय । उस हालत में तुम जब चाहे मेरे पास आ सकते हो ।"

"उसनें मुझसे एक वायदे पर दस्तखत करा लिये कि मैं इस बात-चीत का किसी से जिक्र नहीं करूंगा । दूसरे दिन मुझे अस्पताल के काम से हटाकर खान में काम करनेवाले एक दल में शामिल कर दिया गया, हालांकि दिल की बीमारी के कारण मेरा नाम दर्म्याना काम करनेवालों की सूचि में दर्ज था । तब से, इन दो वर्षों में, मुझे अपने परिवार का भी कोई समाचार नहीं मिला है ।"

एक और मौके पर सुरक्षा अधिकारी ने एक तरुण इस्टोनियन को भी, जो एक पुराने इस्टोनियन साम्यवादी और इस्टोनिया की साम्यवादी सरकार के एक सदस्य का पुत्र था, इसी प्रकार मुखबिरी के लिए भर्ती करने का प्रयत्न किया । उसका पिता भी एक कैम्प में था । उस इस्टो-नियन के इन्कार कर देने पर उसने उसे एक महीने में कई बार रात

को कमांडेंट के दफ्तर में तलब किया। वहाँ कुछ भी नहीं होता। सिर्फ उसकी मातहत अफसरों से मामूली-सी बातें होतीं। किन्तु सुरक्षा अधिकारी का उसे इस तरह बुलाने का प्रयोजन सिर्फ यह था कि उसके नाम को धब्बा लग जाय और उसके मित्र उस पर विश्वास करना छोड़ दें और मित्रों का विश्वास न रहने पर कैम्प में जिन्दगी लगभग असम्भव है।

ज्यों ही किसी मुखबिर का पर्दा फाश हो जाता है, वह अपेक्षाकृत कम खतरनाक रह जाता है। तुरन्त ही उससे मेल-मुलाकात रखने वालों, उसके बैरक के साथियों और उसके साथ काम करनेवालों के पास चेतावनी पहुँच जाती है। प्रतिरोधकारी दल अपने शत्रु सुरक्षा अधिकारी को यह पता नहीं लगने देना चाहते कि उन्हें उसके एक एजेंट का पता लग गया है, क्योंकि उस हालत में वह तुरन्त ही उसे हटा देगा और उसके स्थान पर किसी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त कर देगा, जिसका जल्दी पता न लग सके।

जब कभी मुखबिरों की पिटाई होती है तब वह उन कैदियों की व्यक्तिगत इच्छा के कारण ही होती है, जिनकी समूची राजनीतिक सद्भावना नष्ट हो जाती है। यदि सुरक्षा अधिकारी यह अनुभव करता है कि उसके किसी आदमी के बारे में कैम्प के अधिकतर व्यक्ति यह जान गये हैं कि वह मुखबिर है, तो वह उसे किसी दूसरे कैम्प में तब्दील कर देता है, जहां उसका कोई दूसरा सहयोगी उसका अपने लिए इस्तेमाल कर सकता है। किन्तु विभिन्न कैम्पों के लोगों में परस्पर सम्पर्क के साधन बहुत अच्छे हैं, इसलिए मुखबिर के एक कैम्प से दूसरे कैम्प में पहुँचने के कुछ दिन बाद ही उसकी चेतावनी वहाँ पहुँच जाती है।

कभी-कभी खास मामलों में प्रतिरोधकारी दल किसी मुखबिर के लिए मौत की सजा भी तजवीज करते हैं। सन् १९५१ में कैम्प नं० ९/१० में एक अत्यन्त खतरनाक मुखबिर की दिनदहाड़े फावड़े से हत्या कर दी गई थी। एक वर्ष तक निरन्तर खूब बारीकी से व्यापक

छानबीन करके भी सुरक्षा अधिकारी हत्या करनेवाले का पता नहीं लगा सका। एक और मुखबिर को खत्म करने की योजना बनाई गई किन्तु बहुत समय तक वह सफल नहीं हुई। एक दिन जब वह एक नई इमारत के निर्माण-स्थल पर काम कर रहा था तो असावधानी से दीवारों पर काम करने के लिए लगाये गये लटकते हुए तख्ते पर चढ़ गया। तख्ते की नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे ले जानेवाले आदमी ने करीब तीस फुट की ऊंचाई से उसे एकदम नीचे जमीन पर छोड़ दिया। बेचारे मुखबिर के शरीर, कमर, कूल्हे, दोनों बाहों और दोनों टांगों की हड्डी-हड्डी टूट गई किन्तु फिर भी दैवयोग से वह जिन्दा बच गया। अब उसकी पंगु हालत उन लोगों के लिए एक भयंकर चेतावनी का काम करती है, जो कैदियों के अलिखित कानून को तोड़ते हैं। अपने मुखबिरों की रक्षा करने के लिए एन० के० वी० डी० ने १६५३ की गर्मियों में एक विशेष आदेश जारी किया था जिस पर हर कैदी के व्यक्तिगत रूप से हस्ताक्षर कराये गये थे। इस आदेश में कहा गया था कि भविष्य में किसी कैदी की हत्या करने की सजा मौत होगी।

———

अध्याय १०

आश्चर्यों का वर्ष

मार्च, १९५३ में वह घटना घटी, जिसकी वोर्कुटा के कैदी उत्सुकता से इन्तजार कर रहे थे और जिसके लिए वर्षों से उन्हें इतनी घोर निराशा का सामना करना पड़ा था, जितनी घोर निराशा इससे पहले इन्सान को शायद ही कभी हुई हो।

स्टालिन मस्तिष्क के पक्षाघात से मर गया।

उसके मरते ही कैम्प के लोग इन्तजार करने लगे कि सारा साम्य-वादी शासन-तन्त्र नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा, और वस्तुतः उस समय इसके लिए जितनी अनुकूल परिस्थितियां थीं, वैसी पिछले तीस वर्षों में कभी नहीं रही थीं। उसके लिए सभी आवश्यक हालत मौजूद थे। अपने तीस वर्ष के शासन में स्टालिन ने अपने इतने अधिक विरोधी खड़े कर लिये थे, जितने कि रूसके इतिहास में कभी किसी शासक के नहीं रहे होंगे।

पहली बात तो यह कि रूस में आज किसान सन् १९१७ की अपेक्षा भी शासन के कहीं अधिक कट्टर विरोधी हैं। "जमीन किसानों की" का नारा आज भी पहले की भाँति प्रभावपूर्ण है। किसान पुराने जमींदारों से जितनी घृणा करते थे सोवियत प्रणाली से भी उतनी ही घृणा करते हैं। उन्होंने अच्छी तरह अनुभव कर लिया है कि धोखे से क्रान्ति के फल से उन्हें वंचित कर दिया गया है।

दूसरी बात यह कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ से ही सोवियत रूस में एक बड़ा औद्योगिक सर्वहारा वर्ग क्रमशः बढ़ रहा है जिसे उसी तरह की परिस्थितियों में रहने के लिए विवश किया जा रहा है जिस तरह की परिस्थितियों में यूरोपीय मजदूर को पूंजीवाद

के प्रारम्भिक दिनों में रहना पड़ रहा था। यह सर्वहारा वर्ग भी उतना ही असन्तुष्ट है जितना कि सौ वर्ष पूर्व का सर्वहारा वर्ग था और वर्तमान व्यवस्था के प्रति उसका रोष भी उतना ही प्रबल है। औद्योगिक मजदूर भी किसानों की भाँति अच्छी तरह समझ गये हैं कि उनके साथ कैसा धोखा हुआ है। वे स्पष्ट देख रहे हैं कि सर्वहारा वर्ग के विरुद्ध डिक्टेटरशिप बन गई है।

इसी प्रकार सोवियत रूस की विभिन्न जातियों के प्रति लेनिन की नीति को भी उसके उत्तराधिकारियों ने विकृत कर दिया है। इन जातियों को गुलाम बनाने की शुरुआत १६३७ में यूनानियों को गुलाम बनाने के साथ हुई। उसके बाद १६३६ में जर्मनों और यूक्रेनियों को और अन्त में १६४० में बाल्टिक राज्यों को गुलाम बनाया गया। इसके परिणाम-स्वरूप किसानों और औद्योगिक मजदूरों के साथ-साथ उन लोगों का भी, जिनमें अपने पृथक् जातीय अस्तित्व और गौरव की भावना है, एक बड़ा विरोधी समूह तैयार हो गया है और इन सबका एक मात्र उद्देश्य मौजूदा साम्राज्यवादी शासन को खतम करना है।

सोवियत प्रणाली के खिलाफ उत्पन्न इस आन्तरिक विरोधी भावना में इससे भी अधिक शक्तिशाली और जबर्दस्त तत्व जबर्दस्ती बेगार लेनेवाले कैम्प हैं, जिनमें आज डेढ़ करोड़ के लगभग कैदी हैं। वे न सिर्फ रूस के औद्योगिक ढांचे का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग हैं, बल्कि वे सभी वर्गों और विचारों के लोगों की विरोधी भावना का केन्द्र-बिन्दु भी हैं। कैदियों में जो परस्पर विचार-विनियम होते हैं, उनमें भविष्य के रूस की तसवीर देखी जा सकती हैं।

आज स्थिति वैसी ही है जैसी सन् १६४१ की ग्रीष्म ऋतु में थी, जबकि हिटलर ने सोवियत रूस पर आक्रमण किया था। यदि उसने रूस के मौजूदा सामाजिक और राष्ट्रवादी असन्तोष का ठीक लाभ उठाया होता तो सैनिक आक्रमण और इस असन्तोष की मदद से उस समय सोवियत प्रणाली का अन्त कर देना बहुत आसान होता।

यदि वह इस मार्ग का अवलम्बन करता तो उसका रूस की मुक्ति का कार्यक्रम इस प्रकार होता।

(१) सोवियत रूस की हर जाति को अलग-अलग राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्रदान करना।

(२) किसानों को जमीनों पर अधिकार प्रदान करना।

(३) कारखानों का स्वत्व मजदूरों को देना।

(४) स्वतन्त्र लोकतन्त्रीय चुनाव कराकर एक नई सरकार का निर्माण करना।

यह जरूर सही है कि उससे इस नीति की आशा नहीं की जा सकती थी। मुझे एक प्रवासी रूसी के साथ, जबकि मैं और वह जनवरी, १९४५ में प्लोत्जेन्से के गेस्टापो के कैदखाने में वन्दी थे, हुई वातचीत का आज भी खूब स्मरण है। वह व्लासोव के नागरिक कर्मचारी मंडल का सदस्य था और पश्चिमी शक्तियों के साथ सहानुभूति होने के कारण गेस्टापो ने उसे गिरफ्तार कर लिया था। उसने बताया कि किस प्रकार हिटलर को रूस के सम्बन्ध में अपनी औपनिवेशक नीति का परित्याग करने के लिए मनाने का प्रयत्न किया गया। उसने सोवियत शासन प्रणाली का अन्त करने के लिए तैयार किया गया वह कार्यक्रम भी मुझे बताया जो जर्मन पर राष्ट्र विभाग के तथाकथित "पूर्वी मामलों के विशेषज्ञों" के सामने रखा गया था। किन्तु ज्यों ही सैनिक आक्रमण शुरू हुआ, उन्होंने उस सलाह की कोई परवाह नहीं की।

वाद में जब हिटलर को अपनी भूल महसूस हुई और उसने व्लासोव की सेना का निर्माण स्वीकार किया, तव तक राजनीतिक दृष्टि से बहुत विलम्ब हो चुका था।

मैंने उस रूसी से पूछा, "तब भविष्य के बारे में तुम्हारी क्या योजनायें हैं ?"

इस पर वह बहुत लम्बा लैक्चर दे सकता था। किन्तु वह चुप रहा। उसने सिर्फ इतना ही कहा, "अब हम अमरीकियों की सहायता से एक बार फिर प्रयत्न करेंगे।"

सिर्फ अमरीकी ही, जिन्होंने युद्ध काल में अपनी औद्योगिक शक्ति का कुछ दृश्य परिचय दिया था; आज रूसियों के लिए सबसे बड़ी आशा है।

रूसियों में शासन की विरोधी भावना बहुत व्यापक है, किन्तु इतने विशाल तानाशाही देश में इस विरोध को सुव्यवस्थित ढंग से संगठित करना असम्भव है। हिटलर के जर्मनी की भांति रूस में भी विरोधी गुटों के नेताओं का परस्पर बहुत कम सम्बन्ध है। किन्तु उनकी यही एकमात्र बाधा नहीं है। एक और उतनी ही महत्वपूर्ण बाधा यह भी है कि उन्हें देश के बाहर से कोई समर्थन या सहायता प्राप्त नहीं है। यह स्पष्ट है कि पश्चिमी देशों को आज इस बात का कोई वास्तविक ज्ञान नहीं है कि रूस में फैली इस शासन-विरोधी भावना का स्वरूप क्या है और वह रूस की आन्तरिक राजनीति में कितना निर्णायक हिस्सा अदा कर सकती है। और यह याद रखना चाहिए कि पिछलग्गू राज्यों के निर्माण से स्वयं सोवियत संघ में और भी तनाव बढ़ गया है, क्योंकि वहां भी रूस की भांति, एक छोटा-सा शासनारूढ़ वर्ग आम जनता को गुलामी में जकड़े रखता है।

रूस की प्रोपेगेंडा पद्धति एक बिल्कुल सादे बुनियादी सिद्धान्त पर आश्रित है। वह सिद्धान्त यह है कि लोकतन्त्रीय राष्ट्र, चाहे अपने आन्तरिक आत्मविरोध के कारण और चाहे अपने राजनीतिज्ञों की अयोग्यता के कारण, जो भी अवसर उपस्थित करें, उनका पूरा लाभ उठाया जाय। गृह युद्ध की समाप्ति के बाद से सोवियत रूस ने अपने देश से बाहर पश्चिम के विरुद्ध प्रचार स्वयं अपने ही चुने हुए आधार पर किया है। प्रचार युद्ध में सोवियत रूस को जीतने के लिए पश्चिमी राष्ट्रों की सबसे पहली शर्त यह है कि वे इस युद्ध की रणस्थली को

पश्चिमी पूंजीवाद से हटाकर स्वयं सोवियत संघ में पहुंचा दें और वहां स्वयं उसी के हथियार यानी राजद्रोहात्मक प्रचार से उस पर आक्रमण करें और शक्ति का प्रयोग सिर्फ निरुपाय होने पर ही करें।

पश्चिमी राष्ट्रों को हर सम्भव उपाय से सोवियत रूस की अभेद्य सीमाओं का भेदन करना चाहिए। पूर्वी जर्मनी में १७ जून, १९५३ को जिस ढंग का विप्लव हुआ था, उसके लिए आवश्यक सभी परिस्थितियां खुद सोवियत रूस में भी मौजूद हैं। पश्चिमी राष्ट्रों का उद्देश्य यह होना चाहिए कि जैसे भी हो, यह विप्लव हो जाय। सोवियत रूस में अनेक टैकनिकल, भौगोलिक तथा अन्य कारणों से यह विप्लव जल्दी ही गृह युद्ध का रूप धारण कर लेगा।

ज्यों ही यह आन्दोलन कुछ व्यापक रूप धारण करेगा, सोवियत रूस के नेताओं के सामने देश के भीतर इतनी बाधाएँ और कठिनाइयां पैदा हो जायंगी कि वे पश्चिमी राष्ट्रों के खिलाफ किसी भी तरह की सैनिक कार्रवाई करने का साहस नहीं करेंगे, क्योंकि पश्चिमी राष्ट्र उसके बदले में तत्काल जो कार्रवाई करेंगे, वह रूसी शासन की कमर तोड़ देने के लिए अन्तिम तिनका साबित होगी। रूसी नेताओं को अपनी आन्तरिक स्थिति सम्भालने के लिए ही अपनी सारी शक्ति लगा देनी होगी। उनमें उस समय अपने देश से बाहर के बारे में कुछ सोचने की शक्ति ही नहीं होगी।

वोर्कुटा में प्रतिरोधकारी दलों ने इस प्रकार की परिस्थितियों के लिए जो सैनिक योजनाएँ बनाई हैं, निःसन्देह, वे भौगोलिक दृष्टि से बिल्कुल सीमित हैं। हरेक कैम्प प्रारम्भ में सिर्फ अपनी ही सीमाओं के भीतर की या अपने पड़ोसी कैम्प की सीमाओं की ही बात सोचता है। उनकी अधिक से अधिक व्यापक योजना का फैलाव भी वोर्कुटा क्षेत्र से बाहर नहीं होता। फिर भी सोवियत रूस के श्रम कैम्पों के हर इलाके में इस तरह की योजनाएं पाई जाती हैं। जब वोर्कुटा में दूसरे कैम्पों—मसलन उरन्टा और इण्टा के जंगलात कैम्पों अथवा कारागण्डा या सुदूर-

पूर्व के कैम्पों से कैदी आते हैं तब हमेशा उनसे यही पता चलता है कि उन कैम्पों के प्रतिरोधकारी संगठनों की सैनिक योजनाएँ भी वोर्कुटा की योजनाओं के समान ही हैं। सोवियत रूस के प्रत्येक कैम्प में कैदियों के विचार, योजनाएँ, आकांक्षाएँ और आशा-निराशाएँ एक-सी हैं। ये डेढ़ करोड़ कैदी साम्यवाद के विरुद्ध, जिसने उन्हें गुलामी में जकड़ा हुआ है, विप्लव के लिए तैयार हैं।

उन्हें अपनी शक्ति का भान अभी से होने लगा है। स्टालिन की मृत्यु के बाद कुछ महीनों के भीतर ही वोर्कुटा में जो घटनाएँ घटने वाली थीं, उनसे उन्हें पता चल जाता कि वे क्या-कुछ कर सकते हैं। यह पश्चिमी राष्ट्रों का काम है कि वे उनके बढ़ते हुए आत्मविश्वास को और भी दृढ़ बनाएँ और सबसे पहली आवश्यकता यह है कि समस्त संसार की जनता को यह बता दिया जाय कि सोवियत शासन प्रणाली आसानी से खत्म की जा सकती है।

सोवियत रूस के भीतर उत्पन्न स्वतन्त्र प्रतिरोधकारी दलों के उद्देश्यों का समर्थन करने के साथ-साथ पश्चिमीं राष्ट्रों को रूस के इन कैदियों के साथ सहयोग की ठोस योजनाएँ भी बनानी चाहियें। उन्हें इन बन्दी कैम्पों में, जो रूस के कच्चे माल के उत्पादन क्षेत्रों के मध्य में अवस्थित हैं, हड़तालें और विप्लव करानें की ओर ध्यान देना चाहिए। किसी को इन हड़तालों को क्रियान्वित कराने की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है, यह चिन्ता प्रतिरोधकारी दल ही कर लेंगे। हड़ताल के लिए सभी आवश्यक परिस्थितियाँ विद्यमान हैं—उत्तरी महासागर के साथ-साथ आर्कंजल से बेरिंग जल डमरू मध्य तक सभी कैम्प हड़तालों के लिए तैयार हैं। पश्चिमी राष्ट्रों को उन्हें सिर्फ इशारा भर देना है। सिर्फ पर्चे गिराकर ही वहां एक विशाल विप्लव खड़ा किया जा सकता है।

वोर्कुटा में प्रतिरोधकारी दलों के सैनिक नेताओं से बातचीत करके किसी को भी सहज में यह समझ में आ जायगा कि उनमें और पश्चिमी

राष्ट्रों में सहयोग का सबसे अधिक बांछनीय रूप क्या हो सकता है। संक्षेप में वह इस प्रकार होगा।

(१) सभी कैम्पों पर पर्चे गिराकर तमाम कैदियों को आम-हड़ताल के लिए संकेत दिया जाय।

(२) हथियार, रेडियो ट्रान्समिटर, गोला-बारूद दवा-दारू और खाद्य पदार्थ गिराये जाएँ।

(३) कैदी तुरन्त ही ऐसे छापामार दल बनायें जो निर्दिष्ट स्थानों पर पन्द्रह सौ मील लम्बी रेलवे लाइन को काट सकें।

(४) मास्को के नियन्त्रण से सर्वथा मुक्त एक स्वतन्त्र गणराज्य स्थापित किया जाय जिसमें यूरोपीय और एशियाई रूस का समूचा विशाल वन प्रदेश शामिल हो। यदि कैदियों के पास हथियार होंगे तो वन-प्रदेश के इस गणराज्य पर किसी भी तरह का हमला नहीं हो सकेगा। टैंक, विमान या तोपखाना कोई भी इस विशाल छापामार प्रदेश में कार्रवाई नहीं कर सकते।

(५) इस स्वतन्त्र गणराज्य से सोवियत जनता को लक्ष्य कर रेडियो के जरिये खूब जोरदार प्रचार किया जाय जिसके दो उद्देश्य हों।

(क) "जमीन किसानों के लिए" के परम्परागत नारे के साथ किसानों को विप्लव के लिए खड़ा किया जाय।

(ख) "कारखाने मजदूरों के लिए" के नारे के साथ मजदूरों को विप्लव के लिए उभाड़ा जाय।

(६) यूक्रेन और बाल्टिक राज्यों तथा काकेशस, मध्य एशिया और सुदूर पूर्व की जनता को प्रादेशिक राष्ट्रीय स्वाधीनता प्रदान की जाय।

(७) अन्त में सेना और सोवियत रूस की जनता में तनाव पैदा कर गृह-युद्ध की-सी परिस्थितियां पैदा की जायें।

१९५३ के उल्लेखनीय वर्ष की दूसरी सनसनीपूर्ण घटना यह खबर थी कि ५३ कैदियों का एक दल मुक्त किया जा रहा है।

इस दल में सिर्फ विदेशी लोग ही थे—जर्मन, पोल, हंगेरियन और जापानी। उनकी डाक्टरी परीक्षा की गई और उनके स्वास्थ्य की बातें काफी विस्तार से दर्ज की गईं। उन्हें नये कपड़े दिये गये और जब ये लोग कैम्प से रवाना हुए तो सरकारी तौर पर उन्हें बताया गया कि वे अपने देश लौट रहे हैं। साथ ही कैम्प के अधिकारियों ने घोषणा की कि इसी वर्ष सभी विदेशी अपने घरों को लौट जायेंगे।

इससे बेरिया काफी लोकप्रिय हो गया, क्योंकि उस समय बेरिया ही तमाम बन्दी कैम्पों का इंचार्ज था और उसी के कहने से यह कदम उठाया जा सकता था।

कैदियों में जो लोग सोवियत रूस के नागरिक थे, वे इस पर कहने लगे, "यदि अधिकारी तुम्हें रिहा कर रहे हैं तो हमारी दशा में भी सुधार हो सकता है। शायद जल्दी ही सबके लिए क्षमादान की घोषणा कर दी जाय।"

कैम्प में बहुत-से कैदी बेरिया को व्यक्तिशः जानते थे। इस बात पर काफी बहस हुई कि वह किस किस्म का आदमी है।

इनमें से एक आदमी ने कहा—"मालेनकोव और मोलोतोव जिस तरह सैद्धान्तिक दृष्टि से सोचते हैं, वह उस तरह नहीं सोचता। वह स्टालिन का पूर्ण आज्ञाकारी है और पश्चिम का भी पूर्ण आज्ञाकारी हो सकता है।"

सोवियत रूस में राजनीतिक बन्दियों की यह पहली आम माफी थी। यह स्पष्ट था कि यह माफी उन्हीं कैदियों को दी गई थी जो निर्दोष थे और जिन्हें पन्द्रह वर्ष या इससे कम की सजा दी गई थी। किन्तु जो लोग रिहा होकर जा रहे थे वे अपने साथ उन सबकी जो पीछे रह गये थे, शुभ कामनाएं और आशाएं ले जा रहे थे।

कुछ समय बाद अफवाहें फैलने लगीं कि ये ५३ आदमी अपने-अपने घर पहुँच गये हैं। दो महीने बाद, जब किसी को भी इस सम्बन्ध में शक नहीं रह गया तो एक दिन मास्को से एक नया कैदी कैम्प में आया। वह मास्को के तबाला कैम्प में इन ५३ व्यक्तियों में से एक जर्मन कैदी के साथ, जिसके बारे में अन्तिम समय में यह सन्देह पैदा हो गया था कि वह किस राष्ट्र का है, रह चुका था। इस जर्मन को अपने मामलें की सफाई देने के लिए मास्को लाया गया था। उसने हमें सूचना देनेवाले इस कैदी को जो किस्सा सुनाया, वह इस प्रकार था।

"उस समय जो लोग वोर्कुटा कैम्प से रवाना हुए थे, वे सभी इस समय कोनिग्सवर्ग के पास तापिश्रो में एक विशाल तबादला कैम्प में है। बेरिया की गिरफ्तारी के समय उनकी स्वदेश यात्रा एकाएक रोक दी गई थी और अब उन्हें स्वदेश भेजने का इरादा कतई छोड़ दिया गया है। कैदियों के मामलों पर पुर्नविचार करनें के लिए एक कमीशन बैठाया गया है। समय-समय पर पुराने कैदी छांटकर वापस पूर्व की ओर भेज दिये जाते हैं।"

यह घटना बेरिया की गिरफ्तारी का सीधा परिणाम था। स्टालिन की मृत्यु के बाद उसने सबसे पहला काम सोवियत रूस के बन्दी कैम्पों से तमाम विदेशियों की रिहाई का आदेश जारी करने का किया। किन्तु उसके पतन के कारण इस आम माफी के क्रियान्वित होने में रुकावट पैदा हो गई और उसके साथ ही पश्चिम के साथ समझौता करने की उसकी सारी योजना भी, जिसका यह आम माफी एक छोटा अंग भर थी, खटाई में पड़ गई।

यद्यपि १७ जून के बर्लिन और जर्मनी के पूर्वी क्षेत्र के विद्रोह की सरकारी खबर कैम्पों में बहुत देर में प्रकाशित हुई और वह भी विकृत रूप में, तो भी जो कुछ घटित हुआ उसकी एक निष्पक्ष धारणा बना लेना कठिन नहीं था। कैदियों ने सरकारी बुलेटीनों में छपे हुए गुप्त आशयों को समझ लेना और उनके विकृत रूप को पहचान लेना खूब

सीख लिया था। इस प्रकार हर कैदी ने सहज में समझ लिया कि बर्लिन और जर्मनी के पूर्वी क्षेत्र में जो कुछ घटित हुआ वह पुलिस शासन के विरुद्ध, जिसने खुद उसे भी गिरफ्तार कर और सजा देकर बन्दी बना रखा था, एक विद्रोह था।

कैन्टीन की दीवारों पर चिपके 'प्रावदा' अखबार को घेरकर बहुत बड़ी भीड़ खड़ी हो गई। सिर्फ वही लोग उसे अच्छी तरह पढ़ सकते थे जो आगे खड़े थे।

"ए, बुड्ढे !," पीछे खड़ा कोई व्यक्ति चिल्लाया, हम दिन भर इस इन्तजार में नहीं खड़े रह सकते कि कब तुम सारा अखबार पढ़कर खत्म करते हो। हमें दूसरी पाली में काम करने जाना है। जोर से पढ़ो!"

बूढ़ा यूक्रेनियन कुलक (सम्पन्न किसान) आहिस्ता-आहिस्ता पढ़कर सुनाने लगा कि 'प्रावदा' में क्या लिखा है।

सोवियत पत्रों ने स्वीकार किया था कि विद्रोह हुआ है, किन्तु साथ ही यह भी कहा था कि उसे दबा दिया गया है। उसमें लिखा था, "आडेनोर (पश्चिमी जर्मनी के प्रधान मन्त्री) की ओर से पैदा की गई यह भद्दी उत्तेजना" सफलतापूर्वक दबा दी गई है और पुनः शान्ति और अमन कायम कर दिया गया है। इस रूप में पेश की गई यह खबर भी उत्साह पैदा करनेवाली अवश्य थी, किन्तु इससे अधिक कुछ नहीं। विभिन्न खबरों पर लोगों में उत्सुकता से चर्चा होने लगी, किन्तु उनमें ऐसा कोई भाव प्रतीत नहीं हुआ कि इस घटना का हमें भी तत्काल कोई लाभ होगा।

एस० ई० डी० की केन्द्रीय समिति की अन्तिम रिपोर्ट से हमारे लिए यह स्पष्ट था कि यह विद्रोह आडेनोर की ओर से नहीं भड़काया गया था, बल्कि वास्तव में ही खुद मजदूर वर्ग की ओर से प्रारम्भ किया गया हड़ताल-आन्दोलन था।

"एस० ई० डी०," बूढ़ा यूक्रेनियन पढ़ने लगा, "भविष्य में मजदूर वर्ग की ओर अपना मुंह फेरेगा।"

अट्टहास के बीच पीछे से किसी ने चिल्लाकर कहा, "और अब तक उसने उनकी ओर क्या फेरा हुआ था ? अपनी पीठ ?"

१७ जून के बाद चौदह बर्लिन निवासियों का एक दल कैम्प नं० ६ में आया। इनमें अधिकतर छात्र थे, जो पश्चिमी क्षेत्र में राजनीति में बहुत सक्रिय भाग ले रहे थे। इनमें से कुछ लोग अप्रैल, १९५३ में ही गिरफ्तार किये गये थे, इसलिए १७ जून को वे कार्लशोर्स्ट या लिख्टन-वर्ग की जेलों में एन० के० वी० डी० के कैदी थे। उन्होंने हमें बताया कि इससे रूसियों को कितना आघात लगा था और कितनी जबर्दस्त निराशा हुई थी।

"एकाएक लड़ाई के सामान से पूरी तरह लैस सैनिकों ने आकर जेल को कब्जे में ले लिया। वे दिन-रात बिल्कुल तैयार रहते थे। हमें कुछ दूरी पर गोलियों की आवाजें सुनाई देती रहती थीं। सैनिकों के रवैय्ये और उनकी तैयारियों से यह जाहिर था कि उन्हें जेल पर हमले की आशंका है। हम सबको थोड़ी-सी कोठरियों में जानवरों की तरह भर दिया गया, हालांकि इस बारे में बड़ी कड़ी पाबन्दी है कि जिन कैदियों से पूछ-ताछ और जिरह हो रही हो, उन्हें एक दूसरे से मिलने न दिया जाय। हम लोगों ने जो कोठरियां खाली कीं उनमें १७ जून को पकड़े गये व्यक्ति भर दिये गये। बाद में हमें उनके साथ एक-ही कोठरी में बन्द कर दिया गया और जब तक हम वहां से हटाये नहीं गये तब तक हम उनके साथ ही रहे। उनमें से कुछ लोग हमारे साथ वोर्कुटा भी आये।"

दुर्भाग्य से कैम्प नं० ६ में उन लोगों में से कोई नहीं आया, जिन्होंने १७ जून के विद्रोह में भाग लिया था। किन्तु जो लोग उनके साथ जेल की कोठरियों और रेल के छकड़ों में रहे थे उनके विवरणों से हमारे

लिए उस विद्रोह की एक निष्पक्ष और विस्तृत तसवीर बना लेना सम्भव था।

मेरे सामने ही एक रूसी प्रतिरोधकारी दल के खुफिया अफसर और बर्लिन से आये तीन छात्र कैदियों में बातचीत हुई थी, जो कुछ इस प्रकार थी।

"अच्छा, तो बर्लिन के हड़तालियों की माँगें क्या थीं?"

"पहली मांग यह थी कि हर मज़दूर के लिए न्यूनतम काम का जो नया स्तर निर्धारित किया गया है, वह रद्द कर दिया जाय और पुराने स्तर पर ही पूरी मज़दूरी दी जाय। इसके अलावा रहन-सहन का खर्चा भी कम किया जाय। इसके बाद रूसी क्षेत्र के लोगों ने निम्न माँगें और भी कर दीं।

(१) स्वतन्त्र चुनाव हों।

(२) तमाम राजनीतिक कैदी छोड़े जायें।

(३) जर्मन एन० के० बी० डी० और पूर्वी जर्मनी की पुलिस भंग कर दी जाय।

(४) दैनिक काम का न्यूनतम स्तर, टैक्स और मूल्य कम किये जायें।

(५) जर्मनी के चारों क्षेत्रों की सीमाएँ खत्म कर दी जायें।

(६) सरकार इस्तीफा दे दे और एक स्वतन्त्र संसद नई सरकार को चुने।

रूसी इस उत्तर से बड़ा प्रसन्न हुआ। बोला, "खूब। हमें इसमें बस एक ही बात जोड़नी पड़ेगी कि सोवियत रूस की सब जातियों को अलग-अलग राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्रदान की जाय। बाकी सारी मांगें हम अपने कार्यक्रम में ज्यों की त्यों शामिल कर सकते हैं। किन्तु पश्चिमी राष्ट्रों की इस पर क्या प्रतिक्रिया थी? क्या उनके ख्याल में ऐसी हड़ताल सम्भव थी?"

"नहीं, बल्कि वे तो इससे हक्के-बक्के रह गये।"

"क्या पश्चिमी राष्ट्रों ने स्टालिन को मृत्यु के बाद के लिए कोई कार्यक्रम तैयार कर रखा है?"

"क्या मतलब? कैसा कार्यक्रम?"

"मेरा मतलब है सभी दिशाओं में आक्रमण का कार्यक्रम। प्रोपेगेंडा, कूटनीति और नैतिक मोर्चा, सभी में रूस पर आक्रमण—और यदि ये सब भी कारगर न हों तो सैनिक आक्रमण भी।"

"नहीं।"

"क्यों नहीं?"

सभी छात्रों ने एक साथ उत्तर दिया, "किसी की कोई दिलचस्पी नहीं है।"

"सोवियत रूस में क्या-कुछ हो रहा है, इसकी किसी को कुछ भी जानकारी नहीं है?"

"पश्चिम में कोई भी यहाँ की स्थिति को महसूस नहीं करता।"

"क्या आइज़नहोवर ने १७ जून को घटनाओं के बारे में कोई वक्तव्य जारी किया?"

"नहीं।"

"बाद में भी नहीं, जबकि सारी घटना को समझ लेना सम्भव हो गया?"

"नहीं।"

"चर्चिल ने क्या कहा?"

"कुछ नहीं।'

"क्या पश्चिमी बर्लिन से मित्र-राष्ट्रों ने इस विद्रोह में कोई सहायता दी?"

"नहीं।"

रूसी जानता था कि बर्लिन के मेयर अर्न्स्ट रायटर उस निर्णायक घड़ी में बाहर गये हुए थे। यह बात उसने 'लितेरातुर्नाया गाज्येता' में पढ़ी थी।

"रायटर वियेना से वापस क्यों नहीं आ गया?"

दो छात्र इसका उत्तर नहीं जानते थे। किन्तु तीसरे की एक ऐसे व्यक्ति से मुलाकात हो चुकी थी जिसने इस विद्रोह में भाग लिया था और पश्चिमी बर्लिन भाग गया था, किन्तु बाद में छिपकर पूर्वी क्षेत्र में आने पर गिरफ्तार कर लिया गया था। उसे इस बात की अच्छी जानकारी थी कि पश्चिमी बर्लिन में क्या हुआ था। उसने उक्त छात्र को बताया कि रायटर ने जब अमरीकियों से बर्लिन लौटने के लिए विमान मांगा तो उन्होंने उसे देने से इन्कार कर दिया।

"क्यों?"

"उन्हें भय था कि स्थिति के अधिक गम्भीर हो जाने पर युद्ध भी छिड़ सकता है।"

"किन्तु जेलखानों की खबरों से यह स्पष्ट है कि रूसी भी डर रहे थे कि कहीं युद्ध न छिड़ जाय। खैर, अच्छा हमें बताओ, रूसी अखबारों में हमने देखा है कि मित्र-राष्ट्रों के पश्चिमी बर्लिन और पश्चिमी जर्मनी में रेडियो स्टेशन हैं जो रूसियों के विरुद्ध प्रचार कर रहे हैं?"

"हाँ, यह ठीक है।"

"क्या इन स्टेशनों ने विद्रोह का समर्थन किया?"

"क्या मतलब?"

"यही, मसलन, पहले दिन, जबकि यह बिल्कुल स्पष्ट रूप में समझा जा सकता था कि क्या होनेवाला है, क्या इन स्टेशनों ने समूचे पूर्वी क्षेत्र में आम हड़ताल का ऐलान किया?"

सभी छात्रों ने एक-साथ उत्तर दिया, "नहीं।"

"क्यों नहीं किया?"

"हमसे मत पूछो!"

"मेरा ख्याल है शायद मैं तुम्हें इसका कारण बता सकता हूँ," रूसी ने कहा, "इन रेडियो स्टेशनों पर उनकी अलग-अलग सरकारों का नियन्त्रण है। क्यों, नहीं? १७ जून को उन्हें अपने सरकारी

अधिकारियों से पूछना पड़ा होगा कि वे क्या करें। और सरकारी अधिकारी तो कभी भी जनता का विद्रोह पसन्द नहीं करते, चाहे वह कहीं भी हों।"

दो महीने बाद जब मैं बर्लिन पहुँचा तो मुझे जो कुछ घटित हुआ था उसका पूर्ण किन्तु निराशाजनक सच्चा विवरण मिला। यह अच्छा ही है कि वोर्कुटा में लोगों को इसकी जानकारी नहीं है।

रूसी ने अपनी बात जारी रखी, क्या 'प्रावदा' का यह कहना सही है कि आडेनौर की सरकार में पूर्वी क्षेत्र के मामलों के लिए एक अलग मन्त्री है ?"

"हाँ, यह यह ठीक है।"

"उसने १७ जून को क्या किया ?"

"उसने एक भाषण दिया था जिसमें चेतावनी दी थी कि कोई भी व्यक्ति समझौता न करे।"

"तब पश्चिम के मजदूरों या ट्रेड यूनियनों का क्या कहना था ? क्या पश्चिमी बर्लिन के मजदूर पूर्वी क्षेत्र के अपने साथियों की सहायता करने के लिए आये ?"

"नहीं।"

"क्यों नहीं ?"

छात्रों ने सिर हिलाकर न जानने का भाव प्रकट किया।

किन्तु क्या पश्चिमी बर्लिन के ट्रेड यूनियन नेताओं ने अपने श्रमजीवी वर्ग से पूर्वी क्षेत्र में अपने साथियों की सहायता के लिए कोई अपील की ? क्या ब्रिटिश मजदूर दल या फ्रांसीसी समाजवादी दल ने भी पूर्वी जर्मनी के मजदूरों का समर्थन नहीं किया ?"

किसी छात्र ने इस घटना के समय ऐसी कोई बात नहीं सुनी थी, हालांकि उनमें से एक नें कहा कि विद्रोह खत्म हो जाने के बाद शायद उसने सहानुभूति या समर्थन के ऐसे किसी सन्देश की बात सुनी थी।

"अच्छा, देखो", रूसी बोला, "असल प्रश्न यह है कि क्या र्बालिन में या पश्चिमी देशों की राजधानियों में किसी ने यह अनुभव किया कि यदि हड़ताल एक सप्ताह भी और चल जाती तो वह सभी जनवादी (साम्यवादी) राज्यों और खुद रूस में भी फैल जाती ? क्या पश्चिम वालों ने यह महसूस किया कि यदि उन्होंने जरा जल्दी से कदम उठाया होता तो वे सोवियत रूस के मौजूदा शासन को उलट डाल सकते थे ?"

"नहीं, मेरा ख्याल है कि पश्चिम के लोग ऐसा नहीं सोचते ।"

"तो फिर पश्चिम ने १७ जून की घटना के महत्व को ठीक-ठीक न समझने के सिवाय किया ही क्या ? उन्होंने उससे क्या नतीजे निकाले ? भविष्य के लिए उनका क्या कार्यक्रम है ?"

"इस समय जो लोग वहाँ गिरफ्तार किये जा रहे हैं, वे जब छः महीने बाद यहाँ आने लगेंगे, तो वे ही आपको यह बता सकेंगे । आपको उसके उत्तर के लिए १६५४ की गर्मियों तक इन्तजार करना पड़ेगा !"

जर्मनों ने अवश्य ही १७ जून की घटना से वही निष्कर्ष निकाला जो वे निकाल सकते थे । उन्होंने इस विद्रोह के शहीदों को भी दफना दिया और उनकी कहानियाँ बन गईं । उनके दुःखपूर्ण इतिहास के पिछले ४० वर्षों में हरेक युग के अपने-अपने यशस्वी शहीदों की कहानियाँ हैं—लांगेमार्क के शहीदों से फेल्डहेर्नहाले के वीरों और २० जुलाई एवं १७ जून के शहीदों तक ।

किन्तु जो बात न उन्होंने और न पश्चिमी राष्ट्रों ने अब तक अनुभव की है वह यह है कि सोवियत रूस और उसके पिछलग्गू राज्यों में एक नये सर्वहारा वर्ग का उसी पद्धति से शोषण किया जा रहा है, जिस कार्लमार्क्स ने अपने आदिमयुगीन पूंजीवाद के विश्लेषण में वर्णन किया है । पूर्व में आज जो प्रणाली प्रचलित है वह पश्चिम के औद्योगिक राज्यों की उस समय की बुनियादी अर्थ-व्यवस्था से मिलती-जुलती है, जबकि वे १६ वीं शताब्दी के मध्य में अपने औद्योगिक विकास की नींव डाल रहे थे । उस औद्योगिक विकास के समय भी ठीक वही

लक्षण प्रकट हुए थे जिनसे सोवियत रूस का मजदूर वर्ग आज पीड़ित है—अर्थात् शक्ति से अधिक काम, काम की तुलना में कम मजदूरी और सामाजिक दुर्दशा। प्रारम्भिक युग की पूंजीवादी व्यवस्था कम से कम एक बात में इस व्यवस्था से अधिक मानवतापूर्ण थी और वह यह कि उसने ऐसे गुलाम मजदूरों की, जिन्हें कतई स्वाधीनता न हो, फौज तैयार नहीं की। मार्क्स ने कहा था, "कारखाना एक ऐसी जेल है जहाँ से मजदूर हर रोज रात को रिहा किया जाता है और दूसरे दिन सुबह लौट आता है।" उनकी यह परिभाषा आखिर उसी राज्य में चरितार्थ हुई जो उनके नाम पर स्थापित किया गया है।

अब आखिरकार ये गुलाम भी अपने अत्याचारियों के विरुद्ध खड़े होने लगे हैं—बर्लिन में, वोर्कुटा में, नारिल्स्क में और साइबेरिया में। वे अंग्रेज या फ्रांसीसी मजदूर की श्रेणी के ही हैं। वे उस शासक वर्ग को, जो उन्हें गुलामी में जकड़े रखता है, उलट डालने के लिए तैयार और कृतसंकल्प हैं। किन्तु ऐसा करने के लिए उन्हें पश्चिम की सहायता की आवश्यकता है।

पश्चिम के "पूंजीवादी" शासक वर्गों की स्थिति के बारे में एक अजीब बात यह है कि सोवियत रूस के साम्यवादी शासक वर्गों को उलटने के लिए उन्हें उन्हीं मजदूर वर्गों का उपयोग करना पड़ेगा जिन-से सोवियत रूस खुद उनके विरुद्ध कार्रवाई करता है। उन्हें सिर्फ मार्क्स के विश्लेषण को उल्टा करना होगा।

१७ जून की घटना का सोवियत रूस के सर्वहारा वर्ग पर ठीक वही प्रतिक्रिया हुई जो सोवियत रूस हमेशा पश्चिमी देशों के मजदूर वर्ग पर पैदा करना चाहता है। किन्तु यह कल्पना करना भूल होगी कि रूसियों ने भी इस घटना की वैसी ही उपेक्षा की जैसी कि पश्चिमी राष्ट्रों ने। एक बात बिल्कुल निश्चयपूर्वक कही जा सकती है और वह यह कि सोवियत सरकार ने १७ जून की घटनाओं का अमरीका, ब्रिटेन या पश्चिमी जर्मनी की अपेक्षा अधिक पूर्ण विश्लेषण किया।

यह बात तो समय ही बतायेगा कि क्या पश्चिमी राष्ट्रों को उस प्रक्रिया को अधिक तीव्र करना चाहिए जिससे कि सोवियत रूस की जनता को अपने अत्याचारियों के विरुद्ध अपनी सामाजिक शक्ति का भान होता है। इसके लिए पश्चिमी राष्ट्रों को इन लोगों की मांगों को अपनी माँगें मान लेना चाहिए। उन्हें एक स्पष्ट सामाजिक कार्यक्रम बना लेना चाहिए और गुलाम जातियों व राष्ट्रों की स्वतन्त्रता की मांग का साथ देना चाहिए। उनकी मांगें समस्त पीड़ित और पददलित राष्ट्रों की माँगें होनी चाहिएँ, वैसी ही जैसी कि संक्षेप में १७ जून, १९५३ को पूर्वी क्षेत्र के हड़तालियों ने की थीं।

इस साल भी वही प्रक्रिया जारी रही जो १९५१ से बराबर आहिस्ता-आहिस्ता चली आ रही थी, अर्थात् वोर्कुटा के कैम्पों में कैदियों की रहन-सहन की परिस्थियों में उल्लेखनीय सुधार। किन्तु यह किसी मानवतापूर्ण दृष्टिकोण या उनके प्रति अनुकम्पा से नहीं किया गया। वर्षों से सोवियत सरकार लाखों मानवों को बिना उनकी कोई चिन्ता किये अपने कैम्पों में मरने दे रही थी। किन्तु उनकी मृत्यु-संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हो जाने से उनकी संख्या क्रमश: इतनी कम होती जा रही थी कि वोर्कुटा के आर्थिक विकास का सारा कार्यक्रम ही अत्यधिक खतरे में पड़ गया था। १९५३ की गर्मियों में भी खानों में बीस फी सदी मजदूर कम हो गये थे। उदाहरण के लिए कैम्प नं० ६ के साथ सम्बद्ध खान ने कैम्प से तीन सौ और मजदूर मांगे किन्तु वे उसे मिले नहीं। कैदियों के स्वास्थ्य की भयंकर स्थिति के कारण मजदूरों की संख्या में निरन्तर और तीव्र गति से ह्रास हो रहा था। और आज भी खानों में उत्पादन शायद और कम होताजा रहा है।

मजदूरों की संख्या में कमी आज सारे रूस में ही आम हो गई है। इसके दो कारण हैं, एक तो युद्ध में बहुत भारी संख्या में रूसियों का हताहत हो जाना और दूसरा लाखों व्यक्तियों का, जो साधारणत: उत्पादन के काम में लग सकते, स्थायी रूप से सेना में भर्त्ती किया

जाना। लड़कों, लड़कियों और स्त्रियों की इतनी विशाल संख्या में कारखानों में भरती की जा रही है, जितनी बड़ी संख्या में रूस के इतिहास में पहले कभी नहीं की गई। १६५३ की गर्मियों में जब दक्षिण की ओर से पहले की भाँति गोभी और अन्य सब्जियों से भरी रेलगाड़ियाँ कैम्पों के लिए आने लगीं तो हमने देखा कि रेलों पर सभी कर्मचारी स्त्रियाँ हैं। उन्होंने हमें बताया कि एक साथ सभी आयुओं के आदमियों के काम पर बुला लिये जाने के कारण उनके इलाके के सामूहिक फार्मों में प्रायः आदमी रहे ही नहीं। विभिन्न योजनाओं की पूर्त्ति की प्रकाशित खबरों में आम तौर पर कोमसोमोलों (युवक कैम्पों) की सूचि में सोलह, सत्रह और अठारह साल की आयु के युवकों के नाम ही सबसे ऊपर रहते थे।

इसलिए सरकार विशुद्ध आर्थिक आवश्यकता के कारण ही कैम्पों की हालत सुधारने के लिए मजबूर हुई थी। १६५३ में कैदियों के लिए बाकायदा मजदूरी बाँधी गई। अब हर कैदी को उस पैसे में से एक निश्चित भाग मिलता है जो खानें, रेलवे या नगर अधिकारी कैम्पों को उनसे भाड़े पर लिये गये मजदूरों के बदले में देते हैं।

उदाहरण के लिए खान कैम्प को हर मजदूर के पीछे बारह सौ रूबल प्रति मास देती है। इस 'शाहाना' रकम में से भी बहुत-से महत्व-पूर्ण खर्चे काटे जाते हैं—जैसे कि मकान, भोजन और कपड़े और उसके ऊपर पहरेदारी का खर्च (कैदियों को अपने चारों ओर लगाये गये कंटीले तारों का खर्च भी देना पड़ता है)। कैदी को सब मिलाकर महीने में तीन सौ रूबल से अधिक नकद मजदूरी नहीं लेने दी जाती। यदि वह इससे अधिक कमा लेता है तो वह राशि उसके हिसाब में जमा कर दी जाती है और जब उसे रिहा किया जाता है तो उसे दे दी जाती है। बहुत-से कैदियों को कोई भी आमदनी नहीं होती। कैम्प के भीतर बहुत-से पदों के लिए कोई वेतन नहीं है (जैसे कि बैरकों, रसोईघर या बढ़ईखाने में काम करनेवालों के लिए)। वहाँ काम करनेवाले कैदियों

को सिर्फ "आज़ादी से रहने" का अधिकार होता है। कैम्प से बाहर इमारतों के निर्माण में काम करनेवाले दलों के लोगों को लगभग सौ रूबल प्रतिमास आमदनी होती है, किन्तु तभी जबकि वे न्यूनतम निर्दिष्ट काम पूरा कर लें। बहुत-सी योजनाओं में न्यूनतम काम इतना अधिक निर्धारित किया जाता है कि बहुत-से कैदी उसे पूरा करने में समर्थ नहीं होते। ऐसे कैदी बीस से चालीस रूबल तक प्रति मास कमाते हैं। जो कैदी न्यूनतम निर्धारित मात्रा में से साठ फी सदी से कम काम करता है उसे कोई मज़दूरी नहीं मिलती। यही नहीं, उसे विशेष "दंडात्मक राशन" मिलता है।

सुधार का दूसरा उपाय कैंटीन चालू करना है। अब कैम्प में खाने का सामान खरीदना सम्भव हो गया है, हालांकि उसकी मात्रा सीमित होती है। कैंटीनों में मुख्यतः मुरब्बे, डिब्बाबन्द मछली, चीनी, मार्गरीन और सस्ते कपड़े होते हैं। यह माल भी नियमित रूप से नहीं आता। कभी-कभी महीनों तक चीनी दुर्लभ रहती है। इसके अलावा नगर के अधिकारी इन कैंटीनों में सिर्फ वही चीज़ें जाने देते हैं जिन्हें महंगी होने के कारण नगर के "स्वतन्त्र" नागरिक नहीं खरीद पाते। उदाहरण के लिए कैंटीनों में चॉकोलेट के डिब्बे ४० रूबल प्रति किलो के हिसाब से मिलते हैं।

हरेक कैम्प में एक तथाकित "स्वतन्त्र" रेस्टोरेंट भी खोला गया है। वहाँ पैसे देकर गोभी का शोरबा, काशा, मैकरोनी और कभी-कभी एक विशेष खाद्य पदार्थ के रूप में आलू का शोरबा खरीदा जा सकता है। अधिकतर खानों में काम करनेवाले कैदी हर रोज़ स्वतन्त्र रैस्टोरेंट और कैम्प का भोजनगृह, दोनों में खाना खाते और वस्तुतः अपनी आमदनी का काफी बड़ा भाग वहाँ खर्च कर देते हैं।

कैम्प के अधिकारियों ने कैदियों को कपड़े भी अच्छे देने प्रारम्भ किये। १९५३ में पहली बार नीचे पहनने के गर्म कपड़े दिये गये, और

इसके लिए खानों में या बाहर की इमारतों में काम करनेवालों को प्राथमिकता दी गई।

पुरानी बैरकें गिरा दी गईं और उनकी जगह नई बनाई गईं। इन नई बैरकों और १६४३ से १६४७ तक बनाई गई बैरकों की कोई तुलना नहीं हो सकती। नई बैरकें ऊंची और अधिक खुली हैं और कैदियों के दृष्टिकोण से वे पुरानी बैरकों से कहीं बढ़िया हैं।

कैम्प नं० ६/१० में एक चीरफाड़ का कमरा बनाया गया जिसके लिए सारी लकड़ी कैदियों ने खान से चुराई थी। यह चीरफाड़ का कमरा वोर्कुटा भर में सबसे अच्छा है और सारा का सारा उन जर्मन कैदियों द्वारा बनाया गया है जिन्हें बीमार करार दे दिया गया था।

कैम्प नं० ६ में भी अस्पताल के लिए नई बैरक और एक नया चीरफाड़ का कमरा बनाया गया।

पुस्तकालय में अधिक किताबें आ गईं। थियेटर में अधिक नाटक होने लगे। जनरल देरेव्यांको ने एक सांस्कृतिक नाटक मंडली बनाने का आदेश दिया जो हर कैम्प मे जाकर मनोरंजन कर सके।

हरेक कैम्प में फुटबाल की टीमें बनाई गईं; विभिन्न कैम्पों में टूर्नामेंट होने लगे जिनमें लोगों ने खूब रुचि लेना शुरू किया।

एक दिन ऐसे ही एक खेल के समय चार इंजनोंवाला एक बमवर्षक विमान वोर्कुटा इलाके में बहुत उंचाई पर उड़ता हुआ आया।

एक रूसी ने मेरी ओर घूमकर कहा, "अगर ये अमरीकी हों और हमारे फोटो ले रहे हों तो उन्हें बड़ा ताज्जुब होगा कि वहां नीचे क्या हो रहा है।"

रहन-सहन का सारा स्तर ही ऊंचा किया गया। अब कोई भूखा नहीं रहता था।

भोजन की दिन प्रति दिन की आवश्यक चिन्ताओं से मुक्त होकर कैदियों को दूसरी खराबियों पर सोचने का अवसर मिला और वे अपनी

समूची स्थिति पर विचार करने लगे। उन्होंने जल्दी महसूस कर लिया कि यद्यपि इधर-उधर कुछ सुधार कर दिया गया है तो भी उनका बुनियादी कष्ट ज्यों का त्यों है। भोजन अच्छा मिलने लगा है किन्तु उनकी सजाएं जैसी की तैसी हैं। सरकार ने उन्हें दिमागी खुराक दी थी और सचमुच उनका दिमाग निरन्तर विद्रोह की ओर दौड़ने लगा।

अध्याय ११

हड़ताल

सोवियत रूस में अपने निवास के पहले तीन वर्षों में मैंने कई असम्भव चीजें अनुभव की थीं। किन्तु यह खयाल मुझे कभी नहीं आया था कि मजदूरों के पितृ देश में, विजयी सर्वहारा के गढ़ में, भी मुझे बाकायदा एक मुकम्मिल हड़ताल देखने का अवसर मिलेगा—दस हजार से अधिक खान मजदूरों की लगातार कई सप्ताह तक हड़ताल, जिसमें हड़ताल कमेटियाँ, नारे, पर्चे और यहां तक कि वफादार मजदूर आदि हड़ताल के सभी उपादान मौजूद हों और जो हर तरह से सन् १९१२ में साइबेरिया में लेना गोल्डफील्ड्स कम्पनी की खानों में हुई उस ऐतिहासिक हड़ताल के जैसी ही हो, जिसमें जारशाही की पुलिस ने हड़तालियों पर वैसे ही गोलियां चलाई थीं, जैसी कि १९५३ की हड़ताल में साम्यवादियों ने चलाईं।

निःसन्देह यह हड़ताल कदापि न हो पाती, यदि कैम्पों में पहले से ही गुप्त प्रतिरोधकारी दल मौजूद न होते। ये दल खास तौर से हड़ताल के लिए ही नहीं बनाये गये थे। वे पहले से ही मौजूद थे। किन्तु उनसे किसी भी प्रकार की आक्रामक कारंवाई के लिए आदमी मिल गये और आवश्यक टैकनिकल आधार प्राप्त हो गया। कुछ हद तक हड़ताल के नेता और प्रतिरोधकारी दलों के नेता एक ही थे और यदि किसी कैम्प में हड़ताल का नेतृत्व प्रतिरोधकारी दलों के नेता स्वयं नहीं कर रहे थे तो वहां भी यह नेतृत्व कम से कम उनके द्वारा चुने गये लोगों के हाथ में था। हड़ताल के संचालन के लिए नेताओं के पास बाकायदा एक बना-बनाया संगठन मौजूद था जो बड़ी सावधानी के साथ बनाया गया था और जिस पर पूरी तरह भरोसा किया जा सकता था।

यह कहना भी कठिन है कि यदि जर्मनी के रूसी क्षेत्र में १७ जून, १९५३ को हुई हड़ताल की मिसाल सामने न होती तो भी यह हड़ताल अवश्य होती। १७ जून से पहले कैदियों ने सामूहिक हड़ताल की सम्भावना कभी सोची भी नहीं थी और न ही प्रतिरोधकारी दलों के नेताओं ने उसकी कोई योजना तैयार की थी। उनकी सब तैयारियां लड़ाई की सम्भावना को लक्ष्य में रखकर की गई थीं। किन्तु १७ जून ने सारी स्थिति बदल दी। कैदियों को एकाएक महसूस हुआ कि वे भी कुछ कर सकते हैं। लड़ाई के लिए—जो उस समय तक उनकी एकमात्र आशा थी—वे पश्चिमी राष्ट्रों पर ही पूर्णतः निर्भर थे, किन्तु हड़ताल वे स्वयं कर सकते थे। इस बात को अच्छी तरह उनके दिमाग मे बैठने में कुछ समय और लग गया। हड़ताल का रोजमर्रा का बोझ कैम्प के आम आदमी को ही वहन करना पड़ता। इसलिए उसके बारे में पूरा सोच-विचार करने में कुछ समय लगना ही था।

हड़ताल का विचार परिपक्व होने में १७ जून से जुलाई की समाप्ति तक का सारा समय लग गया। किन्तु एक बात निश्चित है कि यदि १७ जून की आम हड़ताल पूर्वी जर्मनी में एक सप्ताह भी चल जाती तो वोर्कुटा में भी तुरन्त ही हड़ताल प्रारम्भ हो जाती। वहां हालात बहुत खिचावपूर्ण थे; और हर कोई भीतर ही भीतर अनुभव कर रहा था कि विस्फोट होने में देरी नही लगेगी।

मैंने 'ओगोनोक' की पुरानी प्रति, जिसमें मैं अभी-अभी कैंटरबरी के डीन (बड़ा पादरी) का चित्र देख रहा था, मैंने एक ओर रख दी। ऐसा मालूम होता है कि वे सोवियत रूस के बारे में बहुत-सी प्रशंसा की बातें कहते थे। तब से क्यों न एक बार भी यहां हमें देखने आये ?

जुलाई, १९५३ की ग्रीष्म ऋतु के एक दिन करीब मध्य-रात्रि का समय था। मेरी बैरक का कपड़े सुखाने का कमरा लगभग खाली था। एक कोने में एक छोटी मेज पर दो कैदी 'डोमिनो' खेल रहे थे। मैं

अपनी आग बुझा सकता था। उस दिन वर्षा नहीं हुई थी, इसलिए सुखाने को कुछ भी नहीं था।

मैंने दोनों कैदियों से कहा कि मैं दूसरी बैरक में अपने एक मित्र से मिलने जा रहा हूँ। (वास्तव में सब दरवाजे बन्द समझे जाते थे किन्तु पहरेदार अक्सर बेपरवाह रहते और उन्हें खुला रहने देते)।

"फिक्र मत करो, हम कोई चोरी नहीं होने देंगे।"

मैंने जार्ज को अपनी बैरक के सामने एक बेंच पर बैठे पाया।

जार्ज इंजीनियर था। हमने एक साथ अनेक दलों में से होकर अपनी कैम्प की लम्बी जीवन-यात्रा पार की थी। हमने एक साथ नीवें खोदी थीं, ईंटें फेंकी थीं, कंकरीट मिलाया था, गारा ढोया था और पेड़ों के तने गाड़ियों पर से उतारे थे। किन्तु वे सारी मंजिलें पीछे रह गई थीं। अब हम सुरक्षित हो गये थे। इन वर्षों में हमारी सेहत बर्बाद हो गई थी और हम कठोर काम के अयोग्य अशक्त लोगों की सूचि में शामिल कर लिये गये थे। और अब एक बैरक के सामने एक बेंच पर इकट्ठे बैठकर इस लम्बी ग्रीष्म ऋतु की मध्य रात्रि में टंड्रा का सौन्दर्य निहार रहे थे।

"चाय पीना चाहते हो ?" जार्ज ने पूछा।

"हाँ, जरूर।"

कुछ सौ गज की दूरी पर उत्तर-पश्चिमी कैम्पों की ओर जानेवाली सड़क थी। इसके पीछे रेल की लाइनें यहाँ से फटती थीं—एक लाइन खानों को जाती थी और दूसरी सीधी जाती हुई क्षितिज के पास टंड्रा में अदृश्य हो जाती थी। उसका अन्त ५० मील उत्तर में उत्तरी महासागर के एक बन्दरगाह पर होता था।

"एक बात मेरी समझ में नहीं आ रही," जार्ज ने कहा, "कल शाम से उन खानों से कोयले का एक भी छकड़ा नहीं आया है। वहाँ जीवन का कोई लक्षण नहीं दीख पड़ता। इंजन खाली छकड़े वहाँ ले जा रहा है, किन्तु वहाँ से कोयला नहीं ला रहा।"

"शायद कोई टैकनिकल गड़बड़ है।"

"मेरा ख्याल ऐसा नहीं है। अगर एक ही खान की बात होती तो शायद यही कारण होता, किन्तु तीन खानों में इसी तरह की हालत है!"

"करीब डेढ़ बजे रात की पाली के लोग लौटे और उन्होंने बताया कि खान नं० ७ में हड़ताल हो गई है। एक इंजन ड्राइवर ने, जो खान नं० ७ में था और भरे हुए छकड़े वहाँ से लेकर आता था, उन्हें यह बात बताई थी।

इस खबर से बिजली की लहर-सी दौड़ गई। हम घंटों तक वहीं खड़े उस पर बहस करते रहे।

दूसरे दिन और भी विस्तार से सारी बातें सामने आने लगीं। किन्तु ये अधिकतर अफवाहें थीं। बहुत-सी बेवकूफी भरी अफवाहें शायद खुद एन० के० वी० डी० ने लोगों को गड़बड़ में डालने और सही बात पर पर्दा डालने के लिए उड़ाई थीं।

किन्तु एक बात बिल्कुल स्पष्ट रही और वह यह कि खान नं० ७ में हड़ताल हो गई थी। लेकिन इंजिन अब भी वहाँ से कोयले से लदे पुराने छकड़े लेकर आ रहे थे। क्या इसका अर्थ यह था कि उसी लाइन पर दूसरी खानों में अभी तक काम हो रहा था?

प्रारम्भ में वास्तविक घटना की सही जानकारी प्राप्त कर लेना असम्भव था। किन्तु बाद में सब बातें आहिस्ता-आहिस्ता स्पष्ट होने लगीं।

खान नं० ७, १४/१६ और २९ में निश्चित रूप से हड़ताल थी। इसके अतिरिक्त हड़ताली खानों के समीपस्थ नये बड़े बिजली घर के मजदूरों ने भी काम छोड़ दिया था।

इन घटनाओं की भूमिका वही थी, जिसकी कुछ झाँकी हम पहले ही अपने कैम्पों से ले चुके थे।

कुछ दिन पूर्व वोर्कुटा की ओर से कैदियों की एक स्पेशल ट्रेन हमारे

कैम्प के पास से होकर गुजरी। छोटी-छोटी खिड़कियों की सलाखों के पीछे हमें कैदियों के चेहरे दीख पड़े।

"तुम कहाँ से आ रहे हो ?" हमारे आदमियों ने पूछा।

"कारागंडा से।"

गाड़ी आहिस्ता-आहिस्ता खान नं० ७ की ओर जानेवाले बड़े मोड़ की ओर होकर आगे बढ़ गई और एक साइडिंग में खड़ी हो गई।

दूसरे दिन गाड़ी खाली लौट आई।

तीन दिन बाद खान नं० ७ में हड़ताल फूट पड़ी। कारागंडा के लोगों ने ही यह हड़ताल शुरू की थी।

घटना इस प्रकार थी।

कारागंडा इलाके में कैदी आबोहवा तथा अन्य दृष्टियों से हमारी अपेक्षा अधिक अच्छी हालत में रहते थे। किन्तु कारागंडा के बारे में मुख्य बात यह थी कि वहाँ ध्रुव प्रदेश का लम्बा और जानलेवा जाड़े का मौसम नहीं था। जब वोर्कुटा में निर्माण योजनाओं के बहुत ज्यादा बढ़ जाने एवं अधिकाधिक संख्या में कैदियों के अशक्त और काम के अयोग्य होते जाने के कारण मजदूरों की कमी पड़ गई तो एन० के० वी० डी० के मास्को स्थित केन्द्रीय कार्यालय ने कारागंडा से वहाँ कैदी भेजने का निश्चय किया। कैदियों की जो कुमुक भेजी गई उसमें वे लोग थे जो कारागंडा में अर्ध-स्वतन्त्र जीवन बिता रहे थे। इनमें से बहुत-से भवन-निर्माण योजनाओं में काम करते थे। वोर्कुटा भेजे जाने के लिए उन्हीं कैदियों की भर्ती की गई जिन्होंने स्वेच्छा से वहाँ जाना मंजूर किया। उनको वचन दिया गया था कि वोर्कुटा में उन्हें कारागंडा से अधिक मजदूरी दी जायगी और स्वतन्त्र नागरिक के रूप में जीवन बिताने की छूट दी जायगी।

किन्तु अब वोर्कुटा पहुँचने पर उन्हें एक आम कैम्प में रखा गया। उनकी रहन-सहन की परिस्थितियाँ भी वोर्कुटा के दूसरे कैदियों से किसी भी अंश में बेहतर नहीं थीं। और उन्हें "स्वतन्त्र" नागरिकों के

रूप में बसाने का तो प्रश्न ही नहीं था, क्योंकि उसके लिए क्रियात्मक सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं।

इससे कारागंडा के लोगों को इतनी मायूसी हुई और गुस्सा आया कि उन्होंने कैम्प में आने के बाद से जरा भी काम नहीं किया। जब उन्हें अधिकृत रूप में सूचित किया गया कि कारागंडा में उनके साथ जो वायदे किये गये थे उनके लिए वोर्कुटा के अधिकारी अपने आपको जिम्मेवार नहीं मानते, तो उन्होंने कैम्प के दूसरे निवासियों में असन्तोष फैलाना शुरू कर दिया। उन्होंने देखा कि इसके लिए कैम्प की परिस्थितियाँ बहुत उत्तम और अनुकूल हैं। कैम्प के पुराने कैदियों ने कारागंडा से आये लोगों का साथ देने की घोषणा कर दी।

इस प्रकार कुछ दिन बाद कैम्प नं० ७ में आम हड़ताल हो गई। न कोई आदमी खान में काम करने गया और न किसी इमारत के काम पर। कैम्प नं० ७ से हड़ताल कैम्प नं० १४/१६ और २६ में भी फैल गई। हमारा कैम्प नं० ६ हड़ताल में शामिल होनेवाला चौथा कैम्प था।

हमारे कैम्प के कुछ कैदियों ने, जो पहले कैम्प नं० ७ में रह चुके थे, हमें वहाँ के विक्षुब्ध वातावरण की सूचना दी। उन्होंने कहा कि वहाँ के कैदियों में दिमागी आदमी भी हैं और सीधे-सादे कर्मठवाले आदमी भी। यह कैम्प कैम्प नं० ६ की अपेक्षा कैम्प नं० ९/१० से अधिक मिलता-जुलता था। वहाँ के कैदी ज्यादा पक्के और हट्टे-कट्टे आदमी थे; कैम्प नं० ९/१० की भाँति उनमें से बहुत से आदमी ऐसे थे जो अनेक शारीरिक विपत्तियों के बाद भी बचे रह गये थे। कुछ ही दिनों में वहाँ की घटनाओं के बारे म सुनी बातों को जोड़कर सारी तस्वीर आंकना सम्भव हो गया।

कैम्प ने प्रारम्भ में एक अधिकृत हड़ताल समिति चुनी जिसने अधिकारियों से निम्न मांग की। "रूस की मन्त्रि परिषद् या साम्यवादी दल के पोलिटब्यूरो का कोई पूर्ण अधिकार प्राप्त प्रतिनिधि उनसे

बातचीत करने के लिए भेजा जाय।" उन्होंने ऐसे किसी भी आदमी से बात तक करने से इन्कार कर दिया जो सीधा क्रेमलिन से न आये।

कैदियों को काम पर लौटाने के सभी प्रयत्न असफल रहे। सैनिक कमांडर जनरल देरेव्यां को आये और उन्होंने कैदियों की एक बैठक बुलाकर उन्हें हड़ताल खत्म करने के लिए समझाया-बुझाया। कैदियों ने इस बैठक का और भी अपने पक्ष में प्रचार करने के लिए उपयोग किया। एक वक्ता उठा और उसने जनरल से पूछा कि क्या वह कैदियों की यह मांग मानते हैं कि उनसे बातचीत करने के लिए मास्को से एक पूर्ण अधिकार प्राप्त प्रतिनिधि भेजा जायगा? जब जनरल ने इसका उत्तर 'नहीं' में दिया तो उसने इन शब्दों के साथ बैठक बर्खास्त कर दी।

"हमें आपसे कोई बातचीत नहीं करनी। हम सिर्फ मास्को से आये किसी ज़िम्मेदार अधिकारी से ही बातचीत कर सकते हैं।"

एक और प्रयत्न भी किया गया, किन्तु वह भी वैसा ही निष्फल रहा। तब यह कैम्प भी अन्य हड़ताली कैम्पों की भाँति चारों ओर से घेर लिया गया।

विभिन्न कैम्पों में, उनकी हड़ताल कमेटियों ने कैदियों की जो भी माँगें पेश कीं, उनमें मुख्य मुद्दा यह था कि उन्हें दस वर्ष या इससे अधिक की जो सज़ाएँ दी गई हैं, वे या तो रद्द कर दी जायँ, या कम से कम उनमें कमी कर दी जाय। किन्तु हर कैम्प में यह माँग-पेश अलग-अलग ढंग से की गई।

उदाहरण के लिए कुछ ने यह माँग की कि तमाम राजनीतिक कैदियों के मामलों और उन्हें दी गई सज़ाओं पर पुनर्विचार किया जाय। दूसरों ने कानूनी विधि के चक्कर में पड़े बिना सिर्फ सज़ाओं में कमी करने की ही माँग की। कुछ और लोगों ने माँग की कि उन्हें "स्वतन्त्र नागरिकों" की भाँति बसाया जाय। उन्होंने यह भी कहा कि वे वोर्कुटा में ही रहने को तैयार हैं। वस्तुतः वे इस बात के लिए तैयार थे कि उस समय तक वे इन खानों में ही काम करेंगे जब तक कि

वहाँ कोयले के उत्पादन की कोई दूसरी व्यवस्था नहीं हो जाती, यानी जब तक काफी आकर्षक वेतन पर रूस से स्वेच्छापूर्वक भर्त्ती किये गये मजदूर वहाँ नहीं लाये जाते या कोमसोमोलों के लिए एक वर्ष तक उत्तर की खानों में काम करना अनिवार्य नहीं कर दिया जाता। और शायद सबसे बढ़िया तरीके से और सबसे कठोर माँग कैम्प नं० १४/१६ के एक इमारती मजदूर दल नें रखी। हड़ताल के दूसरे दिन जब एक पहरेदार ने उनसे काम पर जाने को कहा तो उन्होंने उससे पूछा कि क्या वहाँ काँटेदार तार अभी हैं? उन्होंने ऐलान कर दिया कि जब तक ये तार नहीं हटाये जायेंगे, वे काम नहीं करेंगे।

अधिकतर कैदियों को पहले से ही निश्चय था कि सोवियत सरकार उनकी माँगें पूर्ण रूप में कदापि स्वीकार नहीं करेगी। वे किसी-न-किसी किस्म के समझौते की आशा कर रहे थे। उनका ख्याल था कि शायद सजाओं में एक-तिहाई या पाँचवें हिस्से की कमी कर दी जाय। बहुत कम कैदी ऐसे थे जो यह महसूस करते थे कि सरकार के लिए उनकी माँगें इस हद तक मानना भी सम्भव नहीं था।

कैम्प नं० ७ में हड़ताल प्रारम्भ होते ही अधिकारियों ने वोर्कुटा के सभी कैम्पों में निम्न सूचना जारी कर दी।

(१) कैदी भविष्य में रात को बैरकों में बन्द नहीं किये जायेंगे।

(२) खिड़कियों के आगे से लोहे की सलाखें हटा ली जायेंगी।

(३) बाईं बाँह और दायें घुटने पर लगे नम्बर हटा लिये जायेंगे।

(४) भविष्य में हर कैदी साल में दो पत्रों के बजाय महीने में एक पत्र अपने परिवार को भेज सकेगा।

(५) वोर्कुटा के तमाम कैम्पों के इंचार्ज अधिकारी जनरल देरेव्यांको की अनुमति से हरेक कैदो को, जिसका काम और व्यवहार अच्छा होगा, अपने कैम्प के कमांडेंट को प्रार्थनापत्र देकर और उसकी स्वीकृति पाकर वर्ष में एक बार अपने परिवार के लोगों से यहीं मिलने की आज्ञा मिल सकेगी।

(६) हरेक कैदी को यह अधिकार होगा कि वह मास्को से भेजे गये विशेष कमीशन जनरल मास्लेन्निकोव को अपने मुकदमे की कार्रवाई या मामले की प्रारम्भिक जाँच पर पुनर्विचार का प्रार्थनापत्र दे सके।

हड़ताल के दूसरे दिन एक विशेष सन्देशवाहक सभी कैम्पों में यह सूचना घुमाने के लिए ले गया। कैदियों ने खूब खुश होकर रात के समय बैरकों के दरवाजों पर लगाए जानेवाले सलाखदार दरवाजों के कब्जे निकालने शुरु कर दिये। साथ-ही-साथ वे तरह-तरह की कसमें खाते और गालियाँ देते जाते थे। खिड़कियों पर से भी सलाखें उखाड़ दी गईं और कपड़ों पर लगे नम्बर उतार दिये गये। जहाँ तक मेल-मुलाकात के लिए आनेवाले सम्बन्धियों से भेंट करने की रिआयत का सम्बन्ध था, कैदी जानते थे कि उसका कोई विशेष महत्व नहीं है। उनका कौन-सा ऐसा रिश्तेदार था जो तीन दिन तक सिर्फ कुछ घंटे प्रतिदिन उनसे मिलने के लिए दो हज़ार मील का सफर अपने खर्च से तय कर यूक्रेन, बाल्टिक राज्यों अथवा साइबेरिया से वहाँ आ सकता था?

वस्तुतः सरकार के लिए बलात् श्रम लेने की यह प्रणाली बन्द करना अथवा हड़तालियों की सीमित माँगें पूरी करने के लिए उसमें सुधार करना असम्भव था। वैसा करने का अर्थ सोवियत उद्योगों को लंगड़ा बना देना था। बेगार कैम्प सोवियत रूस के औद्योगिक जीवन का अनिवार्य अंग है। उनका काम है कच्चा माल कारखानों को मुहय्या करना। जो कैदी अपनी गिरफ्तारी से पूर्व उद्योग मन्त्रालयों में काम कर चुके थे उनका अनुमान था कि रूस का कोयले का समूचा और लकड़ी का अस्सी प्रतिशत उत्पादन बलात् श्रम से ही होता था। दूसरे शब्दों में बलात् श्रम के बिना सोवियत रूस का औद्योगिक उत्पादन ठप्प हो जाता। इस प्रकार क्रेमलिन अपनी कैदी प्रणाली का स्वयं ही कैदी हो गया है।

यदि सोवियत रूस अपना औद्योगिक उत्पादन यथासम्भव बढ़ाना चाहता है—और यही वह कर रहा है—तो मज़दूरों का जीवन-स्तर

उसे बहुत नीचा रखना होगा ताकि उनकी मेहनत की कमाई नये औद्योगिक साधनों में लगाई जा सके। ज्यों ही सरकार सोवियत रूस के अधिकतर मज़दूरों के जीवन-स्तर को, जो इतना नीचा है कि उस पर सहज में यकीन भी नहीं किया जा सकता, ऊँचा उठाने का प्रयत्न करती है, त्यों ही और अधिक औद्योगिक विस्तार के लिए प्राप्त होनेवाली पूंजी में कमी हो जाती है। सरकार के सामने दो रास्ते हैं, या तो वह भारी उद्योगों को नुकसान पहुँचाकर मजदूरों का रहन-सहन का स्तर ऊँचा करें, या जनता के जीवन-स्तर को नीचा रखकर उद्योगों का विस्तार जारी रखें। अब तक हमेशा उसने दूसरा मार्ग ही चुना है।

यदि सोवियत सरकार का राजनीतिक कैदियों को माफी देकर "स्वतन्त्र" नागरिकों की भांति बसाने का इरादा हो जाय, तो भी उसे व्यावहारिक रूप देना, विशेषकर इस वोर्कुटा इलाके में उसके लिए असम्भव होगा। इन कैदियों के रहने के लिए कोई ठिकाना नहीं रहेगा। इस समय वे बैरकों में रहते हैं, जहां एक-एक बैरक में सत्तर से एक सौ बीस तक कैदी एक साथ पशुओं की तरह ठूंस दिये जाते हैं। यदि सिर्फ पन्द्रह हजार कैदी भी कांटेदार तारों से बाहर 'स्वतन्त्र' नागरिकों की भांति बसाये जाने हों और हर दो कैदियों और उनके परिवारों को एक कमरा एक साथ रहने को दिया जाता हो तो भी वहाँ कम से कम साढ़े सात हजार ऐसे कमरों की आवश्यकता होगी। वोर्कुटा में वर्तमान परिस्थितियों में इतने मकान बनाने में कई वर्ष लगेंगे।

जो स्थिति आज है, उसमें भी वोर्कुटा में मकानों का निर्माण मांग के अनुसार तीव्र गति से नहीं हो रहा। यहाँ बड़े से बड़े मकान में भी ढाई कमरे और एक रसोईघर है, जिनमें एन० के० वी० डी० के उच्च-वर्ग के लोग रहते हैं। उसके साधारण सिपाही या सार्जेंट को अपने परिवार के लिए मुश्किल से ही एक कमरे से अधिक जगह मिल पाती है। उनसे भी छोटे कर्मचारियों की रहन-सहन की परिस्थितियाँ तो कभी-कभी कैदियों की बैरिकों में भी गई बीती होती हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सोवियस सरकार आर्थिक कारणों से ऐसी स्थिति में नहीं है कि कैम्पों को भंगकर उनमें रहनेवाले कैदियों को अपने-अपने घर भेज सके। वह कैदियों को वोर्कुटा में "स्वतन्त्र" नागरिकों के रूप में भी नहीं बसा सकती, क्योंकि उनके रहने के लिए जगह नहीं है। अब भी जो थोड़े से कैदी अपनी सजाएँ पूरी करने के बाद काम के अयोग्य या अशक्त करार देकर रिहा किये गये हैं, उन्हें बसाने के लिए भी पर्याप्त स्थान नहीं है। सरकार को अक्सर यह स्वीकार करना पड़ता है कि मुक्त हो जाने के बाद भी इन कैदियों को वह कांटेदार तारों से घिरे कैम्पों में ही रहने देगी, क्योंकि वहाँ की परिस्थितियाँ वोर्कुटा की उस स्वतन्त्रता से अच्छी और अधिक वरणीय है, जिसका अर्थ है निराश्रितता, भुखमरी और मौत। एक रिआयत सरकार "सद्भावना" के तौर पर दे सकती है और वह यह कि कैम्पों से रिहा किये गये अशक्त लोगों को उनके परिवारों के पास घर भेज दे। इस समय उन्हें अपने परिवारों के साथ सिर्फ वोर्कुटा क्षेत्र में ही रहने की आज्ञा है और स्पष्टतः वह उनसे यह नहीं कहेगी कि उत्तर की अत्यन्त कठोर और प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण वे दक्षिण में जा बसें।

कैम्प नं० ६ वोर्कुटा में अपेक्षाकृत शान्त कैम्प था। यह सन्दिग्ध प्रतीत होता था कि यह कैम्प हड़ताल में कभी शरीक होगा। और वस्तुतः दूसरे कैम्पों में हड़ताल शुरु हो जाने की सर्वप्रथम विश्वसनीय खबर आने के बाद कैम्प नं० ६ में हड़ताल के लिए मनोवैज्ञानिक वातावरण तैयार होने में ठीक एक सप्ताह लग गया। इस सारे सप्ताह कैम्प के गुप्त प्रतिरोधकारी दल अपनी तैयारियों में व्यस्त रहे। इस दौरान में भी एन० के० वी० डी० कैम्प में तरह-तरह की अफवाहें फैलाकर कैदियों के हड़ताल के बढ़ते हुए संकल्प को व्यर्थ करने की भरसक चेष्टा करती रही।

उदाहरण के लिए हमने एक अफवाह यह सुनी कि कैदियों के लिए

शीघ्र ही व्यापक ग्राम माफी की घोषणा की जानेवाली है ग्रौर हड़ताल करके कैदी सिर्फ सरकार को नाराज कर रहे हैं ग्रौर उसकी ग्राम माफी की व्यवस्थाग्रों में बाधा पहुँचा रहे हैं।

एक खबर यह थी कि हरेक हड़ताली को एक विशेष न्यायाधिकरण के सामने पेश किया जायगा जो हरेक को पच्चीस-पच्चीस वर्ष की ग्रौर सजा देगा। जिन लोगों को पहले ही पच्चीस-पच्चीस वर्ष की सजाएँ मिली हुई थीं, उन पर इसका कोई ग्रसर नहीं हुग्रा, किन्तु जिनकी सजाएँ पूरी होने में कुछ ही वर्ष रह गये थे या जो जल्दी ही रिहा किये जानेवाले थे वे इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहे।

एक ग्रौर ग्रफवाह यह थी कि ग्रन्य कैम्पों में जिन लोगों ने हड़ताल की थी उन्हें वोर्कुटा ले जाया गया है ग्रौर वहाँ फौजी न्यायालय में मुकदमा चलाकर उन्हें गोली मार दी गई है। हर ग्रादमी ने जिसे ग्रपनी जिन्दगी का जरा भी मोह था, इस ग्रफवाह की ग्रोर ध्यान दिया। किन्तु कुछ दिन बाद जब कैदियों की एक बड़ी पल्टन वोर्कुटा से कैम्प नं० ७ में ग्राती दिखाई पड़ी तो इस ग्रफवाह का भेद खुल गया।

उन्होंने हाथ हिलाकर ग्रौर चिल्लाकर कहा, "हम वापस घर जा रहे हैं। तबादला कैम्प भरा पड़ा है; उसमें हमारे लिए जगह नहीं है ?"

तो इसका ग्रर्थ यह था कि जिन लोगों ने हड़ताल की थी वे सिर्फ तबादला कैम्प में ले जाये जा रहे थे।

एक ग्रफवाह यह उड़ाई गई कि हड़ताल करनेवालों की डाक रोक ली जायगी। इसका भी काफी नैतिक दबाव पड़ा।

किन्तु जब इन ग्रफवाहों के बावजूद एन० के० वी० डी० ने ग्रनुभव किया कि स्थिति उनके लिए बहुत ग्रच्छी नहीं है तो उन्होंने कुछ कैदियों को, जिनके बारे में उनका ख्याल था कि वे हड़ताल की दशा में प्रमुख भाग ले सकते हैं, ऐहतियात के तौर पर गिरफ्तार कर लिया। इनमें तीन रूसी थे ग्रौर दो यहूदी। ये गिरफ्तारियाँ कैम्पों में मुखबिरों की

कार्य-प्रणाली पर दिलचस्प रोशनी डालती हैं। रूसी मुखबिर सिर्फ रूसियों और यहूदियों के बारे में ही खबरें दे सकते थे। वे वास्तविक नेताओं से, जो प्रायः सबके साथ यूक्रेनियन और लिथुआनियन थे, सम्पर्क ही स्थापित नहीं कर पाये थे।

एन० के० वी० डी० द्वारा उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम था कैम्पों को एक-दूसरे से अलहदा कर देना। आम तौर पर वोर्कुटा में जब कभी कैदियों के दलों का एक कैम्प से दूसरे में तबादला किया जाता है तब कैम्पों का एक-दूसरे के साथ सम्पर्क कायम हो जाता है। ये तबादले अब एकदम बन्द कर दिये गये। एक कैम्प से दूसरे कैम्प में सूचनाओं के आदान-प्रदान का अवसर उस समय आता है जबकि एक ही योजना में—चाहे वह रेलों पर या सड़कों पर अथवा खानों में—विभिन्न कैम्पों के लोग एक-साथ काम करते हैं। इस प्रकार विभिन्न कैम्पों में नियमित रूप से चिट्ठी-पत्री और सम्पर्क बना रहता है। एक कैम्प के लोग एक पूर्व निश्चित स्थान पर अपना संदेश रख देते हैं और दूसरे कैम्प के लोग यथा समय उसे वहाँ से उठा लेते हैं। यह साधन भी बन्द कर दिया गया। बाहर काम करनेवाले दलों को कैम्प से बाहर जाने से रोक दिया।

कैम्प नं० ७ की हड़ताल की सबसे पहली पक्की सूचना और हड़ताल में शरीक होने का आदेश एक रेल कर्मचारी से प्राप्त हुआ। एक इंजन ड्राइवर ने, जिसका इंजन कुछ अन्य कैम्पों से कोयले से भरे छकड़े खींचकर लाया था, माल-गोदाम में लोगों से कहा, "मुझे तुमसे यह कहने के लिए कहा गया है कि जितनी जल्दी सम्भव हो तुम भी हड़ताल शुरु कर दो। कैम्प नं० ७ तुमसे हड़ताल में शामिल होने की आशा करता है।"

रात को गुप्त हड़ताल समिति ने, जिसमें प्रधानता यूक्रेनियों और लिथुआनियनों की थी, आदेश जारी किया कि अगले दिन सुबह से हड़ताल शुरु कर दी जाय। विभिन्न जातीय दलों के मुखियाओं ने अपने

साथियों को इसकी सूचना दी। आदेश यह था कि नाश्ते के बाद सब लोग बैरकों में वापस लौट आयें, बाहर की हाज़िरी बोलने न जायें।

हमेशा की भाँति ५ बजे सुबह हमें उठाया गया। कैदियों ने कपड़े पहने और खाने के कमरे में चले गये। अभी वे खा ही रहे थे कि सिपाहियों ने बाहर से घेरा डालकर बैरकों को लौटने का रास्ता रोक लिया। उन्होंने कैदियों को पास के पहरेदारों के कमरे के सामने हाज़िरी बोलने के लिए चलने को मजबूर किया। कैदियों ने पहरेदारों से उलझने का साहस नहीं किया। पहरेदार भी जानते थे कि यदि उन्होंने कैदियों पर कोई हमला किया तो मामला आसानी से बढ़ जायगा। इसलिए वे नम्र बने रहे किन्तु साथ ही दृढ़ भी। उन्हें समूची पहली पारी को मुख्य द्वार के पास इकट्ठा करने मे सफलता मिल गई।

इसके बाद अधिकारियों ने कैदियों को डराकर काम पर भेजने का पहला प्रयत्न किया।

हड़तालियों के नाम एक-एक कर पुकारे गये और उनसे पूछा गया कि वे काम पर जाने को तैयार हैं या नहीं। जिन्होंने इन्कार किया उन्हें पहरेदारों के कमरे के दरवाजे की ओर ले जाया गया और कुछ समय के लिए वहीं रखा गया। जिन्होंने काम पर जाना स्वीकार किया—जिनकी संख्या थोड़ी थी और उनमें से भी अधिकतर टैकनिकल आदमी थे—उन्हें पंक्ति बांधकर खान में भेज दिया गया। अन्त में काफी प्रयत्न के बाद अधिकारी एक और पहले से भी बड़े दल को भी काम पर जाने के लिए राज़ी करने में सफल हो गये।

किन्तु वहाँ पहुँच जाने के बाद कैदियों ने अपने काम के कपड़े पहनने से इन्कार कर दिया। खान के चारों ओर सैनिकों की संख्या बढ़ा दी गई। उन्होंने कैदियों को काम प्रारम्भ करने के लिए समझाने-बुझाने का प्रयत्न किया। इस पर भी जिन्होंने इन्कार किया उन्हें एक छोटे-से कमरे में ले जाया गया, जहाँ एन० के० वी० डी० के कानूनी विभाग का एक अफसर बैठा था।

"तुम काम क्यों नहीं करना चाहते?"

कैदियों ने उन्हें टालनेवाले उत्तर दिये। अधिकतर उन्होंने कहा, "क्योंकि दूसरे लोग काम नहीं कर रहे।"

अफसर के सामने एक मोटी किताब रखी थी, जिसके पृष्ठ दो कालमों में बंटे थे, एक कालम उनके लिए जो काम करने को तैयार थे और दूसरा उनके लिए जो काम करने को राज़ी नहीं थे। उसने कैदियों से दोनों में से किसी एक कालम में हस्ताक्षर कराने का प्रयत्न किया। कैदियों को यह बात बुरी और परेशानी की लगी कि उनके नाम किताब में दर्ज किये जा रहे हैं, इसलिए उन्होंने इन्कार कर दिया। बहुतों ने खान के ऊपरी सिरे के आसपास छिपने का प्रयत्न किया, किन्तु पहरेदारों ने पीछाकर उन्हें पकड़ लिया। उसी दिन शाम को मेरे मित्र सेर्योशा ने मुझे बताया कि सारे दिन वह पहरेदारों को छकाता रहा और वे उसका पीछा करते रहे।

सुबह के अनुभव के फलस्वरूप तीसरे पहर की पारी के लोगों ने भोजन के लिए खाने के कमरे में जाने से ही इन्कार कर दिया। कैदियों के विभिन्न दलों ने रोटी लाने के लिए अपने कुछ आदमी भेज दिये, किन्तु चीनी, सस्ती मिठाई और मार्गरीन आदि नहीं मंगाई और पिछली बची हुई चीज़ों से ही काम चला लिया। लिथुआनियनों ने अपना सूअर का मांस दूसरों में बांट दिया, जो एक बिल्कुल नई घटना थी। यह अन्य जातियों के लोगों के साथ लिथुआनियनों की एकता का एक असाधारण प्रदर्शन था।

एक घंटे बाद तीन सिपाही हमें काम के लिए बुलाने आये। वे बड़ी नम्रता से पेश आये। उन्हें कैदियों के दलों को समझा-बुझाकर काम पर लाने की कोशिश करने का हुक्म था। उन्होंने इस हुक्म का पालन करने का भरसक प्रयत्न किया, हालांकि वे जानते थे कि इसमें सफलता नहीं मिलेगी। कैदी जानते थे कि सिपाही अपने कमाण्डेंट के

आदेश से ऐसा कर रहे हैं और सिपाही जानते थे कि कैदी उनकी स्थिति को अच्छी तरह समझते हैं ।

इसलिए उनकी बातचीत पूर्णत: नियमों के अनुसार ही हुई । किसी भी सिपाही ने यह नहीं पूछा कि कैदी क्यों हड़ताल कर रहे हैं और न ही किसी कैदी न कोई उत्तेजनाजनक बात कही । कैदियों ने काम पर जाने से इन्कार किया—कोई बात नहीं । सिपाहियों ने कुछ समय तक अपने आदेशों का पालन करना बन्द कर दिया । कैदी जानते थे कि सिपाही एकदम अपने कमांडेंट के दफ्तर में लौट नहीं सकते । उन्हें कैदियों को आजमाने और समझाने-बुझाने का आदेश दिया गया है । वे समझाने-बुझाने का मौन उपाय बरत रहे थे, और कुछ नहीं ।

कैदियों ने उन्हें बैठने के लिए स्टूल दिये, किन्तु उन्होंने उन्हें लेने से इन्कार कर दिया । ऐसा करना बहुत आगे बढ़ जाना था । अन्त में वे दरवाज़े की ओर बढ़े और बाहर खुले में चले गये । कैम्प की लम्बी सड़कें सुनसान पड़ी थीं । अन्य कैदियों के चेहरे दूसरी बैरकों की सलाखदार खिड़कियों के पीछे दीख पड़ते थे । दूसरे सिपाही अब इन बैरकों से वापस लौट रहे थे । वे भी कैदियों को मनाने में उसी तरह असफल रहे थे ।

"अच्छी बात' सिपाहियों ने कहा और बैरकों के दरवाज़ों के आगे भारी लोहे की सलाखें लगाकर वापस अपने कमांडेंट के दफ्तर में चले गये ।

इस मौसम में वोर्कुटा में बहुत गर्मी हो सकती है । बैरकों में गर्मी के मारे दम घुट रहा था । सभी खिड़कियां खोल दी गईं । कैदी कमर तक बदन उघाड़े अपने बिछौनों पर लेट गये । कुछ पढ़ने लगे, कुछ सो गये और कुछ गर्म पानी पीने बैठ गये । आहिस्ता-आहिस्ता गर्मी असह्य हो गई । तीन यूक्रेनियनों ने गुसलखाने की खिड़की निकाल ली और उसमें से लोहे की सलाखें निकालकर बाहर कूद पड़े । उनके पीछे, दस, बीस, तीस, और और भी न जाने कितने ही कैदी निकल पड़े । वे धूप

में जा बैठे और टण्ड्रा का दृश्य देखने लगे। खान नं० ७ में अभी तक काम नहीं हो रहा था।

नीली वर्दीवाले स्वयंसेवक दल का एक सीनियर गैरकमीशनयाफ्ता अफसर मिरोनेनकोव कैम्प में आया और दरवाज़ों और खिड़कियों का यह देखने के लिए मुआयना करता हुआ बैरकों में फिरने लगा कि वे ठीक तरह से बन्द हैं या नहीं। जब वह अगली बैरक के संकटकालीक द्वार पर पहुँचा तो उसने उसे भी ठोककर देखा कि वह बन्द है या नहीं। एकाएक यह दरवाज़ा भीतर से खुल गया और एक आवाज़ आई, "कहो, क्या बात है?"

"क्या हो रहा है?" मिरोनेवकोव ने कहा और फिर देखा कि दरवाज़े की सब कीलें निकाल ली गई हैं और बाहर से जो चीज़ें कील जैसी दीख रही हैं, वे नकली हैं। वह बढ़ईखाने से कुछ लम्बी कीलें लाया और उन्हें बैरक के दरवाज़े में फिर गाड़ने लगा।

फिर वह हमारी ओर मुड़ा और बोला, "तुम यहाँ कैसे आये?"

किसी ने कहा, "खैर, किसी भी तरह हो, हम बाहर आ गये; परन्तु दरवाज़ा बन्द हो जाने के कारण हम फिर भीतर नहीं जा सके।"

मिरोनेनकोव ने गुसलखाने की खिड़की की सलाखों की परीक्षा की जो वहाँ आरज़ी तौर पर फिर लगा दी गई थीं, और वह सबकी सब उखड़कर उसके हाथ में आ गईं। किसी ने चिल्लाकर कहा, "देखना, कहीं सारी खिड़की ही टूटकर तुम्हारे ऊपर न आ गिरे!"

मिरोनेनकोव ने सारी की सारी खिड़की बाहर निकाल ली।

"चलो!" उसने कहा, "सबके सब फिर भीतर चलो।"

कैदी फिर उचककर खिड़की के रास्ते गुसलखाने में दाखिल हो गये। मिरोनेनकोव कुछ और कीलें लाया और उनके साथ सलाखों को फिर ठोककर अपनी जगह पर बैठाने की कोशिश करने लगा। किसी ने चिल्लाकर उससे कहा, "तुमने ज़रूर ही यह कभी नहीं सोचा होगा कि किसी दिन तुम काम करोगे और हम बैठकर तुम्हें देखेंगे।"

सारा वातावरण विशुद्ध "रूसी" वातावरण था। सारे तीसरे पहर ऐसा लगता रहा मानो ग्रोस्त्रोव्स्की के किसी प्रहसन का कोई दृश्य चल रहा हो।

जिस बैरक में, खान में ताज़ा हवा का बन्दोबस्त करनेवाले कैदी मजबूर रहते थे, वहाँ का वातावरण इतना शान्त नहीं था। टैकनिकल कारणों से इस दल की खान में बहुत ज़्यादा ज़रूरत थी। यों तो वोर्कुटा की सभी खानों में कोल गैस है किन्तु खान नं० ६ की हालत खास तौर से बहुत खराब है। यदि खान में काम जारी रखना हो तो वहाँ गन्दी हवा निकालकर ताज़ा हवा पहुँचाने का इन्तज़ाम रखना पड़ता है। इसलिए इस दल के लोगों को काम पर ले जाने की कोशिश भी उसी हिसाब से अधिक ज़ोरों से की जा रही थी। वहाँ तीन नहीं, सात सिपाही ग्राये। किन्तु कैदियों के रवैय्ये में कोई फर्क नहीं ग्राया। इस पर कैदियों ग्रौर सिपाहियों में जो बहस चल पड़ी उसके दौरान में एक सिपाही ने एक कैदी की टाँग पकड़कर उसे बिछौने से खींचने की कोशिश की। कैदी के पड़ोसियों ने तुरन्त ही उस सिपाही पर हमला बोल दिया ग्रौर दो-चार करारी चोटें खाने पर उसका दिमाग दुरुस्त हो गया।

"तुम्हें हम पर हाथ उठाने का कोई ग्रधिकार नहीं।"

सारा वातावरण ग्रत्यन्त तनावपूर्ण हो गया। सातों सिपाहियों ने वहाँ से हट जाने में ही खैर समझी।

ग्राधे घण्टे बाद डिप्टी कमांडेंट ग्रपने साथ सहायक सुरक्षा ग्रधिकारी को लेकर उपस्थित हुग्रा। उस दिन उन दोनों के ही उच्चाधिकारी छुट्टी पर थे।

उनकी कैदियों के साथ जो बातचीत हुई उसमें एक ग्रजीब नम्रता ग्रौर भद्रता थी। उससे सरकार की मानसिक स्थिति का, जिसकी खातिर ये दोनों प्रतिनिधि काम कर रहे थे, पता चलता था। दोनों की

बातचीत की ध्वनि स्नेहपूर्ण थी। वे कैदियों से ऐसे बातचीत कर रहे थे, मानो वे शैतान नन्हे बच्चे हों।

"क्या हमने तुम्हारे लिए काफी इन्तज़ाम नहीं किया है? १९४८ से पहले के उन भयंकर वर्षों को याद करो। हमने तुम्हारे लिए नई बेरकें बनाई हैं। भोजन भी पहले से अच्छा है। क्या तुममें से किसी के साथ हमने कभी बुरा बर्ताव किया है? क्या तुममें से किसी ने मुझे किसी कैदी पर प्रहार करते देखा है? तुम जानते ही हो कि हर खान में हर कैदी के लिए एक न्यूनतम काम निर्धारित है। अगर तुम अब काम नहीं करोगे तो तुम्हें बाद में उसे पूरा करना पड़ेगा।"

वे दोनों कैदियों की मनोवृत्ति को समझते थे। वस्तुतः लोग कमांडेंट की भाँति डिप्टी कमांडेंट शिलिन से नफरत करते भी नहीं थे। कैदियों ने देखा कि कमांडेंट की अनुपस्थिति के कारण डिप्टी कमांडेंट के लिए एक अभद्र स्थिति पैदा हो गई है। शायद उसका सारा भविष्य ही इस बात पर निर्भर है कि वह कैम्प के लोगों की हड़ताल तुड़वाता या नहीं। शायद देरेव्यान्को ने टैलीफोन पर उससे कहा था, "देखो, जैसे भी हो यह हड़ताल एकदम तुड़वा दो। अन्यथा तुम्हें आयन्दा तरक्की नहीं मिलेगी।"

किन्तु खान में हवा का बन्दोबस्त करनेवाला दल डटा रहा। एक यूक्रेनियन नें कहा, "हमें आपसे कोई शिकायत नहीं है। हम जानते हैं कि आपने कभी किसी कैदी को नहीं मारा। यह भी ठीक है कि कैम्प के हालात में सुधार हुआ है और हमें भूखे भी नहीं रहना पड़ता। किन्तु इसके ये मानी नहीं कि हम पच्चीस वर्ष तक इसी तरह इस कैम्प में पड़े रहना मंज़ूर कर लें। हड़ताल आपके खिलाफ नहीं की जा रही, वह दूसरी चीज़ों के विरोध में की जा रही है। हम अपने साथियों का पूरी तरह साथ देंगे। हम लोग बुनियादी चीज़ों के लिए हड़ताल कर रहे हैं।"

डिप्टी कमांडेंट भी असफल होकर कैम्प से चला गया।

वोर्कुटा में तेरह में से सिर्फ पांच विशेष कैम्पों ने हड़ताल म भाग लिया। बाकी कैम्पों में हड़ताल एन० के० वी० डी० की सख्त निवारक कारंवाइयों के कारण, जो उसने पांच हड़ताली कैम्पों के तजुर्बे के फलस्वरूप की थी, रुक गई। हर कैम्प को एक-दूसरे से बिल्कुल अलहदा कर देने के बाद एन० के० वी० डी० ने उन लोगों को, जिन्होंने अभी तक हड़ताल नहीं की थी, धोखा देने के लिए कुछ कदम उठाये। उदाहरण के लिए कैम्प नं० ६ में हड़ताल हो जाने के तीन दिन बाद तक भी उन्होंने खान से रद्दी कोयले के ढेर तक खाली ट्रक चलाना जारी रखा ताकि बीच में पड़नेवाले हर कैम्प के लोग यही समझें कि खान मे अब भी काम हो रहा है।

वोर्कुटा के स्त्रियों के तीनों कैम्पों ने हड़ताल नहीं की, क्योंकि राजनीतिक दृष्टि से उनका अच्छी तरह से संगठन नहीं हुआ था। हां, व्यक्तिगत रूप से अवश्य कुछ स्त्रियों ने काम करने से इन्कार किया था।

हड़ताली कैम्पों में गिरफ्तार किये गये। अधिकतर व्यक्ति कैम्प नं० ११ में भेज दिये गये थे। वहां उन्हें कैम्प के दूसरे कैदियों से अलहदा रखा गया। बाकी लोगों को कैम्प नं० १ की मुख्य जेल की कोठरियों में रखा गया। कैम्प नं० ११ में खास तौर से कठोर शासन रहता है। वहां के कैदियों को प्रतिदिन बारह घंटे काम करना पड़ता है और राशन भी सामान्य से कम दिया जाता है। उन्हें मजदूरी नहीं मिलती, उनकी सब चिट्ठियां रोक ली जाती हैं और न उन्हें अखबार या रेडियो ही मिलते हैं। बैरकों से खाने के कमरे तक, खाने के कमरे से खान तक और फिर खान से बैरक तक वापस आते-जाते समय सिपाही उनके साथ रहते हैं। बैरकों पर हर वक्त ताला लगा रहता है और खिड़कियां भी सलाखें चढ़ाकर बन्द रखी जाती हैं। वस्तुतः इन लोगों ने उससे अधिक कोयला निकालने से इन्कार कर दिया है जितना कि कैम्पों की आन्तरिक आवश्यकता पूर्ति के लिए आवश्यक है।

हड़ताल सिर्फ कैदियों ने की थी। वोर्कुटा के "स्वतन्त्र" नागरिकों

ने, चूंकि वे सोवियत उच्च वर्ग के सदस्य थे, सिर्फ इस हड़ताल का समर्थन मात्र किया था। जो "स्वतन्त्र" नागरिक पहले इन कैम्पों में कैदियों की तरह रहते थे, वे अब भी अपनी पुरानी खानों में ही काम कर रहे थे, अन्तर सिर्फ इतना था कि अब उन्हें फोरमैन, ड्रिलर या बारूद के विशेषज्ञ आदि का कुछ ऊँचे दर्जे का काम दिया गया था। वे कैदियों के पूरी तरह समर्थक थे। किन्तु उन्हें पुलिस के जिस ज़बर्दस्त आतंक में रहना पड़ रहा था, उसके कारण उन्होंने स्वयं हड़ताल करने का साहस नहीं किया। हड़ताल का प्रयत्न करने का अर्थ यह होता कि तुरन्त उनमें से हर एक को पच्चीस-पच्चीस वर्ष की सज़ा फिर मिल जाती। इसके अलावा, हड़ताल में शामिल होने की उनके लिए कोई क्रियात्मक आवश्यकता भी नहीं थी। उनके हड़ताल में शामिल हुए बिना भी सारा काम बन्द पड़ा था। किन्तु हर सम्भव अवसर पर वे हमारे प्रति पूर्ण सहानुभूति प्रकट करते। पहले दिन जब खान के बाहर सिपाही हड़तालियों को कानूनी विभाग के अधिकारी के सामने पेश करने के लिए उनका पीछा करते तो ये "स्वतन्त्र" नागरिक उन्हें निकल भागने और छिपने में मदद देते। वे हमें खाने का सामान, तम्बाकू और अखबार लाकर देते। वे भी सोवियत प्रणाली के अन्त की हमारी ही भाँति उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। यदि वोर्कुटा में कभी कैदी विद्रोह करें तो इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं कि वे उनका साथ देंगे।

कैम्प नं० ६ के पन्द्रह सौ खान मज़दूरों में से सिर्फ सत्तर वफादार मज़दूर थे। इनमें या तो वे लोग थे; जिनके विश्वास अभी तक साम्यवादी थे या ओवरसीयर दलों के दो नेता तथा खान में टैकनिकल काम करनेवाले लोग जिनका स्वार्थ इस प्रणाली से बंधे रहने में था।

हड़तालियों ने उन्हें काम पर जाने से रोकने का कोई प्रयत्न नहीं किया। जब ये लोग पहरेदारों के कमरे के बाहर इकट्ठे हुए तो उन्होंने उनकी विशेष रूप से रक्षा की। उनके चेहरों पर उनके हृदय के भाव स्पष्ट अंकित थे, उनसे साफ पता चलता था कि वे लोग भ्रष्टाचारी हैं।

हमारे कैम्प में हड़ताल के दूसरे दिन शाम को मेरी ग्रामतिस्लाव्स्की से देर तक बातचीत हुई। वह ठेठ सोवियत सरकारी कर्मचारी या दल के सदस्य की मिसाल था, जिसका अपना कोई विचार नहीं होता। कैम्प में ऐसे करीव पच्चीस कैदी थे, जो दल के भूतपूर्व अधिकारी या प्रशासन यन्त्र के सदस्य, भूतपूर्व सरकारी अधिकारी, इंजीनीयर या टैकनीशियन थे। उन्हें इस नई स्थिति में देखना बड़ा ग्रानन्ददायक था। वे ग्रत्यन्त निराश थे। सोवियत संघ में हुई यह पहली हड़ताल थी। उनकी राजनीतिक चेतना पर उसका असर अणु बम के समान हुग्रा। इससे पहले उनके दिमाग में यह बात कभी ग्राई ही नहीं थी कि सोच-समझकर ग्रौर तर्क के साथ राज्य का विरोध भी सम्भव है। उनका निश्चिन्तता ग्रौर बेफिक्री का सारा भाव खत्म हो गया था। वे सोचने लगे, न जाने ग्रौर क्या हो जाय? वे इन घटनाग्रों से बतरह भयभीत हो गये ग्रौर उन्होंने कैम्प के ग्रधिकारियों को गुप्त रूप से ग्रपनी वफादारी का सन्देश भेज दिया।

मैंने ग्रामतिस्लाव्स्की से कहा, "हड़ताल के बारे में तुम्हारी क्या राय है? क्या यह ग्राश्चर्यजनक घटना नहीं है? क्या तुम्हारे ख्याल में लेनिनग्राड वाले भी इसकी खबर पाकर हड़ताल कर देंगे?"

"चुप रहो, चुप रहो, भले ग्रादमी," उसने उत्तर दिया, "कहीं कोई हमारी बात सुन न ले।"

कुछ देर वह चुप रहा ग्रौर उसके बाद एक व्यथाभरी ग्राह उसके मुंह से निकली। वह बुरी तरह घबरा गया था। मैंने फिर कहा।

"कैसा मजा ग्रा रहा है, है न? सोवियत रूस पूंजीवादी देशों के खिलाफ जिस वर्ग संघर्ष का इस्तेमाल करता है, वही यहाँ खुद सोवियत रूस के खिलाफ इस्तेमाल किया जा रहा है। मेरा ख्याल था कि तुम खूब खुश होग्रोगे।"

वह बुरी तरह घबरा गया था। सारी दुनियाँ ही उसके लिए बदल गई थी। स्थिति इतनी विचित्र हो गई थी कि उस पर विश्वास करना

ही उसके लिए मुश्किल हो गया। वह अपने देश के बारे में भी इससे अधिक नहीं जानता था। सोवियत प्रणाली उसे अत्यन्त स्थिर और स्थायी प्रतीत होती थी और वही प्रणाली आज उसे उतनी ही अस्थिर व भंगुर मालूम हो रही थी, जितनी कि पश्चिम की प्रणाली समझी जाती थी।

कुछ समय पूर्व हमने "प्रावदा" में फ्रांसीसी खान मजदूरों की वीरतापूर्ण हड़ताल की खबर पढ़ी थी। उन्हें सोवियत रूस की ट्रेड-यूनियनों और समाजवादी दल ने बधाइयाँ दी थीं। उनके लिए पैसा इकट्ठा किया गया था और उन्हें धन और खाद्य सामग्री भेजी गई थी। और अब एकाएक खान मजदूरों की हड़ताल ठीक उसी देश में फूट पड़ी है जो कार्लमार्क्स के क्रान्तिकारी सिद्धान्तों पर खड़ा किया गया है, जिस देश का ध्येय तमाम खनकों को अत्याचार से मुक्तकर मानवीय अधिकार प्रदान कराना है।

मैं इधर-उधर चक्कर लगाकर इन लोगों से यह पूछने का लोभ संवरण नहीं कर सका कि उनकी इस स्थिति के बारे में क्या धारणा है। अपनी पार्टी की कक्षाओं में जो कुछ उन्होंने पढ़ा था, वह सब एकदम निरर्थक हो गया था।

उदाहरण के लिए लाल सेना का एक भूतपूर्व कर्नल था, जो पहले धातु के एक कारखाने में काम करता था। युद्ध में जर्मनों ने उसे कैद कर लिया था, इसलिए रूसियों ने उसे दस वर्ष की सपरिश्रम कैद की सजा दी थी। वह कैदी मजदूरों के एक दल का नेता था और उसके दल ने काम करने से इन्कार कर दिया था। कैम्प के अधिकारियों ने उसे बुलवा भेजा।

"हमने यह उम्मीद ही नहीं की थी कि तुम्हारा दल काम करने से इन्कार कर देगा।"

वह अपनी बैरक में लौट गया और वहाँ अपने आदमियों को समझाने-बुझाने लगा। बोला, "हम काम कैसे बन्द कर सकते हैं?

ग्राखिर, हम एक ऐसे देश के निवासी हैं; जिसने पूंजीवादी शोषण का ग्रन्त कर दिया है।"

उसके दल के लोगों ने इस पर खूब कहकहा लगाया। "हाँ, हमने पूंजीवादी शोषण खत्म कर दिया है, किन्तु उसकी जगह उससे भी निकम्मा शोषण का तरीका ग्रपना लिया है।"

हरेक कैदी जानता था कि यदि स्टालिन जीवित होता तो ऐसी हड़ताल होने पर वह क्या करता। वह जान-माल की हानि की परवाह किये विना क्रूरता से उसका दमन करता। नई सरकार पर इस हड़ताल की जो प्रतिक्रिया हुई उससे बढ़कर इस वात का ग्रौर क्या सुबूत हो सकता है कि वह ग्रत्यन्त ग्रसुरक्षा ग्रौर बेचैनी ग्रनुभव कर रही थी। वह जानती थी कि इस मौके पर हड़ताल सारे देश के लिए कितनी खतरनाक होगी ग्रौर इसीलिए वह फूंक-फूंककर कदम रख रही थी।

वोर्कुटा की खानों से सारे लेनिनग्राड को कोयला जाता है ग्रौर लेनिनग्राड सारे सोवियत उद्योगों का केन्द्र है, जहाँ सूक्ष्म यन्त्र, विजली का सामान, लैन्स ग्रौर इंजनों के हिस्से वनते हैं। लेनिनग्राड रूस का सबसे ग्रधिक विविधतापूर्ण ग्रौद्योगिक क्षेत्र है ग्रौर साथ ही सबसे ग्रधिक ग्रासानी से उसे क्षत-विक्षत किया जा सकता है। वहाँ के मजदूरों की महान् क्रान्तिकारी परम्पराए हैं। लेनिनग्राड के बड़े कारखानों के ग्रनेक ग्रादमी हमारे कैम्प में थे ग्रौर उन सवने हमें वताया कि वहाँ के लोगों की मनोदशा कैसी थी। उनका कहना था कि ऊपर से शान्ति दीख पड़ने पर भी वहां ग्रन्दर ही ग्रन्दर ग्रसन्तोष उमड़-घुमड़ रहा था। वहाँ कोयला न पहुँचने से उद्योग ग्रस्त-व्यस्त हो सकते थे ग्रौर यह भी सम्भव था कि उससे श्रमिकों की सोवियत-विरोधी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलता। इस बात का वास्तव में ही बहुत खतरा था कि कहीं वोर्कुटा की हड़ताल रूस के ग्रौद्योगिक हृदयस्थल में ग्रशान्ति की लहर न पैदा कर दे। हम सब १७ जून की घटनाग्रों का उत्साह-

वर्धक प्रभाव अपने ऊपर अनुभव कर रहे थे। तब वोर्कुटा की हड़ताल का उसमे भी कितना अधिक प्रभाव हो सकता था।

सरकार इस सारी स्थिति को जिस ढंग से सम्हाल रही थी। उसमें दो बातें अत्यन्त प्रबल रूप में दीख पड़ती थीं—एक तो सावधानी और दूसरे अनिश्चितता। क्रेमलिन के अधिकारी चिढ़े हुए थे, वे नहीं जानते थे कि यह सब क्या हो रहा है। निश्चय ही वे हड़ताल को खत्म करने के लिए कृतसंकल्प थे किन्तु साथ ही वे ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहते थे जिससे हालत और भी गम्भीर हो जाय। चाहे जो हो वे स्थिति को विस्फोटक रूप धारण नहीं करने देना चाहते थे।

देरेव्यान्को से हड़ताल का समाचार जब पहले-पहल मास्को पहुँचा तो क्रेमलिन ने वही किया जो वह ऐसी स्थिति में कर सकता था। उसने सारी स्थिति की शीघ्र और व्यापक जांच के लिए एक कमीशन वोर्कुटा भेज दिया।

इस कमीशन में पचास आदमी थे और विमान द्वारा वोर्कुटा के छोटे से हवाई अड्डे पर आकर उतरे। उसका नेता जनरल मास्लेन्निकोव था, जो दो बार "पितृ देश की रक्षा के लिए युद्ध का वीर नेता" घोषित हो चुका था और लेनिन पदक पा चुका था। उसके कमीशन को किसी तरह की कार्रवाई करने का अधिकार नहीं था। वह विशुद्ध जांच कमीशन था। उसने कैम्प नं० ८ के पास एक छोटे से कैम्प में अपना सदर मुकाम कायम किया और तमाम सरगनों और गिरफ्तार हड़तालियों को जिरह और सवाल-जवाब के लिए वहाँ लाया गया।

कमीशन ने करीब आठ दिन तक काम किया और फिर विमान में वापस चला गया।

उसके बाद एक दिन आया जब हमने दूरी पर टामी गन और राइफल की स्पष्ट आवाजें सुनीं। ये आवाजें सामने की ओर खान नं० ७, १४/१६ और २९ की तरफ से आ रही थीं। उस समय हम यह नहीं जान सके कि ठीक किस कैम्प से यह आवाजें आ रही थीं।

उसी दिन शाम को हमारे कैम्प के दोनों जर्मनों में से एक ब्लागोदातोव किसी अज्ञात स्थान की ओर रवाना हो गया। एक सप्ताह बाद जब वह लौटा तो मैंने उससे उन नाटकीय घटनाओं का विवरण सुना जो खान नं० २९ में घट रही थीं।

वहाँ कैदियों ने सिर्फ काम पर जाने से ही इन्कार नहीं किया था। सबसे पहले उन्होंने एक सार्वजनिक सभा की और अपनी निज की कैम्प समिति चुनी, जिसमें सभी जातियों के लोगों का प्रतिनिधित्व था।

इसके बाद यह समिति कमांडेंट के पास गई और उसने उन्हें सूचना दी कि कैदी अपने कैम्प का प्रबन्ध अविलम्ब अपने हाथ में ले रहे हैं। उन्होंने यह वचन दिया कि कानून और व्यवस्था की रक्षा की जायगी और उनसे माँग की कि अनावश्यक उलझनों से बचने के लिए वह अपने सिपाहियों और अफसरों को तुरन्त वहाँ से हटा लें।

कमांडेंट ऐसा करने के लिए तैयार हो गया।

कैदियों में से एक कैम्प पुलिस चुनी गई। जिन लोगों को काम न करने के कारण जेल में डाल दिया गया था उन्हें तथा अन्य गैर-मुजरिमाना अपराधों के लिए दंडित व्यक्तियों को रिहा कर दिया गया। एन० के० वी० डी० के अत्यन्त कुख्यात मुखबिरों को उनकी रक्षा के लिए हवालात में डाल दिया गया और नई कैम्प पुलिस के आदमी उन पर पहरा देने लगे।

इसके बाद कैम्प में कितनी भोजन सामग्री है, इस बात की जांच की गई जिससे मालूम हुआ कि वह चार सप्ताह के लिए पर्याप्त है। हर कैदी के लिए पहले से अधिक और समान राशन बांध दिया गया। खाद्य पदार्थों के स्टोरों ने अपना सारा सुरक्षित सामान कैदियों को बेच दिया। बिक्री से होनेवाली आय कमांडेंट को सौंप दी गई। रसोई घर की बची-खुची चीजों या जूटन पर पलनेवाले पांच सूअर काटे गये। (इसका तात्कालिक परिणाम यह हुआ कि कैम्प नं० ६ में जब हड़ताल

शुरू हुई तो सबसे पहले अधिकारियों ने सूअरों की संभाल की और उन्हें सुरक्षित स्थान पर भेज दिया)

कैम्प नं० २६ में भी कैदियों की मांगें सार रूप से वही थीं जो अन्य कैम्पों की थीं : अर्थात् काँटेदार तार हटाये जायें, तमाम राजनीतिक बंदियों के मुकदमों की कार्रवाइयों पर फिर नजरसानी की जाय, और सजाएँ कम की जायें। किन्तु कैम्प नं० ७ की हड़ताल की भाँति यहाँ की कैम्प समिति ने भी वोर्कुटा के स्थानीय अधिकारियों से बातचीत करने से इन्कार कर दिया। उसने कहा कि वह साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति अथवा सोवियत सरकार के किसी सर्वाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि से ही बातचीत करेगी। जनरल देरेव्यान्को ने कैदियों की सार्वजनिक सभा बुलाने की दो बार कोशिश की, किन्तु वह सफल नहीं हुई। उलटे कैम्प समिति ने इसका उपयोग हड़ताली कैदियों की हिम्मत बढ़ाने के लिए किया।

इसी बीच लड़ाई के सब साधनों से लैस एक फौजी टुकड़ी ने कैम्प को चारों ओर से घेर लिया। मशीनगनें और मोर्टार लगा दिये गये। दोनों पक्षों में से कोई भी झुकने के लिए तैयार नहीं था, इसलिए कैदियों की मांगों और अधिकारियों के प्रस्तावों में किसी तरह का मध्य मार्ग निकालने का तो प्रश्न ही नहीं था। हालात क्रमशः एक खूनी दौर की ओर बढ़ रहे थे।

ज्यों ही स्वयं जनरल देरेव्यान्को के व्यक्तिगत निरीक्षण में कैम्प को चारों ओर से घेरने के लिए चल रही फौजी तैयारियाँ पूर्ण हो गईं, जोकि सैनिकों से भरी हुई बहुत-सी लारियों के रात के समय हड़ताली कैम्पों की ओर जाने से स्पष्ट था, तभी जनरल की ओर से कैदियों को आत्मसमर्पण की अन्तिम चेतावनी देने के लिए एक प्रतिनिधि कैम्प में भेजा गया। इस प्रतिनिधि ने, जो एक अफसर था, वहां ऐसा उत्तेजनाजनक व्यवहार किया कि कैदी उस पर टूट पड़े। कैदियों को एक बार फिर आत्मसमर्पण के लिए कहा गया, किन्तु इस बार लाउडस्पीकर के

जरिये, पर इस बार भी उन्होंने इन्कार कर दिया। वे मुख्य द्वार पर इकट्ठे हो गये और हाथ में हाथ डालकर उन्होंने एक मजबूत दीवार-सी बना ली। इसके बाद एक जोर की आवाज बुलन्द हुई, "चलाओ, गोलियाँ चलाओ ! इस तरह की जिन्दगी से मौत अच्छी !"

यूक्रेनियन अपना राष्ट्रीय गीत गाने लगे।

देरेव्यांको ने कैम्प पर हमला करने का आदेश दे दिया।

सिपाही आगे बढ़े।

मुख्य द्वार तोड़ दिया गया। सिपाहियों ने कैदियों को अपने सामने एक मजबूत दीवार की तरह इकट्ठे खड़े देखा, जो आसानी से निशाना बनाई जा सकती थी।

ठीक यह मौका था जबकि सर्जन ब्लागोदातोव को कैम्प नं० २६ में पहुँचने का आदेश दिया गया था।

"जब मैं कैम्प में पहुँचा", उसने मुझे बताया, "मैंने दो सौ व्यक्ति अत्यन्त घायल किन्तु जीवित अवस्था में पाये, उनमें से अधिकतर की छाती और पेट में गोली लगी थी। उनमें एक दर्जन के लगभग जर्मन भी थे। चौसठ कैदी वहीं घटनास्थल पर मर गये थे, जिनमें से चार जर्मन थे। अधिकतर कैदियों के बचने की बहुत अधिक उम्मीद नहीं थी, क्योंकि एक तो उनमें घावों की छूत का मुकाबला करने की शक्ति नहीं बची थी और दूसरे वहाँ इलाज के लिए काफी औजार, पट्टियाँ, चीरफाड़ की सुविधाएँ या दक्ष आदमी नहीं थे।

"सारे हफ्ते भर हम आपरेशन करते रहे। हम जो कुछ कर सकते थे, वह हमने किया, किन्तु फिर भी वे अपने जख्मों के कारण मरते जाते थे।"

कैम्प नं० ७ में हड़ताल शुरु होने के बाद जनरल ने वहाँ भी हड़तालियों को अन्तिम चेतावनी दी कि या तो बाहर निकल आओ और खुले में पंक्ति बाँधकर खड़े हो जाओ या कैम्प पर तूफान की तरह हमला कर दिया जायेगा।

रक्तपात को रोकने के लिए हड़तालियों ने देरेव्यान्को के ग्रादेश का पालन करने का निश्चय किया। फाटक खोल दिये गये ग्रौर कैदियों की एक लम्बी कतार बाहर निकली। कुछ सौ गज की दूरी पर उन्हें भेड़ों की भाँति घेर लिया गया। उन्हें एक-एक कर कैम्प कमांडेंट, एन० के० वी० डी० के प्रमुख, उनके ग्रधिकारियों एवं मुखबिरों के झुंड के ग्रागे से गुजरने को कहा गया। मुखबिरों की सहायता से उन सभी हड़तालियों को, जिन पर हड़ताल का नेतृत्व करने का सन्देह किया जा सकता है, ग्रलग कर लिया गया। इनकी संख्या चार-पांच सौ के लगभग होगी। उन्हें लारियों में भरकर ग्रन्यत्र ले जाया गया। वस्तुतः इसका परिणाम यह हुग्रा कि सारी हड़ताल समिति हड़तालियों से ग्रलग कर दी गई, हालांकि ग्रधिकारियों को व्यक्तिशः यह मालूम नहीं हो सका कि ग्रमुक-ग्रमुक व्यक्ति नेता था। इस प्रकार कैम्प के सभी सक्रिय सदस्य ग्रदृश्य हो गये। लोगों के पास कोई नेता न रहा। हड़तालियों की हिम्मत टूट गई ग्रौर दूसरे दिन से खान में फिर काम शुरु हो गया।

हमारी हड़ताल के तीसरे दिन दोपहर से कुछ ही देर पहले पहरेदारों ने घोषणा की कि कुछ ही मिनटों में कैंटीन के सामने एक सभा होगी जिसमें स्वयं जनरल देरेव्यान्को भाषण करेंगे। करीब एक हजार कैदी देखते-देखते एक मेज के इर्द-गिर्द, जिसके पीछे दो कुर्सियाँ रखी थीं, इकट्ठे हो गये। जनरल कैम्प-कमांडर के साथ वहाँ ग्राया, उसके साथ ग्रौर कोई ग्रंगरक्षक नहीं था। वह लगभग पचास वर्ष की ग्रायु का मझोले कद का गठीला ग्रादमी था। उसके बारीक छटे हुए सफेद बाल थे ग्रौर चेहरा रूसियों की तरह चौड़ा ग्रौर प्रतिभा से प्रदीप्त था। वह बड़ी चुस्त वर्दी पहने था ग्रौर उसके फौजी तमगे धूप में चमचमा रहे थे।

उस समय तक हमें उसके ग्रादेश से कैम्प नं० २९ में हुए गोलीकांड की कोई जानकारी नहीं थी।

कैदियों की कानाफूसी एकदम बन्द हो गई। जनरल ने बड़ी वत्सलतापूर्ण भाषा में भाषण शुरू किया। यह भाषण सचमुच ही बड़ी चतुराई से भरा था। वह रूसी किसानों की मनोवृत्ति को खूब समझता था।

"पिछले कुछ दिनो में कुछ कैम्पों में ऐसी घटनाएँ घटी हैं जो सभी अच्छे कामरेडों के हितों के प्रतिकूल हैं। कुछ बेउसूल आन्दोलनकारियों ने कामरेडों को, जो काम करने के लिये बिल्कुल तैयार थे, काम से इन्कार करने और हड़ताल करने के लिये भड़काया है। इससे सिर्फ कैम्पों के लिए मुसीबतें और तकलीफें ही पैदा हो सकती हैं।

"तुम सब लोग भली-भांति जानते हो कि कैम्पों के अधिकारियों ने यहाँ की हालत सुधारने के लिए कितना उद्योग किया है और अब भी कर रहे हैं। निकम्मी पुरानी बैरकों को गिरवाकर उनकी जगह वे नई और अधिक अच्छी बैरकें बनवा रहे हैं। एक नया बड़ा अस्पताली वार्ड बन रहा है। न तो लोगों को पुष्टिकारक अन्न की कमी है और न उनमें स्कर्वी का रोग है। खाने को पर्याप्त रोटी दी जाती है। तुम लोग जितनी रोटी चाहो ले सकते हो, किसी को भी अब भूखा नहीं रहना पड़ता। और यह सब तो अभी शुरुआत है, अभी और भी सुधार किये जायेंगे। हमारे देश की भौतिक समृद्धि तेजी से बढ़ रही है और उसका प्रभाव कैम्पों पर भी पड़ रहा है। तुम लोगों को अपने काम का जो मेहनताना मिलता है, उसे भी सरकार बढ़ानेवाली है।

"तुम्हारे लिए यह गौरव की बात नही है कि तुम कुछ आन्दोलनकारियों और शरारतियों के बहकावे में आकर काम बन्द कर दो। ऐसा करने से सिर्फ उन सुधारों में ही देरी होगी जिनकी तुम्हारे लिए योजना बनाई गई है। मैं जानता हूँ कि तुम लोग स्वयं अपराधी नहीं हो। अपराधी तुम लोगों में सिर्फ वही हैं जो जनता और सोवियत रूस के शत्रु हैं, क्योंकि उन्होंने ही तुम्हें इस तरह के काम के लिए उकसाया है।

"अन्य कैम्पों में इन अप्रिय व्यक्तियों को समुचित सज़ा मिल गई है और वही यहाँ भी होगा।

"इसलिए समझदारी से काम लो! कल से फिर काम शुरु कर दो! अपने लिए मुसीबत मत खड़ी करो। दूसरी खानों में अब पहले की भाँति काम होने लग गया है। इसलिए तुम्हारा हड़ताल जारी रखना बेकार है।

"क्या किसी को कुछ पूछना है?"

एक कैदी ने अपना हाथ ऊपर उठाया।

जनरल ने कहा, "तुम सिर्फ किसी ऐसे मामले पर ही सवाल कर सकते हो, जिसका व्यक्तिशः तुम्हारे साथ सम्बन्ध हो, जो तुम्हारी अपनी समस्या हो।"

कैदी ने अपना मामला पेश किया।

"तुम एक दर्खास्त दायर करो।"

उस आदमी ने उत्तर दिया, "मैंने पिछले दो वर्षों में सात दर्खास्तें भेजी हैं। वे सब या तो ठुकरा दी गईं या उनका कोई उत्तर ही नहीं दिया गया।"

"आज मेरे नाम से व्यक्तिगत तौर पर एक दर्खास्त फिर लिखो। मैं उस पर तुरन्त कार्रवाई कराऊँगा।"

"धन्यवाद!" कैदी ने कहा।

"किसी और को कुछ पूछना है?" जनरल ने फिर कहा।

एक जर्मन ने अपना हाथ खड़ा किया। बोला, "हमें अपने घर पत्र लिखने की आज्ञा क्यों नहीं है?"

"मुझे हैरानी है कि तुमने अब तक पत्र क्यों नहीं लिखा। सरकार सिद्धान्ततः इसकी अनुमति दे चुकी है।"

"हमें अपने घर कब भेजा जायगा?"

"सभी विदेशी, जिनमें जर्मन भी शामिल हैं, जल्दी ही अपने घर भेजे जायँगे। मैं समझता हूँ, अगस्त की समाप्ति से पूर्व ही तुम भी चले

जाओगे। किसी और को कुछ पूछना है?" इस बार किसी ने हाथ नहीं उठाया।

सभा का इस प्रकार अचानक ही इतनी जल्दी बुला लिया जाना एक सुविचारित योजना का परिणाम था। हड़ताल कमेटी के पास या तो इतनी जल्दी अपनी ओर से कोई वक्ता तलाश करने के लिए समय नहीं था, या यह जानकर कि और कैम्पों में लोगों ने फिर काम आरम्भ कर दिया है और इसलिए कैम्प नं० ६ में हड़ताल जारी रखना सम्भव नहीं होगा, उसने किसी व्यक्ति को व्यर्थ खतरे में डालना ठीक नहीं समझा।

उसी दिन कुछ जर्मनों ने अपने रिश्तेदारों को पत्र लिखे। "जनरल ने कहा है कि इसकी अब इजाजत दे दी गई है।"

ये पत्र तीन मास तक सेंसर के दफ्तर में बिना पढ़े पड़े रहे और उसके बाद उन्हें वापस लौटा दिये गये।

और क्या हम सचमुच अगस्त की समाप्ति से पूर्व यहाँ से जा सकेंगे?

कुछ समय तक कैदियों ने वास्तव में ही बाह्य सफलता की कोई फिक्र नहीं की थी। उन्हें सिर्फ हड़ताल का नशा था। साल भर से भीतर ही भीतर जो रोष संचित हो रहा था, वही अचानक फूट पड़ा था। जो लोग इसमें भाग ले रहे थे, उन सबके लिए यह हड़ताल सोवियत रूस के भीतर पहली ठोस प्रतिरोधक कार्रवाई थी। और यही काफी था। यह एक बिल्कुल नई चीज थी, जिसकी किसी ने स्वप्न में भी कभी आशा नहीं की थी।

और वस्तुतः इस तरह की मानसिक स्थिति पैदा हो जाने का एक सयुक्तिक कारण भी था। सरकार ने हड़तालियों को जो रिआयतें दीं, वे उनकी माँगों की तुलना में भले ही कितनी नगण्य और तुच्छ क्यों न हों, किन्तु उन परिस्थितियों में ये अत्यन्त नगण्य रिआयतें भी बहुत बड़ा अर्थ रखती थीं। और नहीं तो सिर्फ एक इसी कारण से हड़ताल को बहुत सफल कहा जा सकता था कि इसने यह साबित कर दिया था

कि हड़ताल के अस्त्र को सोवियत रूस में, मजदूरों के उस स्वर्ग में भी जहाँ हड़ताल अपनी परिभाषा के अनुसार असम्भव मानी जाती है, बिना किसी बड़े खतरे के इस्तेमाल किया जा सकता है।

किन्तु एक बात नहीं भूलनी चाहिए कि यह हड़ताल अत्यन्त असाधारण परिस्थितियों में हुई थी। यूरोपियन पैमाने से उसे नहीं मापा जा सकता। "पूंजीवादी शोषण" वाले देशों में हड़ताल में जो चीजें होती हैं, उनमें से बहुत-सी यहाँ नहीं थीं। उदाहरण के लिए यहाँ हड़ताल के पक्ष में या विरोध में जनता ने कोई मत प्रकट नहीं किया। हडताल समिति बाकायदा खुले आम नहीं चुनी गई; माँगों का परस्पर मिलकर संगठनपूर्वक निर्धारण असम्भव था; और न लोगों को ट्रेड यूनियनों द्वारा की जानेवाली हड़तालों का कोई तजुर्बा था कि वे उसका लाभ उठा सकते। यह एक गुप्त हड़ताल थी और उस पर भी एन० के० वी० डी० की नाक के नीचे हुई थी। इसके लिए परिस्थितियाँ सभी तरह से पूंजीवादी देशों की हड़ताल की परिस्थितियों से ज्यादा कठिन थी। खुद किसी हड़ताली को इससे पहले हड़ताल का कोई तजुर्बा नहीं था। ये लोग अपनी जिन्दगी में पहली बार हड़ताल कर रहे थे। जैसा कि ग्रिवोत्स्की ने कहा था, ये लोग पूंजीवादी युग के प्रारम्भिक दिनों के मजदूरों, १८३७-४८ के सुधार आन्दोलन के आन्दोलनकारियों या १८८० के रूसी मजदूरों की भाँति अनुभवहीन थे। उनके एक भी नेता ने कभी जीवन में हड़ताल देखी तक नहीं थी, उसमें भाग लेना तो दूर रहा। जैसे-जैसे उनकी हड़ताल आगे बढ़ती गई, वैसे ही वैसे वे उसका ढंग स्वयं अपने दिमाग से निकालने लगे। इसके अलावा यह ढंग हरेक कैम्प में अलग-अलग निकालना आवश्यक था। कैम्पों को एक-दूसरे के अनुभवों से कुछ सीखने का भी अवसर नहीं था। इसलिए हर कैम्प में हड़ताल का रूप अलग-अलग था।

और निःसन्देह गलतियाँ भी हुईं।

किसी भी कैम्प में हड़तालियों ने वह तरीका नहीं अपनाया जो

हड़तालों के इतिहास में हमेशा अत्यधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ है और वह है "बैठ रहो हड़ताल" का। उन्होंने हड़ताल की सारी योजना खान के बजाय कैम्प में ही बनाई और क्रियान्वित की। खानों को ही हड़ताल का मुख्य रणस्थल बनाया जाना चाहिए था, क्योंकि सिर्फ कैदी ही उनके भीतर होते हैं। कोई भी सिपाही, या अफसर या एन०के०बी०डी० का कोई आदमी खान के भीतर जाने का साहस नहीं करता, क्योंकि उन्हें भय रहता है कि कहीं वे भीतर से जीवित न आ सकें।

खान के भीतर हड़ताल के लिए बेखटके खुले आम और अधिक प्रभावकारी प्रचार किया जा सकता था। वहाँ छोटी-छोटी बैठकें भी, जो मुखबिरों के कारण कैम्पों मे सम्भव नहीं थीं; हो सकती थीं। हड़तालियों के खास आदमी मुख्य उत्पादन लिफ्टों और कोयले के छकड़ों आदि महत्वपूर्ण आधारभूत स्थानों पर कब्ज़ा कर वहाँ से सारी खान पर नियन्त्रण कर सकते थे।

कैदियों के कैम्पों में ही रहने का असर यह हुआ कि एन० के० वी० डी० को हड़ताल में सबसे अधिक सक्रिय भाग लेनेवालों और नेताओं को छाँटकर शेष लोगों से अलगकर देने का मौका मिल गया। इसके अलावा अफवाहों और झूठे वायदों से उसे हड़तालियों को परास्त हिम्मत करने और अन्त में हड़ताल को एकदम खत्म करने की भी सुविधा हो गई।

हड़तालियों की अनुभवहीनता शायद उसी बुनियादी भूल में ही सबसे अधिक स्पष्ट रूप में नजर आई। किन्तु और सब बातों में प्रतिरोधकारी दलों ने आश्चर्यजनक रूप से अच्छा काम किया और अग्नि-परीक्षा में से सफलतापूर्वक उत्तीर्ण हुए। इस हड़ताल का एक अविस्मरणीय सबक यह था कि अधिकारियों ने कैदियों के इस विद्रोह का खत्म करने के लिए आशा से कहीं अधिक नर्मी से काम लिया।

बड़े पैमाने पर रक्तपात करने से सोवियत रूस के उत्पादन के प्रवाह में बड़ी गंभीर बाधा पैदा हो जाती।

हड़ताल जिस तरह एकाएक और रहस्यपूर्ण तरीके से प्रारम्भ हुई थी, उसी तरह खत्म भी हो गई। शाम तक पास की खानों से कोयले से भरे छकड़े फिर आने लगे। जनरल ने ठीक ही कहा था। दूसरे कैम्पों में काम शुरू हो गया था। कैम्प नं० ६ के हड़तालियों ने महसूस किया कि अन्य कैम्पों की घटनाओं से वे अविच्छिन्न रूप से बंधे हुए हैं, वे अकेले हड़ताल जारी नहीं रख सकते।

सारी बैरक में दबी जबान से लोगों की बातें सुनाई पड़ने लगीं। हड़ताल खत्म हो गई है, यह विचार आहिस्ता-आहिस्ता जड़ पकड़ने लगा। कैदी सुन्न रह गये। हड़ताल का नैतिक प्रभाव इतना अच्छा हुआ था। वह इतनी लोकप्रिय हो गई था। यहाँ तक कि बूढ़े अशक्त किसान कैदी भी रेंगते हुए अपनी बैरकों से बाहर आकर कहने लगे थे, "शाबाश बच्चो! इस निकम्मी सरकार को मजा चखा दो। उसके साथ वही करो जिसके वह लायक है। उसको योजना के लिए एक टन भी कोयला न जाने पाये।"

अब उन सभी ने निराशा के साथ ठण्डी साँस लेकर कहा, "हमने सोचा था, तुम उस समय तक हड़ताल जारी रखोगे जब तक वे हमें आजाद नहीं कर देते।"

बैरकों में एक मुर्दनी-सी छा गई। स्थिति को कैसे संभाला जा सकता है? शायद किसी भी तरह नहीं। हर कोई पच्चीस वर्ष की दूसरी सजा की बात सोच रहा था, जो अत्यन्त सुनिश्चित थी। कैदी अपने बिछौनों पर लेटे हुए सोच रहे थे, "पर हम कर क्या सकते हैं?"

दूसरे दिन जब सुबह का बिगुल बजा तो वे लोग उठ खड़े हुए और काम पर चले गये। कोई पीछे नहीं रहा। ऐसा लगा, मानों हड़ताल हुई ही न हो। क्या यह एक चामत्कारिक स्वप्न से अधिक कुछ नहीं था?

इसका और कोई अन्त हो भी कैसे सकता था? सोवियत सरकार के पास संसार की आज तक की सबसे बड़ी सेना है, उसकी खुफिया पुलिस की ताकत की किसी को कोई थाह नहीं है और साथ ही उसके

पास सैनिक ढंग की नियमित पुलिस भी है। ऐसी दशा में सरकार की ओर से किसी महत्वपूर्ण रिआयत के बगैर ही कैदियों के आत्मसमर्पण के सिवाय और किसी रूप में हड़ताल का अन्त हो ही कैसे सकता था ?

खैर, सब कुछ खत्म हो गया। खानें फिर काम करने लगीं।

लेनिनग्राड को कोयला न पहुँचने का कोई खतरा नहीं रहा।

इस सारे कांड का नतीजा क्या रहा ?

हड़ताल के बारे में सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि वह हुई तो सही। इसका कैदियों पर ही नहीं, सोवियत रूस के दूसरे भागों के नागरिकों पर भी गहरा असर हुआ। दो महीने बाद खान में काम करने के लिए लेनिनग्राड की खान विज्ञान संस्था के कुछ छात्र आये।

"हमें जल्दी ही पता लग गया था कि तुम लोग हड़ताल कर रहे हो," उन्होंने हमसे कहा, "कोयले की मात्रा में कमी एक दम दीखने लगी थी। हमारे पास कोयले का कोई सुरक्षित भंडार जमा नहीं है। सरकार ने सिर्फ योजना बना दी है, बस और कुछ नहीं। और हर कोई जानता है कि योजनाएँ कैसे आसानी से खटाई में पड़ सकती हैं।

१९२१ के क्रोन्स्टार के नौसैनिक विद्रोह के बाद यह हड़ताल ही सरकार के विरुद्ध सर्वप्रथम प्रकट और ठोस प्रदर्शन था। इसने इस कल्पना की धज्जियाँ उड़ा दी थीं कि इस शासन प्रणाली पर कभी आंच नहीं आ सकती। वस्तुतः रूसी मजदूर किसी भी अनुकूल मौके पर अपने शासक वर्ग के विरुद्ध उन्हीं उपायों से, जिनका कि यह शासक वर्ग पूंजीवादी देशों के मजदूरों को उपदेश देता है, इस प्रणाली पर प्रहार कर सकते हैं। इसके अलावा सोवियत रूस की योजनाबद्ध अर्थ व्यवस्था पर इस तरह का हमला "पूंजीवादी" समाज की अपेक्षा अधिक आसानी से हो सकता है। लाखों कैदियों की इस विशाल सेना का वस्तुतः ही कच्चे माल की सप्लाई पर नियन्त्रण है (पचास प्रतिशत कोयला और अस्सी प्रतिशत लकड़ी)। वोर्कुटा में ही नहीं, किन्तु एन० के० वी० डी०

द्वारा प्रशासित हरेक क्षेत्र में होनेवाली हड़ताल निश्चय ही सोवियत अर्थ व्यवस्था की जड़ें हिला देगी।

हड़ताल के लिए परिस्थितियाँ अब भी ज्यों की त्यों बनी हैं। कैदियों की सजाओं में कमी नहीं हुई है। उन्हें आम माफी नहीं दी गई। पहले की भाँति आज भी वोर्कुटा में गुलाम मजदूर उसी प्रकार कांटेदार तारों के घेरे में रहते हैं, जिस प्रकार सोवियत रूस के अन्य ऐसे भागों में।

यही कारण है कि संघर्ष जारी रहेगा। हड़ताल खत्म होते ही प्रतिरोधकारी आन्दोलनों के नेताओं ने अपनी गलतियों का विश्लेषण प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने इन गलतियों से सबक सीखा है और नतीजे निकाले हैं।

१७ जून को बर्लिन में और उसके छः सप्ताह बाद वोर्कुटा में घटी घटनाओं में अनेक समानताएँ थीं, पर उनमें एक बुनियादी अन्तर था। बर्लिन में रूसियों ने तुरन्त ताकत का प्रयोग किया, किन्तु वोर्कुटा में हड़ताल कई सप्ताह तक जारी रही। सोवियत सरकार भली-भाँति जानती थी कि यदि सोवियत रूस के मध्य में किसी हड़ताल को उन्हीं निष्ठुर उपायों से कुचला गया जिनका बर्लिन में इस्तेमाल किया गया था, तो स्थिति जर्मनी की अपेक्षा अधिक भयंकर और खतरनाक रूप धारण कर लेगी। जरूरत पड़ने पर चंगेजखाँ के इस नये साम्राज्य की सुदूर परिधि पर स्थित किसी शहर को लोगों से खाली किया जा सकता था, किन्तु वोर्कुटा को नहीं। १६५३ की गर्मियों की हड़ताल कैम्पों से कारखानों में भी फैल सकती थी। क्रूर सैनिक दमन आम विद्रोह के लिए एक इशारा बन सकता था, और उसके जो परिणाम होते उनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। रूसी सरकार ने जिस धैर्य से इस हड़ताल का सामना किया वह किसी ऐसे शासन का धैर्य नहीं था, जिसे अपने आप पर पूरा भरोसा हो।

इस हड़ताल के धक्के से क्रेमनिल की बुनियादें हिल गईं, किन्तु पश्चिम को उसका पता तक नहीं लगा। कारण, यह धक्का सामाजिक क्षेत्र का धक्का था, अणु विज्ञान के क्षेत्र का विस्फोटजन्य धक्का नहीं था।

———

अध्याय १२

वोर्कुटा से विदाई

६ दिसम्बर, १९५३ को सुबह-सुबह क० मुझे तलाश करता हुआ मेरी बैरक में आया।

"तुम जानते हो तुम्हारा नाम भी उन ६ जर्मनों की सूचि में है, जो यहाँ से जा रहे हैं ?"

"नहीं, मैं कुछ नहीं जानता।"

मैं अभी उससे पूछ ही रहा था कि उसे यह खबर कहाँ से मिली, कि उसी समय स० आ गया। उसका नाम भी सूचि में था। वह अपने बारे में वास्तविकता की जाँच करने आया था और क० की जानकारी से उसकी पुष्टि हो गई। इस विषय में अब जरा भी सन्देह नहीं रहा कि कुछ दिनों में कैम्प नं० ६ से ६ जर्मन बाहर भेजे जा रहे हैं, जिनमें से एक मैं भी था। यह स्पष्ट था कि अबकी दफा हमारी यात्रा का अन्त स्वतन्त्रता में होगा।

हम सबको इकट्ठा होने में कुछ समय लगा। हममे एक क० था जिसे १९४८ में पूर्वी क्षेत्र में आने पर गिरफ्तार कर लिया गया था और पूर्णतः निर्दोष होने पर भी पच्चीस वर्ष की सज़ा दे दी गई थी। एक म० था, जो बर्लिन का पुराना साम्यवादी और शौकिया रेडियो कलाकार था, जिसे युद्ध काल में कुछ समय तक रेडियो स्टेशन पर नियुक्त रखा गया था और जो, रूसियों के कथनानुसार, जासूसों को रेडियो से समाचार भेजता था। उसे दस वर्ष का दण्ड दिया गया था, जिसमें से आठ वर्ष वह पूरे कर चुका था। ड्रेसडन का निवासी और एक भूतपूर्व खुफिया पुलिस कर्मचारी एरिक ह० भी हम लोगों में था। उसने युद्धकाल में जेरूसलम के ग्रांड मुफ्ती के जर्मनी आने पर उनकी

देखरेख की गलती की थी, जिसके लिए उसे पच्चीस वर्ष की सज़ा दी गई थी जिसमें वह नौ वर्ष काट चुका था। एक डाक्टर क० था, जो पहले वाउत्जन में अस्पताल का इंचार्ज था और जिसे इसलिए पन्द्रह वर्ष की सज़ा दी गई था कि रूसी किसी ऐसे आदमी को स्वतन्त्र नहीं रहने देना चाहते थे जिसे १९४५ से १९४९ तक बहुत बड़े पैमाने पर हुई सामूहिक मौतों की जानकारी हो। इनके अलावा स० था, जिसे एन० के० वी० डी० की तरफ से जासूसी करने के काम से इन्कार करने के कारण दस वर्ष की सज़ा मिली थी; एक श० था जो पूर्वी क्षेत्र में वैज्ञानिक समस्याओं से सम्बद्ध किसी संस्था का सदस्य था और पच्चीस वर्ष की सज़ा काट रहा था। और सबसे अन्त में था मैं ब्रिटेन और अमरीका का जासूस, जिसने पश्चिमी राष्ट्रों की ओर से रूस पर उतनी ही जासूसी की थी जितनी कि खुद मालेनकोव (तत्कालीन रूसी प्रधान मंत्री) ने, जो जासूसी के अभियोग में पच्चीस वर्ष की सज़ा भोग रहा था। हम सात के अतिरिक्त दो अन्य व्यक्ति भी थे जिन्हें मैं व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था, किन्तु मुझे इतना ही मालूम था कि वे भी पच्चीस वर्ष का दण्ड भोग रहे थे।

सब मिलाकर हम सबको २१० वर्ष के बलात् श्रम की सज़ा मिली थी जिसमें से हम ७० वर्ष की सज़ा काट चुके थे। और मास्को का वह गुप्त केन्द्रीय संगठन, जिसकी विविध शाखाओं ने प्रायः हम सबको आजीवन कारावास के समान ये सजाएँ थीं, और अब शायद हममें से किसी को भी कभी देखे बिना रिहा कर रहा था, स्पष्टतः भली भाँति जानता था कि वह क्या कर रहा है और किन लोगों को रिहा कर रहा है। हममें से एक भी आदमी ऐसा नहीं था जिसके खिलाफ इस बात का लेशमात्र भी प्रमाण था कि उसने कभी भी पश्चिमी राष्ट्रों की ओर से सोवियत रूस के विरुद्ध कोई भी काम किया है।

हमेशा की भाँति अब भी सारा काम नितान्त अस्पष्टता से हो रहा था। हम कपड़े के गोदाम में गये, जहाँ हमें नये रूईदार कपड़े, फेल्ट के

बूट, नीचे पहनने के कपड़े और जूते दिये गये। कैम्प जीवन के साढ़े तीन वर्षों में पहली बार मुझे नये कपड़े मिले।

उसी दिन दोपहर के काफी देर बाद हम चोरनोई वोरोन (एक विशेष कैदी गाड़ी) में कैम्प से विदा हुए। इसमें एक दर्जन बन्द पिंजरे थे, जिनमें से हर एक में एक-एक आदमी के लिए जगह थी। पिंजरे पहले ही भरे थे। हम लोगों को ड्राइवर के पीछे की ज़रा-सी संकरी जगह में एक-साथ ठूंस दिया गया। पीछे के दरवाज़े की छोटी-सी खिड़की से बाहर देख सकना सम्भव था।

गाड़ी उत्तरी खानों से वोर्कुटा की ओर जानेवाली ऊबड़-खाबड़ सड़क पर हिचकौले खाती हुई दौड़ रही थी। शहर पारकर हम लोग खान नं० १ और ६/१० के पीछे नदी की ओर जानेवाली सड़क पर घूम गये। मैं इस तरह चप्पा-चप्पा ज़मीन को पहचानता था। एक समूचा जाड़ा मैंने यहाँ सब तरह की ठंड और सब तरह के बर्फानी तूफान में आठ घंटे प्रतिदिन सड़कों पर से बर्फ हटाने के काम में व्यतीत किया था। हम लकड़ी की बनी विशाल दुमंज़िली जेल के पास से गुजरे। वहाँ खिड़कियों पर बन्द परदे लगे थे, ठीक वैसे ही जैसे कि बर्लिन, आइज़ेनाख और ब्लाडीवोस्टोक अथवा वारसा, मास्को, सोफिया, प्राग और बुडापेस्ट की जेलों की खिड़कियों पर चढ़े रहते हैं। गाड़ी कैम्प नं० ६/१० के पहरेदारों के कमरे के पास से गुज़री। यहाँ मैंने हज़ारों बार तीसरे पहर का अन्तिम समय काम से लौटते हुए अपने दल की प्रतीक्षा में खून जमा देनेवाले कड़कड़ाते जाड़े में शीत, भूख और थकान से व्याकुल होकर खड़े-खड़े बिताया है। इसके बाद हम विशाल रेलवे पुल के साथ-साथ वोर्कुटा नदी पर बने लकड़ियों के पुल के तख्तों पर से खट-खट करते हुए तेजी से गुजरे। गाड़ी मन्द गति से घर्र-घर्र करती हुई चढ़ाई चढ़ रही थी। यहाँ ठीक खान नं० ८ के नीचे वोर्कुटा का तबादला कैम्प था। गाड़ी फाटक के आगे रुक गई।

तबादला कैम्प की बैरक में हमने कुछ अन्य कैम्पों से आये ६० के

लगभग और भी व्यक्ति देखे। उनमें से कुछ कई दिनों से यहाँ पड़े-पड़े इन्तजार कर रहे थे। मैं अपने कैम्प नं० ६/१० के तीन और कैम्प नं० ४० के एक पुराने साथी से मिला; जिनके साथ मैं १६५० की गर्मियों में वोर्कुटा आया था। शाम को हम बहुत देर तक अपने भविष्य के बारे में और अपने मित्रों के बारे में बातचीत करते रहे। जहाँ तक जर्मनी लौटने की भविष्यवाणी का सम्बन्ध था, हममें से कोई भी निश्चयपूर्वक कुछ कहना नहीं चाहता था। सबकी आम राय थी, "इन्तजार करो और देखो।"

शाम को हम सबके अलग-अलग नाम पुकारकर हमारी हाजिरी ली गई। एन० के० वी० डी० का एक कप्तान एक छोटे-से कमरे में बैठकर हम लोगों द्वारा अपने सम्बन्ध में दी गई जानकारी का हमारे सम्बन्ध में दर्ज जानकारी से मिलान कर रहा था।

"तुम्हें कितनी सजा मिली थी?" उसने पूछा।

क्या इसके मानी यह हैं कि अब सजा पूरी हो गई?

रात को हमें जगाया गया और पहरेदारों के कमरे के सामने एक पंक्ति में ला खड़ा किया गया। हमारे नाम पुकारे गये और उसके बाद फाटक से बाहर ले जाकर हमें फिर पहरेदारों के कमरे के बाहर नई पंक्ति बनाकर खड़ा कर दिया गया। अन्धेरे में रेलवे लाइन के पार ले जाकर एक रेलवे साइडिंग में प्रतीक्षा कर रही कुछ जानवरों की गाड़ियों में हमें भर दिया गया। पहली गाड़ी में से स्त्रियों की आवाज बिल्कुल स्पष्ट सुनी जा सकती थी। एक आदमी ने पूछा कि क्या स्त्रियाँ भी हमारे साथ जायेंगी? हमें पचास-पचास के दो झुंडों में बाँटकर शेष दो गाड़ियों में लाद दिया गया। ये साधारण ६० टन वजन वाले डिब्बे थे, जिनमें एक-के ऊपर एक तीन-तीन बर्थ बने थे। हर डिब्बे में दो छोटी अँगीठियाँ थीं। दीवारें बर्फ से ढकी थीं।

हम बाहर जाकर कोयला और लकड़ी ले आये किन्तु लकड़ी गीली होने से अँगीठियों से धुआँ निकलने लगा।

"जल्दी ही ये जलने लग जायँगी।' किसी ने कहा, "हमने श्राधी दुनियाँ में श्राग लगा डाली थी, तो क्या इन श्रँगीठियों को ही नहीं जला पायेंगे?"

उसने गाड़ी की सीट से एक सूखा तख्ता निकाला श्रौर उसे तोड़ने लगा। श्राधे घंटे बाद श्रँगीठी खूब दहकने लगी।

मध्य रूस के श्रार-पार कोयला श्रौर लकड़ी ले जानेवाली गाड़ियों के साथ हमारे डिब्बे जोड़ दिये गये श्रौर इस प्रकार न जाने कितने दिन तक हम इनमें सफर करते रहे। इसमें से श्राधा समय हमारी गाड़ी ने चलते हुए बिताया श्रौर शेष वोर्कुटा श्रौर कोटलास के बीच करीब साढ़े सात सौ मील लम्बी इकहरी रेलवे लाइन की विविध साइडिंगों में। श्राहिस्ता-श्राहिस्ता टण्ड्रा पीछे छूटने लगा। छोटी-छोटी झाड़ियों की जगह फर श्रौर बीच के नन्हें पेड़ नज़र श्राने लगे। कुछ सौ मील श्रौर श्रागे जाने पर वृक्ष छः-छः फुट तक ऊँचे थे। श्रन्त में दो दिन हमने उन जंगलों के बीच से सफर किया जो ध्रुव क्षेत्र के ठीक नीचे के प्रदेश में पाये जाते हैं।

हम पेचोरा से होकर गुजरे जो इसी नाम की नदी पर श्रवस्थित है श्रौर श्रपने विशाल रेलवे डिपो के कारण उत्तर में वोर्कुटा के बाद सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है। गाड़ी श्राधा मील लम्बे एक पुल पर से गुजरी। नदी के किनारे-किनारे जहाजों श्रौर नौकाश्रों के घाट श्रौर गर्मियों के दिनों में उत्तरी हिमसागर की श्रोर जानेवाले माल को उतारने के चबूतरे बने हुए थे। इसके बाद गाड़ी उख्टा स्टेशन पर रुकी। हममें से बहुत-से लोग वोर्कुटा में नये विशेष कैम्प स्थापित होने पर इसी क्षेत्र के कैम्पों के वहाँ गये थे। हम श्रनेक छोटे स्टेशनों से गुजरे जिनमें से हरेक पर श्रपना-श्रपना एक तबादला कैम्प था, जिसके पीछे दर्जन भर लकड़ी की बैरकें बनी थीं। गाँवों की सभी खिड़कियों में रोशनियाँ जल रही थीं। यहाँ किसी को भी यह चिन्ता नहीं थी कि बिजली कम खर्च हो।

हम मास्को और आर्केंजल के बीच अवस्थित कोटलाम और कोनोशा के उन ऐतिहासिक स्टेशनों से भी गुजरे, जिनसे जून, १६५० में हमें अलग-अलग दिशाओं में भेजा गया था। इसके बाद वोलोग्दा का विशाल स्टेशन आया और अन्त में काफी शाम हो जाने पर हम मास्को पहुँच गये। यहाँ खूब रोशनी थी। हर कमरा जगमगा रहा था और हर खिड़की के पीछे एक परिवार रहता था। मुझे मास्को के रहने वाले अपन साथियो की बात याद आई कि मास्को में सबसे बड़ी खराबी यह है कि यहाँ रिहायश के लिए स्थान की बहुत कमी है।

हमारे डिब्बे गाड़ी से काट दिये गये और फिर दूसरी गाड़ी में जोड़ दिये गये। अगले दिन सुबह हम फिर चल पड़े, किन्तु पश्चिम की ओर नहीं, जिसकी हमने आशा की थी, वल्कि दक्षिण की ओर। हम में से जो शुरु से निराशावादी थे, उन्हें अपनी बात की पुष्टि होती दीखने लगी कि आखिरकार हम जर्मनी नहीं जा रहे। अन्त में गाड़ी पूर्व की ओर घूमी। आशावादियों की संख्या अब और भी घट गई। हम सब लोग एक दूसरे से पूछने लगे कि आखिर अभी हमें कितने वर्ष और कैम्पों में बिताने होंगे।

दूसरे दिन डोन वेसिन में हम एक छोटे स्टेशन पर गाड़ी से उतरे। इसका नाम था आलमानासिया।

आलमानासिया में एक बड़ा स्थानान्तरण कैम्प था, जिसमें आधा दर्जन टूटी-फूटी दो मंजिली लम्बी इमारतें थीं, जिनके चारों ओर यथा नियम काँटेदार तारों के घेरे थे। वहाँ कमरों को गर्म करने के लिए एयरकंडीशनिंग का इन्तजाम था, किन्तु वह काम नहीं कर रहा था। कमरे निहायत ठंडे थे और उनमें कोई फर्नीचर भी नहीं था। कोई गद्दा या चटाई नहीं थी। सिर्फ एक-एक कम्बल हमें दिया गया। उसी में लिपटकर हम थकान के मारे फर्श पर ही सो गये।

पहले दिन शाम को हमें सरकारी तौर पर बताया गया कि हम ज्यादा से ज्यादा दो दिनों में यहाँ से रवाना हो जायेंगे। रूसियों की

प्रबन्ध कुशलता को जाननेवाले किसी भी व्यक्ति को इस पर विश्वास नहीं हुआ। हमारे आने से चार दिन पहले चार सौ जर्मन युद्धबन्दी इस कैम्प में आ चुके थे। वे भी यहाँ से रवाना होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। पहले कहा गया कि हम उन्हीं के साथ जायँगे, किन्तु बाद में बताया गया कि उनके जाने का अलग इन्तजाम किया जा रहा है। किन्तु जब हम इन कैदियों से मिले और उनमें से ऐसे बहुत-से व्यक्तियों को हमने पहिचान लिया जिन्हें आज से साढ़े तीन वर्ष पूर्व हमने वोर्कुटा से स्वदेश लौटने के लिए प्रस्थान करते समय अन्तिम नमस्कार किया था, तब हमारे लिए इस बात का कोई महत्व नहीं रह गया कि कौन कब कहाँ जाता है।

युद्धबन्दियों को हम गैरफौजी कैदियों की अपेक्षा एक सहूलियत अधिक थी, कि वे अपने घरों को पत्र लिख सकते थे। उन्हें अपने घरों के पार्सल प्राप्त करने की भी अनुमति थी। आखिर जब उनकी रवानगी का समय आ ही गया तो उससे पहली शाम को जर्मनी से आये पार्सलों से भरे दो ट्रक वहाँ पहुँचे। युद्धबन्दियों ने वे पार्सल हम लोगों को दे दिये, क्योंकि हममें से कोई भी नहीं जानता था कि हमें कितने दिन यहाँ रुकना पड़ेगा।

जब ये पार्सल खोले गये तो उस समय का दृश्य बड़ा विचित्र था। हरेक पार्सल को खोलकर लोगों ने देखा, चखा, उलटा, पलटा, सूंघा और फिर अच्छी तरह परखा।

ये चीजें, जिनसे उनके नये मालिकों को इतनी अधिक खुशी हुई थी, यूरोपीय दृष्टि से कुछ भी विशेष नहीं थी। ये चीजें थीं, सिगरेट, चाकलेट, मुरब्बे का एक डिब्बा, चटनी, एक कमीज, एक जोड़ा मौजे और मछली का एक डिब्बा। किन्तु जो कैदी पांच, छः या सात वर्ष से सिर्फ शलजम के शोरबे, रोटी और काशा पर ही जिन्दगी बिता रहा हो, उसके लिए गैर-सोवियत जगत् की ये रोजमर्रा के उपयोग की वस्तुएं अलौकिक वस्तुओं के सदृश थीं। हम जानते थे कि सोवियत सरकार

इस तरह के पार्सल विशेष कैम्पों में क्यों नहीं जाने देती। हाम्बुर्ग की छठी कक्षा की ब्रिगेट होफर नामक एक स्कूल छात्रा का इसी तरह का एक उपहार का पार्सल, जिस पर उसका मामूली-सा खर्च आया होगा, पूंजीवादी प्रोपेगेंडा का जितना खतरनाक और प्रभावकारी साधन था, उतना और कोई भी साधन नहीं हो सकता था।

उसी दिन शाम को हमें युद्धबन्दियों से अलग कर दिया गया। उस रात उन्हें कतार बांधकर खड़ा किया गया। सन् १६३६ से न जाने कितनी वार इसी तरह उन्होंने कतार बांधी होगी। खाने के कमरे में उनकी तलाशी ली गई कि कहीं उनके पास कोई नियम-विरुद्ध वस्तु तो नहीं है। पौ फटते-फटते वे चले गये। हमने उनकी चटाइयां, गद्दे और कम्बल संभाल लिये।

और सव कैम्पों की भांति आलमानासिया में भी एक सांस्कृतिक विभाग है। एक दिन शाम को इस विभाग ने हमें एक नई रूसी फिल्म दिखाई। इस फिल्म का नाम था 'सेरेब्रनाई पिल' अर्थात् रुपहली धूल। इस फिल्म की कृपा से हमने अपने आपको मानों यन्त्र-बल से अत्यन्त आदिमयुगीन पूंजीवाद के एक देश—संयुक्त राज्य अमेरिका—में पाया, जहां एक नैतिकताहीन जर्मन वैज्ञानिक ने अमरीकी लकड़बग्घों के लिए, जो अगली लड़ाई की तैयारी कर रहे थे, एक रेडियोधर्मी धूल का सफल आविष्कार किया था। इस धूल में सांस लेने का अर्थ था मौत। इस लिए "प्रगतिशील अमरीकी नागरिक" गली-कूचों में इसके विरोध में सभाओं और प्रदर्शनों का आयोजन कर रहे थे। पुलिस न कुछ प्रदर्शनकारियों को, जिनमें नीग्रो भी थे, गिरफ्तार कर लिया। अधिकारियों ने इन नीग्रो लोगों को इस रुपहली धूल के परीक्षणों के लिए खरगोशों की भांति इस्तेमाल करने को इस वैज्ञानिक के हवाले कर दिया। भयभीत दर्शकों ने इन काले उपद्रवियों को मौत के कटघरे में बैठे देखा, जहां से ठीक आखिरी समय में अमरीकी "प्रगतिशील तत्वों" के हस्तक्षेप से उनका उद्धार किया जा सका।

जब फिल्म समाप्त हुई तो जर्मन दर्शकों ने इस बेहूदगी और बेवकूफी से भरी कहानी पर खूब कहकहा लगाया। किन्तु हमारे पहरेदारों को सचमुच क्रोध आ गया जो स्वाभाविक ही था और उन्होंने गुस्से में भरकर कहा, "नीच अमरीकी पूंजीवादी!"

यह फिल्म रूसियों का आखिरी विदाई के समय का सांस्कृतिक समारोह था। दो दिन बाद हमें विदा हो जाना था।

किन्तु हमारी रवानगी की तारीख तीन सप्ताह तक बराबर टलती गई। निराशावादी लोग "अभी-अभी", "अस्थायी तौर पर", और "अनिश्चित काल तक" आदि शब्दों को बहुत महत्व देने लगे। किन्तु एकाएक हमें पशुओं के डिब्बों के लिये, जिन्हें सफर में रसोई के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, बड़ी-बड़ी देगचियाँ साफ करने का आदेश मिला। उसके बाद रसोई में काम करनेवाले आदमी चुने गये। अलग-अलग रेल के डिब्बों के लिए आदमियों की सूचियाँ बनाई गईं और आहिस्ता-आहिस्ता हमारी रवानगी की तारीख प्रशासनिक दफ्तर से निकल आई। हम १५ जनवरी को रवाना हो रहे थे।

हमारे चलने का समय, आ गया। युद्धबन्दियों द्वारा हमारे लिए छोड़े गये पार्सल कबके खा-पीकर निबट चुके थे। जिस किसी के पास जो भी पैसा था, उसकी उसने खाने की चीजें खरीद ली थीं। कुछ लोगों के पास तो खाने को रोजमर्रा के राशन के सिवाय कुछ भी नहीं रहा था। हमें काम न करनेवाले कैदियों का साधारण राशन दिया जाता था, जिससे कुछ महीनों में अपर्याप्त पोषण के कारण शरीर का दुर्बल हो जाना अत्यन्त निश्चित था। दो वर्ष से जिस भूखेपन को हम भूले हुए थे, वह फिर प्रकट होने लगा, किन्तु फिर भी यदि हमने उसे अब तक अनुभव नहीं किया तो उसका एक मात्र कारण यही था कि स्वदेश लौटने की उत्सुकता की उत्तेजना ने हमारी भूख मार दी थी।

अन्त में जब हम १५ जनवरी को चल ही पड़े तो हममें किसी तरह की उदासी या अफसोस की भावना नहीं थी। गाड़ी, जिसमें

हमेशा की भाँति ६० टन वजन वाले पशुओं के डिब्बे लगे थे, साइडिंग में खड़ी थी। यह वही गाड़ी थी जिसमें हम वोर्कुटा से आये थे। एक लारी गद्दे और बिछौने ले आई। डिब्बों की मुहरें तोड़ दी गईं। हम दरवाजों के रास्ते भीतर पहुँचे। फिर वही अंगीठी जलाने और लकड़ी-कोयला इकट्ठा करने का धन्धा चालू हो गया।

हम सबको गाड़ी पर सवार होने में कई घंटे लग गये। कुछ बीमार आदमियों को स्ट्रेचरों पर डालकर लाना पड़ा। अन्त में जब गाड़ी में हरकत पैदा हुई तो वह पश्चिम की ओर जा रही थी।

दूसरे दिन हम यूक्रेन के एक छोटे स्टेशन पर ठहरे। इंजन ने पानी और कोयला लिया। जत्थे के इंचार्जों ने पैंतालीस मिनट तक गाड़ी रोकने की आज्ञा दे दी। हम लोग नीचे उतर आये और गाड़ी के इर्दगिर्द घूमकर टाँगें सीधी करने लगे। बड़ा कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा था।

कार्ल को स्त्रियों के डिब्बे में चाय पीने का निमन्त्रण मिला था। १६५० में वह उसी जत्थे के साथ आया था जिसमें रोसा थी और अब वे दोनों फिर इकट्ठे ही लौट रहे थे। रोसा ने ही उसे न्योता दिया था। वह उसे अपनी दो सहेलियों के साथ चाय पर बुलाना चाहती थी।

"तुम भी मेरे साथ चलो", कार्ल ने मुझसे कहा, "मैं शायद अकेला तीन औरतों से एक साथ बातचीत जारी नहीं रख सकूँगा।"

मैंने कहा, "मेरी स्त्रियों के साथ चाय पीने जाने की बहुत इच्छा नहीं है। मठों का-सा जीवन, संसार से विरक्त—ये चीजें मेरी दृष्टि में बहुत लाभदायक हैं। इनसे इन्सान अपने आपको पूर्णतः आध्यात्मिक साधना में लगा सकता है। स्त्रियाँ उसे इस साधना से दूर हटाती हैं। पश्चिमी जगत् के साथ फिर सम्पर्क कायम करना ही साधना को काफी भंग करनेवाला होगा। फिर पहले से ही उस ओर क्यों कदम रखा जाय और अभी तक प्रसुप्त पड़ी भावनाओं को क्यों जगाया जाय ?

कार्ल इनमें से एक भी युक्ति से प्रभावित नहीं हुआ। "वे सारे

जत्थे में सबसे अच्छी लड़कियाँ हैं", वह बोला, "ठेट भद्र महिलाएँ, भले ही अभी तक उन्होंने अपनी रूईदार जाकटें पहनी हुई हैं।

"इसीलिए तो मैं जाना नहीं चाहता", मैंने उत्तर दिया।

किन्तु फिर भी उसने मुझे मना ही लिया और औरतों के डिब्बे में ले गया। हम अपने मित्र ओस्कर को भी तीसरे साथी के रूप में साथ ले गये और एक छोटी सीढ़ी से ऊपर चढ़कर महिलाओं के घर में दाखिल हो गये।

तीनों स्त्रियाँ, स्त्रियों के कैम्प प्रेत्शाख्लाया की भूतपूर्व सदस्या निकलीं। हम लोग वोर्कुटा में उनके पड़ोस में रह चुके थे, हमारे और उनके स्थान में दो मील से भी कम फासला था। वे भी वही काम करती थीं जो कैम्प नं० ६ के मजदूर करते थे, यानी मालगोदाम के यार्ड में या बर्फ हटाने के लिए सड़कों पर। अब वे फिर अपने हाथों की भली-भाँति देख-रेख करने लगी थीं, किन्तु फिर भी दिखाने के लिए उन पर छालों के अभी तक काफी निशान थे।

उन्हें भी वही अनुभव हुए थे जो असाधारण कैदियों को होते हैं।

लिली के माता-पिता जर्मन थे और दक्षिण अफ्रीका में रहते थे। उनका परिवार १९३९ से बराबर जर्मनी जाने का प्रयत्न कर रहा था। १९४४ के जाड़ों में उनका प्रयत्न सफल हो गया, किन्तु वह उन्हें बहुत महंगा पड़ा। उनके पिता रूसियों के हाथ में पड़ गये और उन्हें तीन वर्ष बुखेनवाल्ड के नजरबन्द कैम्प में काटने पड़े। लिली को जो खूब अच्छी अंग्रेजी बोल सकती थी, बर्लिन में ब्रिटिश सैनिक प्रशासन में सेक्रेटरी का काम मिल गया। १९५० में वह किसी मित्र से मिलने पोट्सडाम गई। अचानक वह शिनाख्त पत्रों की जाँच के एक चक्कर में फंस गई। उस पर जासूसी का अभियोग लगाया गया और पन्द्रह वर्ष के सपरिश्रम कारावास की सजा दे दी गई।

रोसा पूर्वी बर्लिन में एक फैशन घर चलाती थी। उसके ग्राहकों में उसकी एक पुरानी सहेली थी जिसका पति बर्लिन में फ्रांसीसी फौजी

सरकार का एक अफसर था। यह जासूसी के सिवाय और हो ही क्या सकता था ? इसलिए उसे पन्द्रह वर्ष की सजा मिली।

ग्रेटल पूर्वी क्षेत्र में गृहविहीन बच्चों की समस्या पर डेफा फिल्म कम्पनी के लिए कथानक लिखने का काम कर रही थी। विषय का प्रत्यक्ष अध्ययन करने के लिए वह पूर्वी जर्मनी के एक कल्याण केन्द्र में रहने चली गई। उसे वहाँ कई गुप्त कागजात दिखाये गये। एक दिन रूसियों को पता लग गया कि उसका घर पश्चिमी क्षेत्र में है। उसका अर्थ इसके सिवाय और क्या हो सकता है कि वह एक जासूस थी। इसलिए उसे भी पन्द्रह वर्ष की सजा दी गई।

ये लड़कियां, जो अभी सिर्फ कुछ समय पूर्व ही वोर्कुटा के माल-गोदाम के यार्ड में काम करती थीं, अब अत्यन्त प्रसन्न और सुखी मालूम होती थीं। उन्हें देखकर कोई यह नहीं सोच सकता था कि इन्हें सब मिलाकर पैंतालीस वर्ष की सजा मिली थी। वे जासूस मानी गई थीं। 'प्रावदा' में जो कुछ प्रकाशित हुआ था वह यदि सच होता तो सोवियत सरकार उन्हें कभी रिहा न करती।

उन्होंने अपने कैम्प के जीवन के बारे में हमें बताया। उन्हें भी बरफानी तूफान, शरीर तोड़ देनेवाला काम, पाले से हाथ पांवों का जम जाना, कांटेदार तार और शलजम का शोरबा—इन सभी चीजों को झेलना पड़ा था। उन्होंने रेल के डिब्बों से माल उतारकर और पेड़ों के तने एक जगह इकट्ठे कर अपने दिन काटे थे। उन्होंने मशीनी आरे पर काम किया था। उन्होंने वोर्कुटा की बुनियादों में जमे हुए गारे पर भी काम किया था। उन्होंने कंक्रीट मिलाया था और ईंटें चिनी थीं। उन्होंने नहरें खोदी थीं, कोयला उतारा था और १६० पौंड वजन की बोरियां ढोई थीं।

हमने एल्युमीनियम के वर्तनों में जार्जियन चाय पी। ओस्कर ने ग्रेटेल को सफेद ईरानी भेड़ की खाल की बनी समूर की टोपी भेंट की। उसे खरीदने लायक धन जमा करने के लिए ओस्कर को तीन महीने

तक यूराल के अपने जंगल कैम्प में डाक्टर के रूप में काम करना पड़ा था। समूर की इस टोपी से ग्रेटेल रानी जैसी दीख पड़ती थी। हमने उसका नाम अनास्तासिया रख दिया।

दो दिन बाद हमारी गाड़ी ब्रेस्ट-लिटोव्स्क स्टेशन पर रुकी। स्टेशन विभिन्न साम्यवादी देशों से आये मालगाड़ी के डिब्बों से खचाखच भरा हुआ था। यहां से जिस गाड़ी में हमें जाना था, उसका एक जर्मन कर्मचारी हमें मिल गया। हमारे लिए वह एक अद्‌भुत प्राणी जैसा था और हममें से तीस या चालीस आदमियों ने उसे घेर लिया और उससे हाथ मिलाये। हमने उस पर इतने सवालों की झड़ी लगा दी कि उन सबका उत्तर देना उसके लिए असम्भव था।

"हम यहां से आगे कब रवाना होंगे ?"

"यात्रा में कितना समय लगेगा ?"

"हमें कहां ले जाया जा रहा है ?"

"क्या पहले आये बंदियों के जत्थे मुक्त कर दिये गये हैं या वे पूर्वी क्षेत्र के किसी कैम्प में हैं ?"

अन्त में हाथ हिलाकर उसने हमें चुप कर दिया और बोला, "जर्मनी पहुँचते ही तुम सब रिहा कर दिये जाओगे और हम जितनी तेजी से सम्भव होगा यात्रा करेंगे ताकि तुम्हें जल्दी से जल्दी वहाँ पहुँचा दें।"

हमारी गाड़ी माल उतारने के प्लेटफार्म के साथ खड़ी कर दी गई जिसके दूसरी तरफ जर्मन माल गाड़ी के डिब्बे थे। विल्हैल्य पीक (तत्कालीन पूर्वी जर्मन प्रधान मन्त्री) के पास सवारी गाड़ी के इतने डिब्बे नहीं थे कि वे हमारे लिए सवारी गाड़ी भेज सकते। हमने गाड़ी बदली। फिर वही लकड़ी के तख्ते और अंगीठियां और उन्हें जलाने का पुराना धन्धा। उसी दिन तीसरे पहर गाड़ी चल पड़ी। १९५० की भाँति एक बार फिर हम उसी तटस्थ प्रदेश में से गुजरे जो सोवियत रूस की सीमा को बिल्कुल अविच्छेद्य रूप से बन्द कर देता है ताकि

कोई सोवियत नागरिक उस शासन प्रणाली से, जहां उसके लिए कोई आशा नहीं है, भागकर पनाह न ले सके। वुग नदी पर बरफ की तह जमी हुई थी। हम गाड़ी से उतरे और हमारी गिनती की गई। पोल लोगों ने हमारे साथ भद्रतापूर्ण खामोशी का व्यवहार किया। आधे घंटे बाद हम फिर आगे चल पड़े।

पोलैंड सोवियत रूस से कितना भिन्न प्रतीत होता था। गांवों की खूब सार-संभाल की गई थी। टूटी-फूटी खस्ता झोपड़ियों के बजाय वहां कितनी ही लाल ईंट की नई इमारतें थीं। खेत भी ढंग से बनाए गये थे। बढ़िया चौड़ी सड़कें थीं और साइकिल सवार थे! यूरोपीय पैमाने से अवश्य लोगों की पोशाकें घटिया थीं, किन्तु सोवियत पैमाने से उन्हें बहुत बढ़िया कहा जा सकता था।

जिस रास्ते से हम १६५० में पूर्व की ओर गये थे, उसी रास्ते से फिर वापस लौट चले—वही वारसा—कुतनो—पोसेन। जिस समय हम पोलैंट को पार कर रहे थे आकाश; में शुभ्र चांदनी छिटक रही थी। हमारे डिब्बे का दरवाजा कुछ पीछे की ओर खिसकाकर संकरी-सी सन्ध में से ईरानी भेड़ की खाल की टोपी से अलंकृत रानी बाहर का चन्द्रिकाधवल दृश्य देखने लगी। कुछ देर बाद वह बोली, "हम खुश-किस्मत हैं, भगवान की कसम, सचमुच ही हम खुशकिस्मत हैं!"

सुबह तीन बजे का समय। गाड़ी ओडर नदी के विशाल पुल को आहिस्ता-आहिता पार कर रही थी। हर कोई जाग रहा था। यह वही पुल था जिसे पांच, छः, साल या इससे भी अधिक वर्ष पूर्व हममें से हरेक ने पूर्व की ओर यात्रा करते हुए पार किया था।

जिस देश से हम इतने दीर्घ काल तक बिछुड़े रहे हैं, वह हमारा कैसे स्वागत करेगा?

गाड़ी रुक गई। डिब्बे के दरवाजें धकेलकर खोल दिये गये। हम फ्रांकफुर्ट-आन-डेर-ओडर स्टेशन पर थें, जिसके अंधकाराच्छन्न प्लेटफार्ट

पर हमारे हर डिब्बे के आगे जैतूनी हरे रंग की वर्दी पहने और कन्धे पर बन्दूक रखे पूर्वी जर्मन पुलिस का एक-एक सिपाही खड़ा था।

"तुम किस पर गोली चलाओगे ?"

"यह बन्दूक किसे मारने के लिए है ?"

"क्या तुम सचमुच समझते हो कि यहां पहुंचकर भी हम भाग जायेंगे ?"

"पर किसी न किसी को व्यवस्था तो कायम रखनी ही पड़ती है।" सिपाही ने उत्तर दिया।

जरूर, बिल्कुल जरूर। किसी न किसी को हर वक्त व्यवस्था कायम रखनी ही पड़ती है। और उसे हमेशा उसके लिए राइफल का इस्तेमाल करना पड़ता है। जर्मनी के इतिहास में वह कौन-सा समय था, जब ऐसा नहीं हुआ ?

पुलिस के एक अफसर नें हुक्म दिया, "दो-दो की कतार में खड़े हो जाओ !"

आहा, क्या बढ़िया हुक्म है! कब से हम इसी तरह की चीज का तो इन्तजार कर रहे थे। पुलिस के सिपाही को फिर व्यंग्य का निशाना बनाया गया। कुछ समय तक वह खामोशी से सब सुनता रहा, उसके बाद बोला, "मैं अपना कर्त्तव्य पालन कर रहा हूँ !"

खूब ! राइफल से लैस जर्मन हमेशा ही अपने कर्त्तव्य-पालन में रत होते हैं ! इस समय वे सिर्फ यह देखने के लिए हमें गिन रहे थे कि कोई गायब तो नहीं है। पूरी तसल्ली करने के लिए उन्हें कई बार गिनती करनी पड़ी।

"भीतर चले जाओ !"

राइफलधारी पुलिसमैन ने हमारे भीतर चले जाने के बाद पशुओं के डिब्बों के दरवाजे फिर बन्द कर दिये। हम लोगों में फिर मायूसी छा गई।

"हमने कभी नहीं सोचा था कि ऐसा होगा।"

हाँ, मैंने सोचा था कि ऐसा ही होगा। किन्तु यह बात मेरी कल्पना में नहीं आई थी कि हमारा स्वागत ठेठ पुराने प्रशियन तरीके से होगा।

गाड़ी फिर आगे चल पड़ी। यह यात्रा की आखिरी मंजिल थी। करीब एक घण्टे बाद गाड़ी फुर्स्टेनवाल्डे स्टेशन के माल गोदाम के पास रुकी। किन्तु इस बार कोई पुलिसवाला नहीं, कोई सन्तरी नहीं, कोई पहरेदार नहीं। हम गाड़ी से उतर आये और झुंड बनाकर खड़े हो गये।

जिन लोगों को पश्चिमी जर्मनी जाना था उन्हें आइजेनाख के रास्ते क्षेत्रीय सीमा पर ले जाने के लिए पास की साइडिंग में एक विशेष गाड़ी खड़ी थी।

"तुम्हें जिन चीजों की जरूरत हो सकती है, वे सब हमारे पास हैं", जर्मन रेडक्रास की एक नर्स की आवाज सुन पड़ी, "तुम लोग तुरन्त नाश्ता कर सकते हो, काफी, चाय, चाकलेट और कोकी सब कुछ है।"

"और सन्तरे भी ?" किसी ने पूछा।

"इतने कि तुमसे खाये भी न जायें।"

हम एक दूसरे से विदा हुए।

"तुम्हारी यात्रा सुखकर हो ! पूंजीवाद को मेरा प्रणाम कहना।"

"आशा है तुम जल्दी आओगे।"

हम आजाद हो गये।

पांच वर्ष बाद पहली बार हम बिना किसी की बन्दूक की नोक से डरे आजादी से घूम सकते थे। किसी की "हाथ पीठ के पीछे करो !" की कर्कश आवाज का भय नहीं था।

क्या हम सचमुच स्वतन्त्र थे ? माल गोदाम के माल लादने के प्लेटफार्म पर कुछ बी० एम० डब्लू० मोटरें खड़ी थीं, जो अभी-अभी कारखाने से तैयार होकर निकली थीं।

"जबसे एन० के० वी० डी० के आदमी मुझे एक बी०एम०डब्लू०

गाड़ी में बैठाकर ले गये थे, तबसे मुझे इन गाड़ियों से नफरत हो गई है", रानी ने कहा।

शायद वे लोग हमारी इन्तजार कर रहे हैं। रूस ने हमें रिहा कर दिया है, किन्तु अब शायद यहां के लोग हम पर अपनी ताकत आजमाना चाहते हैं।

हमें कुछ मोटरों पर सवार होने को कहा गया जिनमें बैठाकर हमें कैम्प में ले जाना था ताकि वहाँ हमें मुक्त किया जा सके। किन्तु हमने पैदल चलना पसन्द किया। हमने अपना सामान उठा लिया और फुर्स्टेनवाल्डे स्टेशन से कैम्प की ओर जानेवाली चौड़ी सड़क पर चल पड़े। यहाँ हर पल हमारे लिए आनन्ददायक था।

मैं यह नहीं कह सकता कि ब्रांडनवुर्ग के ये छोटे-छोटे-से कस्बे मुझे पसन्द हैं। कवायदों, वर्दियों और फौजी बैरकों के साथ इन कस्बों का इतना घनिष्ट सम्बन्ध रहा है कि ये मुझे जरा भी प्रिय नहीं हैं। किन्तु आज के इस खास प्रभात की नीरव शान्ति मे यह स्टेशन रोड, जो ब्राण्डेनबुर्ग-फुर्स्टेनवाल्डे के किसी भी कस्बे की सड़क से तनिक भी भिन्न नहीं है, बुलवर्ड सेंटमाइकेल से भी मुझे कहीं अधिक प्यारी और सुखकर लगी।

जिस कैम्प से हमें मुक्त किया जाना था; वह चीड़ के दरख्तों के बीच में लकड़ी की बैरकों का कांटेदार तार से घिरा एक बड़ा समूह था। बाहर के द्वार पर पूर्वी जर्मन पुलिस के चार सिपाही बैठे थे।

हमें अलग-अलग बैरकें दे दी गईं। बर्लिन के निवासियों ने मेजों, कुर्सियों और बेंचों से सजे एक वाचनालय में डेरा जमा लिया। लाल कपड़े से ढकी एक लम्बी मेज पर अखबार और पत्र-पत्रिकाएं पड़ी थीं। "ताग्लिशे रुण्डशाऊ" में, जो पूर्वी जर्मनी के रूसी सैनिक शासन का मुख पत्र है, "खामोश कैम्प कहीं नहीं" शीर्षक एक लेख था।

हमारे जत्थे में पांच सौ स्त्री-पुरुष थे, जिनमें से अधिकतर सन् १९४५ से रूस में थे। हममें से एक भी व्यक्ति न तो अपने किसी

सम्बन्धी को कोई पत्र लिख सका था और न कभी किसी को कोई पत्र पा सका था। फिर इन कैम्पों को, जहां इतने समय तक हमें विल्कुल खामोशी में रखा गया, आप और क्या कहेंगे ? क्या सचमुच ये "खामोश कैम्प" नहीं थे ?

लाउडस्पीकरों पर एक घोषणा की आवाज आने लगी जो हर बैरक में सुन पड़ती थी। समूचे जत्थे से खाने के कमरे में इकट्ठा होने को कहा गया था। हम यह देखने को उत्सुक थे कि वहां कौन हमारा स्वागत करता है।

स्वागत भाषण संक्षिप्त और सादा था और स्वयं कैम्प के कमांडेंट ने दिया था। चालीस वर्ष के लगभग आयु के इस मोटे-ताजे आदमी के चेहरे से ही टपकता था कि वह एस० ई० डी० का एक घुटा हुआ अफसर है।

"मित्रों !" उसने कहना शुरु किया।

उसने हमें 'कामरेड' नहीं कहा, क्योंकि वह भली भांति जानता था कि हम पांच सौ श्रोताओं में से एक भी कामरेड नहीं था। उसने 'मेरे देशवासियों' भी नहीं कहा। शायद उसने यह अनुभव कर लिया था कि अगले कुछ ही दिनों में इस जत्थे के अधिकतर लोग पश्चिमी क्षेत्र में भाग जायंगे। उसने 'सहकर्मियों' भी नहीं कहा, क्यों कि वह हमारे साथ काम नहीं करता था। उसने 'मित्रों' इसलिए कहना पसंद किया कि उसमें स्वागत और हार्दिकता दोनों का आयास मिलता था।

"मित्रों, जर्मन लोकतन्त्रीय गणराज्य (पूर्वी जर्मनी) की सरकार की ओर से मैं आपका अत्यन्त हार्दिक स्वागत करता हूं।"

सरकार के सदस्यों के बड़े-बड़े चित्र खाने के कमरे की दीवारों को सुशोभित कर रहे थे। वे अपने पुत्रों और पुत्रियों की ओर जो अब स्वदेश लौट आये हैं, अपलक निहार रहे थे। और ये पुत्र-पुत्रियां अपने इस नये "मित्र" कैम्प कमांडेंट की ओर देख रहे थे या विल्हैल्य पीक, ओटो ग्रोटेवोल (पूर्वी जर्मनी के राष्ट्रपति) एवं 'जर्मनी के लेनिन'

उलब्रिख्ट के विशाल आदमकद चित्रों की ओर भावहीन चेहरों से नजर डाल रहे थे। उन्होंने इस बनावटी स्वागत के पाखंडपूर्ण बड़े-बड़े शब्दों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। उनके मन में सिर्फ एक ही प्रश्न का उत्तर जानने की उत्सुकता थी कि वे इस कैम्प से कब रिहा किये जायेंगे ?

"आज ही", उनके मित्र कैम्प कमांडेंट ने उत्तर दिया। उनकी अपने घरों की ओर यात्रा आज के दिन ही प्रारम्भ हो जायगी। कैम्प में एक डाकखाना था; जहां से उनके परिवारों को उनके आगमन की सूचना देने के लिए तार दिये जा सकेंगे।

"एक घंटे में तुम लोगों को नये कपड़े बांटने का काम शुरु हो जायगा। तुम्हें बिल्कुल नई पोशाकें मिलेंगी—सूट, कमीज, ओवरकोट और जूते। किसी को भी कैम्प से अपने रूईदार कपड़ों में जाने की जरूरत नहीं है।"

"क्यों नहीं है ? हमें अपने रूईदार कपड़ों से कोई शिकायत नहीं है। ध्रुव प्रदेश की कितनी ही सर्द रातों में उन्होंने हमारे शरीर को गर्म रखा है। उन्हें पहने-पहने ही हमने नींद की है। हजारों बार उनकी आस्तीनों पर हमने अपनी नाक पोंछी है। हमें इन रूईदार कपड़ों से मुहब्बत है। वे हमारी वर्दी रहे हैं, राजनीतिक बन्दी की सम्माननीय वर्दी।

"तुम लोगों को पचास-पचास मार्क दिये जायंगे।"

हां, यह कुछ बात हुई। हम शराब के एक-दो जामों से अपनी आजादी की खुशी तो मना सकेंगे।

"बर्लिनवालों को सबसे पहले कपड़े मिलेंगे। और उसके बाद तुरन्त उन्हें रिहा कर दिया जायगा।"

दोपहर होने से पहले ही जत्थे का कायाकल्प हो गया। हमने अपना आवरण बदल डाला। खाने के कमरे के एक कोने में ओवरकोटों, सूटों, कमीजों, जूतों और टाइयों का—जो सबकी सब एक ही जैसे हरे

रंग की थी—ढेर लगा या शायद इसलिए कि एन० के० वी० डी० हमें उनसे फिर पहचान सकें ।

जिन्दगी अपने तमाम जंजालों के साथ फिर प्रारम्भ हो गई । मुझे सलेटी या बादामी रंग के सूटों में से किसी एक को चुनना था । मुझे अपने कालर का नाप बताना था, किन्तु मैं तो कब से अपना नाम ही भूल चुका था । मैंने एक ओवरकोट चुना जिसे कार्ल ने बहुत छोटा होने के कारण छोड़ दिया था । मैं कैसे जान सकता था कि आजकल कितने लम्बे ओवरकोट का फैशन है ?

स्त्रियों ने अपना कायाकल्प बड़ी बारीकी और पूर्णता के साथ किया । उन्होंने अपनी पोशाकें, कोट और नीचे पहनने के कपड़े सब छोड़ दिये और नयी पोशाकें बदलने के लिए बैरकों में चली गई । और उसके बाद वे फिर नजर नहीं आईं ।

"नई जिन्दगी की शुरुआत", कार्ल बोला, "एक नारी की शृङ्गार-साधना की समाप्ति की इन्तजार से हो रही है ।"

हम अपनी बैरक में बैठे इन्तजार कर रहे थे । बैरक को गर्म करने का कोई इन्तजाम नहीं किया गया था, इसलिए हम जाड़े से जमे जा रहे थे ।

कार्ल कहता गया ।

"हमारी मित्र महिलाओं को पिछले पाँच वर्षों से अच्छे कपड़े पहनने और शृङ्गार करने का मौका नहीं मिला । इसलिए आज वे अपने इस खोये हुए समय के कुछ भाग की तो भरपाई कर ही लेंगी । अभी शायद दो-तीन घंटे तक हम गाड़ी में नहीं बैठेंगे । तो चलो, क्यों न कुछ समय गला तर करके काटा जाय । मैं कोशिश करूंगा कि एकाध बोतल वोडका ही हाथ लग जाय ।"

करीब पन्द्रह मिनट बाद वह पूर्वी क्षेत्र की सन्तरे की शराब की एक बोतल लिये आ पहुँचा ।

"मैं सोचता हूँ, हम यहाँ से जल्दी से जल्दी निकल जायेंगे", वह बोला, "मैं अभी-अभी गाड़ी का पता लगाने के लिए दफ्तर में गया था। एक अफसर टैलीफोन कर रहा था, और उसने अपने सैक्रेटरी से कहा कि रूसियों के लिए छः बजे तक सूचि तैयार हो जानी चाहिए।"

हमने बेर्डेर-आन-डेर-हार्वेल में बनी शराब पी। आहिस्ता-आहिस्ता हममें गर्मी आने लगी और एक ऐसा सरूर महसूस होने लगा, जिसके दिन भर कायम रहने की आशा थी।

"हमें अपनी शराब स्त्रियों से छिपानी नहीं चाहिए", कार्ल ने कहा, "हमें आधी उन्हें भी देनी चाहिए।"

मैंने विरोध किया, "अगर वे अभी तक कपड़े बदलने में लगी हैं तो उन्हें शराब देने की जरूरत नहीं है।"

किन्तु कार्ल किसी तरह नहीं माना। दो मिनट बाद ही वह लौट आया।

"मैंने स्त्रियों के प्राइवेट कमरे में झांककर देखा है। वे अभी अपनी नई पोशाक को शरीर पर आजमाकर देखने की तैयारी कर रही हैं। इसलिए मेरा ख्याल नहीं कि हम शाम से पहले यहां से रवाना हो सकें।"

पन्द्रह मिनट बाद स्वयं रानी नीली सूती पोशाक में हाजिर हो गई। कैम्प में सिर पर गूंथी जानेवाली लम्बी चोटियों की जगह लपेटे हुए जूड़े ने ले ली थी। पांवों में लपेटने के कपड़ों की जगह नफीस जनाने मोजे पड़ गये थे।

रानी ने नारी के रूप में अपनी भूमिकापूर्ण आत्मविश्वास के साथ प्रारम्भ कर दी। आते ही उसने मेजबान का काम संभाल लिया।

"मैं तुम सबके लिए सैंडविच तैयार करती हूँ। खाना होने से पूर्व हम लोग कुछ खा लेंगे।"

आधे घंटे बाद हम एक मेज के चारों ओर बैठ गयें, जो पूर्वी क्षेत्र के कृत्रिम फैशन के अनुसार, जिसे देखकर दुःख होता था, सजी हुई थी

ग्रौर फिर से यूरोपीय तौर-तरीके ग्रौर रीति-रिवाज ग्रपनाने लगे। रानी ने प्यालों में चाय ढाली ग्रौर स्कूल की ग्रध्यापिका की भांति हमारा उत्साह बढ़ाती हुई बोली।

"ग्राग्रो, साथियों! मेहरबानी कर ग्रपनी कुहनियां मेज पर टिकाने या मुंह खोलकर खाने ग्रथवा ग्रावाज के साथ चाय की चुस्की लेने की कोशिश मत करना। ग्राज तो तौर-तरीकों की त्रुटियां माफ कर दी जायंगी। किन्तु कल से यदि किसी की रोटी का टुकड़ा काटते समय उछलकर परे जा गिरा या किसी ने ग्रालुग्रों को चाकू से चीरा तो उसके नम्बर काट लिये जायेंगे।"

उसके बाद हम ग्रपनी रिहाई के कागजात जेब में डालकर ग्रौर ग्रपने सामान के थैले कन्धे पर लटकाकर स्टेशन की ग्रोर चल पड़े। गाड़ी चलने में ग्रब भी ग्राधे घंटे की देरी थी। हम एक सरकारी रेस्टोरेंट में गये ग्रौर कुछ शराब पी। पहला जाम उस बिजली की रेलगाड़ी की शुभकामना के लिए पिया जो हमें पश्चिमी जर्मनी में ले जानेवाली थी। दूसरा जाम वोर्कुटा से फुर्स्टेनवाल्डे तक हमें लाने वाले इंजन के लिए, तीसरा इंजन के ड्राइवर के लिए, चौथा इंजन के कोयला झोंकनेवाले खलासी के लिए ग्रौर पांचवां गाड़ी को चलने का संकेत देनेवाले सिगनल के लिए पिया गया। छठे जाम के बाद हमें चल देना था।

जैसा कि उचित था, हम "सामान सहित मुसाफिरों" के डिब्बे में चढ़ गये। ग्रपने थैलों के ऊपर बैठकर हममें फिर शराब का दौर चलने लगा। हम राजनीति के बारे में हंसी में बातें करने लगे, ऐसे निर्दोष ढंग से कि उसे वही ग्रादमी समझ सकता था जो स्वयं कैम्प में रहा हो।

ऐकंनर पहुंचकर हम भाफ की गाड़ी से उतर गये ग्रौर बिजली की गाड़ी में सवार हो गये। डिब्बों पर "ऐकंनर—पोट्सडाम" लिखा था। इस लाइन का ग्रन्तिम स्टेशन रूसी क्षेत्र में था। रास्ते में

पश्चिमी बर्लिन पड़ता था जो रूसी क्षेत्र के बीच में "आजादी का नखलिस्तान था। वहीं हमें उतरना था।

गाड़ी बर्लिन के सोवियन भाग में से गुजरी। एक के बाद एक स्टेशन आते और गुजरते जा रहे थे। बर्लिन-लिख्टेनवर्ग ! यही तो वह स्टेशन है; जहाँ प्रायः हम सभी ने एक दिन सोवियत रूस ले जानेवाली गाड़ी की प्रतीक्षा की थी। स्टालिन-आले, आलेग्जान्दरप्लात्ज, फ्रीड-रिखस्ट्रास्सें।

इसके बाद हम आहिस्ता-आहिस्ता इनवालिडेनस्ट्रास्से के खाली घाटों के बीच से गुजरे। नदी की धारी ही वह तटस्थ प्रदेश है जिसमें से बर्लिन के विभिन्न क्षेत्रों को बाँटनेंवाली सीमा रेखा गुजरती है। इसके बाद एक खाली स्टेशन आया और फिर ब्रिटिश क्षेत्र। चलो, जान बची। हम सबने खुशी से एक दूसरे का हाथ दबाया। मैंने लपक-कर रानी को चूम लिया। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया और चुपचाप उसे दबाया। खुशी के मारे उसके मुँह से बोल नहीं निकल रहा था।

चिड़ियाघर का स्टेशन। हमने अपना सामान उठाया और गाड़ो से उतर गये। हमें कुछ सूझ नहीं रहा था कि अब क्या करें। हम अपने घिनौने थैले लिये, जो चार हजार मील का सफ़र तय कर हमारे साथ आये थे, स्टेशन की उमड़ती भीड़ के शोरोगुल के बीच हतबुद्धि और ठगे-से खड़े थे। दिमाग काम नहीं कर रहा था। गाड़ी काफी देर पहले ही चली जा चुकी थी। अगली गाड़ी के लिए भी यात्री जमा होने लग गये थे। अन्त में कुछ झिझकते हुए हिम्मत बांधकर हम स्टेशन से बाहर हो गये।

हमें टैलीफोन करना था, इसलिए पश्चिमी मार्को (पश्चिमी जर्मनी का सिक्का) की आवश्यकता थी। मैंने हम सब साथियों की जर्मन मुद्रा इकट्ठी की और उसे बेच दिया। दर थी पांच पूर्वी मार्को का एक पश्चिमी मार्क। हमने अपना सामान स्टेशन पर ही सामान जमा

करानेवाले दफ्तर में छोड़ दिया। इसके बाद हम डाकखाना तलाश करने लगे ताकि अपने मित्रों से सम्पर्क कायम कर सकें। हममें से किसी का भी कोई सम्बन्धी बर्लिन में नहीं था, किन्तु हम जानते थे कि हमारे मित्र अवश्य हमारी देखभाल करेंगे।

जब मैं टैलीफोन की कोठरी से बाहर आया तो मैंने देखा, रानी और लिली एक बेंच पर बैठी हैं। दोनों रो रही थीं। दोनों ने छोटे बच्चों की भाँति, जो अभी-अभी किसी भयंकर संकट से बचे हों और संकट निकल जाने पर एकाएक जिनको रुलाई फूट पड़ी हो, एक-दूसरे का हाथ थामा हुआ था। उनके पास ही एक बूढ़ा बर्लिन निवासी बैठा था; वह भी रो रहा था।

बूढ़े ने उनसे रोने का कारण पूछा था। शायद दोनों लड़कियाँ निष्ठुर प्रेम का शिकार हैं ? किन्तु नहीं; सिसकते हुए उन्होंने उसे बताया कि वे अभी-अभी वोर्कुटा से आई हैं, सोवियत रूस से, सुदूर ध्रुव क्षत्र से।

''तुम आज ही आई हो ?''

''हां, अभी पन्द्रह मिनट पहले।'

तब वह भी रोने लगा।

मैंने एक बिना इस्तेमाल किया फलालैन का कपड़ा निकाला जो रूसियों ने पांवों पर लपेटने के लिए दिया था और उससे उन तीनों के आंसू पोंछे। उसके बाद हम रेलवे स्टेशन से बाहर आ गये और बाँह में बांह दिये रोशनी से जगमगाते कुरफुरस्टेनडाम से होकर गेडाख्ट-निसकिर्खे के खंडहरों के पास से चलने लगे।

———